अलमदार
-ए-
कर्बला

लेखक
शकील हसन शमसी

नाम पुस्तक	अलमदार-ए-कर्बला
लेखक	शकील हसन शमसी
पता	जौहरी मोहल्ला लखनऊ 226003 405, टैगोर हॉस्टल मिन्टो रोड नई दिल्ली-110002
क़ीमत	रु 30/= (विदेश से $1)
प्रकाशन वर्ष	अगस्त 2005
संस्करण	प्रथम
टाइपिंग	इमरान शमसी
टाइटिल डिज़ाइन	एडवरटाइज़र्स इण्डिया लखनऊ
छपाई	निजामी प्रेस लखनऊ
प्रकाशक	नूर-ए-हिदायत फ़ाउंडेशन इमाम बाड़ा गुफ़रानमाआब, चौक लखनऊ-226003 फोन - 2252230 मो० 9335276180/9415752805
मिलने का पता	नज़्ज़ारा बुक डिपो, जौहरी मोहल्ला चौक लखनऊ हैदरी कुतुबख़ाना, इमाम बाड़ा स्ट्रीट डोन्गरी मुम्बई-400009 अब्बास बुक एजेंसी दरगाह हज़रत अब्बास रुस्तम नगर लखनऊ 226003 बुक स्टाल दरगाहे शाहे मर्दां, कर्बला कॉलोनी ज़ोर बाग़ नई दिल्ली

बिसमिल्लाहिर रहमानिर रहीम

अलहमदो लिल्लाहे रब्बिल आलमीन वस्सलातो वस्सलामो अला मुहम्मदिवं व आले मुहम्मद, अम्मा बअद!

क़ाइदे मिल्लते जाफ़रिया हुज्जतुल इस्लाम वलमुस्लेमीन मौलाना सय्यिद कल्बे जवाद नक़वी साहिब क़िबला (इमामे जुम्आ लखनऊ) के ज़ेरे सरपस्ती नूरे हिदायत फाउन्डेशन अपने बुक डिपो (मकतब–ए–नूरे हिदायत) से जनाब शकील हसन शमसी साहब की यह किताब "अलमदार–ए–कर्बला" प्रकाशित कर रहा है और इन्शाअल्लाह जल्द ही चन्द किताबें और भी छपकर मन्ज़रे आम पर आ जाएँगी मगर क़ारिईने इज़ाम से इतनी सी गुज़ारिश भी है वह यह कि इदारे को माली मदद देना न भूलें साथ ही मुअीनुश्शरीअह मौलाना सै0 कल्बे जवाद साहिब की सेहत व आफियत और मौसूफ़ की इल्मी व अमली तहरीकों की कामियाबी के लिए ज़रूर दुआ फरमाएँ।

किताब में क्या है सब कुछ किताब के नाम से ही ज़ाहिर है। सिर्फ ज़ौक़े मुतालआ में उजलत व शिद्दत पैदा करने के लिए शहंशाहे तन्ज़ो मिज़ाह शौक़ बहराइची मरहूम के तीन शेअर पेश हैं :–

अब्बास के मरातिब आबिद से कोई पूछे
मासूम तो नहीं हैं मासूम के चचा हैं
बात यह इन के तफाख़ुर के लिए क्या कम है
भाई मासूम ख़ुदा रखे भतीजा मासूम
भाई एक बार मुझे कहके पुकारो अब्बास
ग़ैरे मासूम से रखे ये तमन्ना मासूम

ख़ुदा करे कि लोग किताब "अलमदार–ए–कर्बला" को पढ़कर उसूल नवाज़ी, फ़राएज़ शनासी और रिश्तों के तक़द्दुस का अपनी ज़िन्दगी में भरपूर लिहाज़ रखकर मरकज़े मेहरो वफा हज़रत अबुलफ़ज़लिल अब्बास को बेहतरीन ख़िराजे अक़ीदत पेश फरमाएँ।(आमीन)

नूरे हिदायत फाउन्डेशन
इमामबाड़ा गुफ़रान मआब,
मौलाना कल्बे हुसैन रोड,
चौक, लखनऊ–3 यू0पी0 हिन्दुस्तान

समर्पण

यह किताब नज़्र करता हूँ
हज़रत अब्बास की चहीती बहन
हज़रत ज़ैनब की बारगाह में
जिन्होंने हम को सिखाया
कि अगर हाथ भी बँधे हों तब भी
मज़लूमियत की तबलीग़ (प्रचार-प्रसार)
का सिलसिला रुकना नहीं चाहिए।

क्रम	विषय	पृष्ठ	क्रम	विषय	पृष्ठ
1	संक्षिप्त परिचय	5	32	वीरता एक नमूना	74
2	भूमिका	7	33	दोपहर की नमाज़	74
3	इस्लाम का परिचय	9	34	हज़रत अली अकबर	76
4	हज़रत अब्बास के पूर्वज	15	35	औलादे अक़ील का हमला	78
5	अली का अरमान	21	36	हज़रत औन ओ मोहम्मद	79
6	पहली जंग	30	37	औलादे अली की क़ुर्बानी	80
7	कर्बला की भूमिका	35	38	हज़रत अब्बास के बेटे	82
8	मदीने से रुख़सत	37	39	युद्ध स्थल में अब्बास	85
9	काअबे से कर्बला तक	39	40	बेमिसाल जंग	88
10	दुश्मन की प्यास बुझाना	40	41	आख़िरी मुलाक़ात	93
11	कर्बला में पढ़ाव	42	42	फ़ुरात पर क़ब्ज़ा	95
12	क़ब्रों के लिए ज़मीन	43	43	शहादत	102
13	सक़्क़ा-ए-अहले हरम	43	44	सक़्क़ा-ए-सकीना	106
14	ख़ेमों में आख़िरी बार पानी	44	45	हज़रत अली असग़र	107
15	भाई की ग़ुलामी	45	46	इमाम हुसैन का जिहाद	108
16	सब्र व सहनशीलता	46	47	हज़रत सुग़रा का ख़त	109
17	पहला हमला	50	48	इमाम हुसैन की क़ुर्बानी	110
18	शबे आशूर	51	49	अब्दुल्लाह बिन हसन	111
19	प्यासे बच्चों की हालत	53	50	हज़रत सकीना	113
20	पानी लाने की एक कोशिश	54	51	परिवारजनों की गिरफ़्तारी	115
21	आशूर की सुबह	58	52	घोड़े की वफ़ादारी	115
22	हुर का आगमन	59	53	रिहाई, मदीना वापसी	117
23	अलम व अलमदारी	62	54	क़ातिलों का अंजाम	120
24	युद्ध व मानवाधिकार	64	55	बाब-उल-हवायज	122
25	युद्ध के तौर तरीक़े	65	56	हज़रत अब्बास की नज़्र	123
26	रजज़ (शौर्य गाथा)	66	57	मज़लूमियत का प्रतीक	124
27	अस्त्र- शस्त्र एवं वस्त्र	66	58	अंतिम शब्द	125
28	हुसैनी सेना की रणनीति	67			
29	अब्बास ताजदारे वफ़ा	69			
30	निर्णायक युद्ध	71			
31	जंग-ए-मग़लूबा	73			

हज़रत अब्बास (अ)

संक्षिप्त परिचय

नामः-	हज़रत अब्बास
नाम का अर्थः-	शेर (सिंह)
पिता का नामः-	हज़रत अली इब्ने अबी तालिब
माँ का नामः-	हज़रत फ़ातिमा कलाबिया
माँ का उपनामः-	हज़रत उम उल बनीन
दादा का नामः-	हज़रत अबू तलिब बिन अब्दुल मुत्तलिब
नाना का नामः-	हुज़ाम बिन ख़ालिद
नानी का नामः-	लैला बिन्ते शहीद
पत्नी का नामः-	हज़रत लुबाबा
चचाओं के नामः-	हज़रत तालिब, हज़रत जाफ़र व हज़रत अक़ील
भाइयों के नामः-	इमाम हसन, इमाम हुसैन, हज़रत अब्दुल्लाह, हज़रत जाफ़र, हज़रत उस्मान, हज़रत मोहम्मदे हन्फ़िया, हज़रत उमर इब्ने अली, हज़रत अब्बास-उल असग़र, हज़रत मोहम्मदे असग़र, हज़रत अबु अब्दुल्लाह और हज़रत यहिया
बेटों के नामः-	हज़रत फ़ज़ल, हज़रत क़ासिम और हज़रत उबैद उल्लाह

जन्म तिथिः-	4 शाबान सन 26 हिजरी
जन्म दिनः-	मंगल
जन्म स्थानः-	महल्ला-ए-बनी हाशिम, मदीना
उपनामः-	अबुल फ़ज़ल, अबुल क़ासिम और अबू क़र्बा
उपाधियांः-	सक़्क़ाए सकीना, सक़्क़ाए अहले बैत, फ़ातेहे फ़ुरात, शहंशाहे वफ़ा, अलमदारे कर्बला, अफ़ज़ल-उल-शोहदा, क़मर-ए-बनी हाशिम और बाब-उल-हवायज
शहादत तिथिः-	10 मोहरर्म सन 61 हिजरी तदानुसार 10 अक्टूबर सन 680 ई०
शहादत का दिनः-	शुक्रवार
उम्रः-	34 साल कुछ माह
शहादत स्थलः-	ईराक़ के कर्बला नामक मरुस्थल में नहरे फ़ुरात के किनारे
शहादत का मक़सदः-	इस्लाम की सुरक्षा, इमाम की मदद, प्यासे बच्चों के लिए पानी लाना,दीन का अलम बुलंद रखना और इस बात की गवाही देना कि इस्लाम ज़ालिमों का मज़हब नहीं बल्कि मज़लूमों का दीन है।

शुरू करता हूँ अल्ला के नाम से जो रहमान और रहीम है।

भूमिका

यह किताब उस महान व्यक्ति के जीवन पर आधारित है जिसने अपने पवित्र ख़ून से क़ुर्बानी और मज़लूमियत की ऐसी दास्तान लिखी जो कभी भुलाई नहीं जा सकती। इंसानियत के इस मसीहा को हज़रत अबुल फ़ज़लिल अब्बास के नाम से याद किया जाता है। हिजरी कैलेंडर के हिसाब से उनके जन्म को इसी वर्ष चौदह सौ साल पूरे हुए हैं। इस मुबारक साल में उनकी याद में जगह जगह जलसे, महफ़िलें और मीलाद आयोजित हो रहे हैं। इस लिए मैं भी चाहता हूँ कि हज़रत अब्बास के जीवन और आदर्शों पर एक छोटी सी किताब लिख कर उनकी सीरत (चरित्र) तालीमात (शिक्षाओं) और क़ुर्बानी (बलिदान) का छोटा सा ख़ाका पेश (चित्रण) कर सकूँ। अल्लाह से दुआ है कि वह मेरी इस कोशिश को क़ुबूल फ़रमाए (अमीन) और यह किताब मेरे गुनाहों को माफ़ किए जाने का कारण बने।

हज़रत अब्बास जैसे अज़ीम इंसान के जीवन की सारी घटनाओं को किसी एक किताब में जमा कर सकना किसी भी लेखक के लिए संभव नहीं है। इसी लिए यहाँ पर यह कहना अनुचित नहीं होगा कि इस किताब में मैंने सागर के कुछ क़तरे समेटने की कोशिश की है। गागर में सागर समा देने वाली बात मात्र एक कहावत ही है और दुनिया का कोई भी व्यक्ति गागर में सागर को समेटने में कामयाब नहीं हो सकता तो फिर भला मैं क्या और मेरी हैसियत क्या? मैं तो बहुत ही छोटा सा क़लमकार हूँ। इतिहास के पन्नों को खँगालना मेरे बस की बात नहीं। अपने अज़ीम उलेमा की लिखी किताबें ही मेरे इल्म की सीमा हैं और जो कुछ उलेमा से मजलिसों में सुना वही मेरी मालुमात का ख़ज़ाना है। इस किताब को प्रकाशित करने का ख़ास कारण यह है कि पिछले दिनों मेरे एक दोस्त ने मुझ से कहा कि उन्हें अपने अख़बार के (मोहरर्म विशेषांक के) लिए हज़रत अब्बास के जीवन पर एक मज़मून (निबंध) चाहिए है। जब मैं लिखने बैठा तो अनेक किताबों को खँगालना पड़ा

और इन किताबों को पढ़ते वक़्त कुछ ऐसे तथ्य सामने आए कि मैं तो हैरान ही रह गया और सोचने लगा कि मौला अब्बास की कुर्बानी से जुड़े इतने अहम क़िस्से सिर्फ़ उर्दू और फ़ारसी की किताबों तक ही सीमित क्यों रह गए? बहुत सी ऐसी बातें भी सामने आईं जो मजलिसों में भी सुनने में नहीं आतीं। मैंने उसी वक़्त फ़ैसला किया कि अगर अल्लाह ने मुझे तौफ़ीक़ दी तो हज़रत अब्बास की याद में हिंदी में एक किताब ज़रूर लिखूँगा और इस में वह सारे क़िस्से शामिल होंगे जो आम तौर पर मजलिसों में नहीं पढ़े जाते। मेरी कोशिश यही है कि इस किताब के ज़रिये हज़रत अब्बास के पवित्र जीवन के ऐसे अध्यायों पर कुछ रौशनी डाल सकूँ जिनसे हमारी नई नस्ल वाक़िफ़ नहीं है।

यह किताब उन लोगों के हाथों में भी पहुँचेगी जो इस्लाम के इतिहास, आदर्शों और उसके मक़सद (उद्देश्य) से परिचित नहीं है। इस लिए मैं ने सोचा कि किताब की शुरुआत में इस्लाम के बारे में बहुत ही संक्षेप में जानकारी दे दी जाए ताकि इस्लाम के परिचय के साथ-2 लोगों तक हज़रत अब्बास के पवित्र जीवन के कुछ अंश पहुँच जाएँ और सभी लोग इन आदर्शों से रौशनी ले कर अपने जीवन के अँधेरे को दूर कर सकें।

इस किताब को पढ़ने वालों से विनम्र निवेदन है कि यदि पुस्तक पढ़ने के बाद उनके मन में कुछ सवाल उठें तो कृपया हमें पत्र लिखें इन्शा-अल्लाह हम उनको संतुष्ट करने की पूरी कोशिश करेंगे। जो मोमनीन यह किताब पढ़ रहे हैं (अगर उनका दिल खुश हुआ है तो) उनसे गुज़ारिश है कि वह एक बार सूरहः फ़ातिहा और तीन बार सूरहः तौहीद पढ़ कर मेरे वालिदे मरहूम जनाब शमसुल हसन शमसी की रूह को बख़्श दें। आख़िर में ख़ुदा का लाख लाख शुक्र अदा करता हूँ कि उसने मुझे ऐसा क़लम दिया जिसमें रौशनाई की जगह शहीदाने कर्बला की याद में बहने वाले आँसू हैं। वस्सलाम

शकील हसन शमसी

shakeel_h_shamsi@hotmail.com

इस्लाम का परिचय

इस्लाम अरबी भाषा के सिल्म शब्द से बना है स्लिम का मतलब होता है शांति, इस का दूसरा अर्थ है अल्लाह की शरण तथा तीसरा अर्थ है आज्ञा का अनुपालन करना। सिल्म शब्द से ही इस्लाम बना यानी शांति तथा अल्लाह की शरण प्रदान करने वाला धर्म। सिल्म शब्द से जुड़े होने की वजह से ही इस्लाम के मानने वालों को मुस्लिम या मुसलमान कहा जाता है। मुसलमान शब्द सब से पहले हज़रत इब्राहीम के मानने वालों के लिए प्रयोग हुआ था।

इस्लाम कोई नया धर्म नहीं था बल्कि पवित्र क़ुरआन के अनुसार इस्लाम धर्म ही हर युग में धरती पर उतारा गया और अल्लाह की तरफ़ से मानव जाति को सत्य मार्ग दिखाने के लिए विश्व के विभिन्न कोनों में लगभग एक लाख चौबीस हज़ार पैग़म्बर (संदेशवाहक) भेजे गए। परन्तु समय के साथ इन संदेशवाहकों द्वारा दिए गए संदेश में या तो हेरा फेरी की गई या फिर ईश्वरीय संदेश को पूरी तरह बदल दिया गया ताकि अपने निहित स्वार्थों को पूरा किया जा सके।

मुसलमानों का विश्वास है कि पैग़म्बर हज़रत मोहम्मद साहब (स) अल्लाह का (ईश्वरीय) संदेश लाने वाले आख़िरी संदेशवाहक थे और जिन्हें मक्के के पवित्र नगर में उतारा गया। उनको जिस संदेश के साथ अल्लाह ने धरती पर उतारा उसको पवित्र क़ुरआन कहा जाता है। इस संदेश को फैलाने में हज़रत मोहम्मद को बहुत अधिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। उनके अनेक साथियों को जान से मारा गया, यातनाएँ दी गई और खुद उनको भी मारने का साज़िश रची गई जिसके बाद वह मक्का के पवित्र नगर से हिजरत करके अर्थात उसको छोड़ कर यसरिब नामक शहर चले गए। पैग़म्बर साहब के वहाँ शरण लेने के बाद यसरिब को मदीनतुररसूल (रसूल का नगर) और मदीन-ए-मुनव्वरा (प्रकाशा से भरा शहर) कहा जाने लगा।

मदीने में भी उन्हें चैन से नहीं रहने दिया गया उन पर अनगिनत लड़ाइयाँ थोपी गई लेकिन इस्लाम का प्रभाव घटने के विपरीत बढ़ता ही

गया और केवल बीस वर्ष के अंदर पैग़म्बर साहब का फैलाया हुआ दीन विश्व का सबसे अधिक लोकप्रिय धर्म बन गया। इस लोकप्रियता का कारण था मोहम्मद साहब का पवित्र चरित्र, विनम्रता, शालीनता, सहनशीलता, क्षमादान और इंसानों के प्रति उनका स्नेह। जब पैग़म्बर साहब की आँख बंद हुई तो इस्लाम एक मुकम्मल (संपूर्ण) दीन बन चुका था। अपने निधन से लगभग दो महीने पहले अंतिम हज यात्रा से लौटते समय उन्होंने ग़दीर-ए-खुम नामक स्थान पर धर्म के संपूर्ण होने का एलान किया और अपने सेनापति, व दामाद हज़रत अली को अपना उत्तराधिकारी घोषित करते हुए कहा कि '' जिस जिस का मैं मौला हूँ उस के यह अली भी मौला हैं।'' इस घोषणा के बावजूद पैग़म्बर हज़रत मोहम्मद के निधन के पश्चात उनके उत्तराधिकार को लेकर मुसलमानों में मतभेद हो गया क्योंकि लोगों ने मौला शब्द के कई अर्थ खोज लिए।

उत्तराधिकार पर विवाद

पैग़म्बर साहब की आँख बंद होते ही उनके कुछ मित्रों ने मदीना के निकट 'सक़ीफ़ा-ए-बनी साएदा' नाम के एक स्थान पर उनका उत्तराधिकारी चुन्ने के लिए एक सभा आयोजित की और अपनी पसंद के आदमी को ख़लीफ़ा नियुक्त करना चाहा। इस बात की सूचना जब हज़रत मोहम्मद के अन्य साथियों को मिली तो वह मोहम्मद साहब के दफ़न कफ़न में शामिल हुए बिना ही सभा स्थल की तरफ़ प्रस्थान कर गए। (मोहम्मद साहब को केवल उनके परिवार जनों की उपस्थिति में दफ़न कर दिया गया।) इन लोगों के सक़िफ़ा पहुँचने के बाद वहाँ स्थिति काफ़ी बिगड़ गई और भगदड़ मच गई जिसमें कुचल जाने के कारण कई लोग घायल भी हुए।

सभा स्थल पर पहुँचने वाले इन लोगों ने वहाँ पहले से उपस्थित लोगों की योजना को नाकाम करते हुए पैग़म्बर साहब के एक वरिष्ठ सहयोगी हज़रत अबू बक्र को ख़लीफ़ा चुन लिया। इस चुनाव में पैग़म्बर साहब के परिवार का कोई सदस्य शामिल नहीं था, इस लिए विवाद तो उठना ही था। कई लोग पैग़म्बर साहब के दामाद हज़रत अली को पैग़म्बर साहब की अंतिम इच्छा के अनुसार ख़लीफ़ा बनाए जाने के हक़ में थे। इस

दल ने हज़रत अबू बक्र को अपना नेता मानने से इन्कार कर दिया क्योंकि इस दल की नज़र में हज़रत अली पैग़म्बर साहब के बाद सब से बड़े विद्वान और धर्म गुरु थे। यहाँ तक कि मक्के एक शक्तिशाली सैनिक कमांडर अबू सुफ़ियान ने हज़रत अली से कहा कि यदि हज़रत अली ख़लीफ़ा के पद के लिए दावेदारी पेश करें तो वह मक्के मदीने की गलियों को (हज़रत अली का समर्थन करने वाले) सैनिकों से भर देगा। हज़रत अली ने इस पेशकश को ठुकरा दिया क्योंकि उन्हें ख़ूनख़राबे की राजनीति से नफ़रत थी तथा वह अपने हित की ख़ातिर इस्लाम को तबाह होते नहीं देख सकते थे। लगभग दो साल तक शासन करने के बाद हज़रत अबू बक्र का देहांत हो गया। हज़रत अबू बकर ने अपने निधन से पूर्व अपने एक घनिष्ठ मित्र हज़रत उमर को अपना उत्तराधिकारी मनोनीत कर दिया। इस तरह ख़लीफ़ा चुनने की एक नई प्रक्रिया ने जन्म लिया। कई वर्षों तक राज्य करने के बाद हज़रत उमर एक प्राण घातक हमले में घायल हो गए। उन्होंने एक अन्य प्रक्रिया की शुरुआत की और अपना उत्तराधिकारी चुनने के लिए छै लोगों की एक कमेटी बना दी जिसमें एक सदस्य को वीटो पावर प्राप्त था। इस कमेटी ने हज़रत अली और हज़रत उस्मान के नामों पर विचार किया और फ़ैसला वीटो के आधार पर हज़रत उस्मान के पक्ष में गया। हज़रत उस्मान के शासन काल में पक्षपात की बढ़ती हुई घटनाओं के कारण सारे राज्य में असंतोष फैल गया और देश में बग़ावत हो गई। अंततः असंतुष्ट मुसलमानों के एक दल द्वारा हज़रत उस्मान की हत्या कर दी गई। जिसके बाद मदीने में अफ़रा तफ़री फैल गई। संकट की इस घड़ी में हज़ारों लोगों ने हज़रत अली के घर का घेराव कर उनसे आग्रह किया कि वह सत्ता सँभालें। जनता के निवेदन को स्वीकार करते हुए हज़रत अली ने राज काज सँभाल लिया लेकिन उनके विरुद्ध कुछ ख़ास लोगों ने विद्रोह कर दिया।

हज़रत उस्मान के क़बीले (बनी उम्मैया) के मशहूर सैनिक कमांडर अमीर मुआविया ने इस विद्रोह में ख़ास भूमिका निभाई और लोगों को तरह तरह से भड़काया। अमीर मुआविया के पास सीरिया के गवर्नर पद

भी था जिसका फ़ायदा उस ने ख़ूब उठाया।

हज़रत आयशा (जो प्रथम ख़लीफ़ा हज़रत अबू बकर की पुत्री और पैग़म्बर साहब की सब से छोटी पत्नी भी थीं) इसी भड़कावे में आ कर हज़रत अली के विरुद्ध सेना लेकर खड़ी हो गई। उनका कहना था कि हज़रत अली उन लोगों को सज़ा नहीं दे रहे हैं जिन्होंने हज़रत उस्मान की हत्या की। जबकि हज़रत अली का कहना था कि जिन लोगों ने हज़रत उस्मान की हत्या की वही लोग स्वयं हज़रत आयशा की सेना में शामिल हैं। हज़रत आयशा को (जंग-ए-जमल के नाम से प्रसिद्ध) इस युद्ध में पराजय का मुँह देखना पड़ा।

हज़रत आयशा के हार जाने के बाद ख़ुद अमीर मुआविया ने हज़रत अली के विरुद्ध सेनाएँ खड़ी कर दीं और सीरिया को इस्लामी गणराज्य से अलग किए जाने की घोषणा कर के बग़ावत का झंडा बुलंद कर दिया। कई महीनों तक चली इस लड़ाई का कोई नतीजा नहीं निकला। सुलह की बातचीत चली मगर हर बार मुआविया की ओर से एक नई चाल चली गई और शांति वार्ता के दौरान अनेक विवाद खड़े हो गए। इस की असल वजह यह थी कि अमीर मुआविया के दिल में (ख़िलाफ़त को ख़त्म करके) बनी उम्मैया की राज शाही स्थापित करने का अरमान शुरू से ही था।

जंग-ए-सिफ़्फ़ीन के नाम से मशहूर इस युद्ध के बाद इस्लामी राज्य दो भागों में बट गया। सीरिया में मुआविया की राज शाही स्थापित हो गई और ईराक़, मिश्र व अरब में हज़रत अली का इस्लामी शासन रहा।

सन 40 हिजरी में रमज़ान माह की 19 तारीख़ को रोज़े की हालत में हज़रत अली को एक गहरी साज़िश के तहत उस समय हमला कर के घायल कर दिया गया जब वह कूफ़े की मस्जिद में सुबह की नमाज़ की इमामत कर रहे थे। इस हमले के तीसरे दिन हज़रत अली की शहादत हो गई। हज़रत अली के बाद उनके बड़े पुत्र इमाम हसन को सत्ता मिली लेकिन केवल **6** महीने में ही अमीर मुआविया ने उन से सत्ता छीन ली और इस्लामी गणराज्य को राज शाही में बदल दिया। शासन हाथ से जाने के बावजूद हज़रत हसन को इतनी सफलता अवश्य मिली

कि उन्होंने अमीर मुआविया से एक संधि प्रपत्र लिखवा लिया जिस में इस बात का आश्वासन था कि मुआविया की ओर से धर्म के मामलों में हस्तक्षेप नहीं होगा और अमीर मुआविया को अपना उत्तराधिकारी बनाने का कोई अधिकार नहीं होगा बल्कि मुआविया के निधन के बाद सत्ता की बागडोर हज़रत मोहम्मद के परिवार जनों को सौंप दी जाएगी। इस संधि के बाद अमीर मुआविया को बादशाह की पदवी ग्रहण करने में कोई दिक़्क़त पेश नहीं आई और उन्होंने ख़िलाफ़त-ए-राशिदा कहे जाने वाले सिलसिले को अपने परिवार के शासन में परिवर्तित कर के मुसलमानों में बादशाही की कुप्रथा शुरू की।

सन 50 हिजरी में इमाम हसन ज़हर द्वारा शहीद कर दिए गए। उनके बाद इमाम हसन के छोटे भाई हज़रत इमाम हुसैन को इमाम का पद प्राप्त हुआ। इमाम हुसैन भी हज़रत हसन और अमीर मुआविया के बीच हुई संधि का पाबंद रहे और किसी प्रकार का विवाद अपनी ओर से उठने नहीं दिया। लेकिन अपनी मृत्यु से पहले अमीर मुआविया ने इस संधि का खुल्लम खुल्ला उल्लंघन करते हुए अपने कपूत यज़ीद को अपना उत्तराधिकारी बना दिया। पैग़म्बर साहब के परिवार जनों की ओर से यज़ीद को मान्यता देने से इन्कार किया गया। इन्कार करने वालों का नेतृत्व (हज़रत अली के छोटे बेटे) हज़रत इमाम हुसैन ने किया लेकिन मुआविया की ओर से हज़रत हुसैन को इस बात पर बाध्य नहीं किया जा सका कि यज़ीद जैसे शराबी, अय्याश और गुनाह गार को वह मुसलमानों का शासक मान लें।

यज़ीद पद ग्रहणः- मुसलमानों के विरोध के बावजूद (सन 60 हिजरी के रजब माह में) अमीर मुआविया की मौत के बाद यज़ीद ने मुस्लिम गणराज्य के शक्तिशाली बादशाह का पद ग्रहण किया। इस के बाद उसने ख़ुद को इस्लामी गणराज्य का छठा ख़लीफ़ा मानने के लिए मुस्लिम जगत के मशहूर लोगों के पास संदेश भेजा इस प्रथा को बैयत प्राप्त करना कहते थे। बड़े बड़े घरानों, सैनिक कमांडरों, क़बीले के प्रमुखों और विशिष्ट व्यक्तियों से मान्यता (बैयत) प्राप्त किए बिना किसी शासक के राज को वैधता नहीं मिलती थी।

अनेक लोगों ने यज़ीद को मान्यता देने से इन्कार कर दिया। इनमें सब से अहम नाम था हज़रत इमाम हुसैन का जिनकी बैयत हासिल किए बिना यज़ीद अपने कुकर्मों पर इस्लाम की मोहर नहीं लगा सकता था। हज़रत मोहम्मद के परिवारजनों ने (इमाम हुसैन के नेतृत्व में) एक आवाज़ में यज़ीद की बैयत न करने का फ़ैसला किया। इन लोगों के लिए यज़ीद के इस्लाम विरोधी आचरण को मान्यता देना संभव नहीं था, हालाँकि इस बैयत के नतीजे में उनको ख़ूब सारी दौलत, सरकारी आओ भगत, राजकीय मान सम्मान मिलने के साथ-2 जान बचाने का मौक़ा भी मिल सकता था लेकिन इस के बाद इस्लाम और उसके आदर्श पूरी तरह नष्ट हो जाते और इस्लाम एक कुकर्मी शासक के हाथों का खिलौना बन जाता।

इमाम हुसैन ने यज़ीद को मान्यता देने से दृढ़ता से इन्कार किया। जिसके नतीजे में इराक़ के कर्बला शहर में यज़ीद की सेनाओं का इमाम हुसैन के 12 साथियों से संघर्ष हुआ और इमाम हुसैन व उनके साथी शहीद हुए। इस किताब में हम कर्बला के उस अभूतपूर्व युद्ध की बात कर रहे है जो हज़ारों की सेना और बहत्तर आदमियों की एक टुकड़ी के बीच लड़ी गई। इस टुकड़ी के सेनापति थे हज़रत अब्बास,, जो इमाम हुसैन के भाई थे।

हज़रत अब्बास को वीरता, वफ़ादारी, साहस, सब्र, क़ुर्बानी, क्षमादान और बच्चों से बे-इन्तिहा प्यार करने वाले योद्धा के रूप में याद किया जाता है। उनके अभूत पूर्व चरित्र को किसी एक किताब में समेटना मुम्किन नहीं है। सिर्फ़ कोशिश यही है कि उनके जीवन से जुड़ी अहम घटनाओं के कुछ अंश पाठकों तक पहुंच जाएं।

तो सब से पहले हज़रत अब्बास के पूर्वजों के बारे में बात करते हैं।

हज़रत अब्बास के पूर्वज

परदादाः- हज़रत अब्बास के परदादा हज़रत अब्दुल मुत्तलिब थे जो पैग़म्बर हज़रत इब्राहीम के वंशज थे। हज़रत मुत्तलिब का परिवार पवित्र काबा का प्रबंधक था। उन्हीं के समय में यमन के एक ताक़तवर शासक अबरहा ने काबा के पवित्र भवन को ध्वस्त करने के उद्देश्य से 570 ई० में हाथियों की सेना लेकर हमला कर दिया। हमले से पूर्व ही उसने हज़रत अब्दुल मुत्तलिब व अन्य मक्का वासियों के (मक्का से बाहर चर रहे) सैंकड़ों ऊँट पकड़ लिए जिनको छुड़ाने के लिए हज़रत अब्दुल मुत्तलिब अबरहा से मिले तो अबरहा ने आश्चर्य व्यक्त करते हुए कहा कि '' तुम को अपने ऊँटों की तो फ़िक्र है लेकिन उस काबे की नहीं जिसको मैं ध्वस्त करने के लिए आया हूँ?'' इस पर हज़रत अब्दुल मुत्तलिब ने निर्भीक होकर जवाब दिया कि '' ऊँटों का मालिक मैं हूँ और उनकी हिफ़ाज़त मेरी ज़िम्मेदारी है जबकि काबे का मालिक अल्लाह है और वही उस की सुरक्षा सुनिश्चित करेगा।'' जिस से पता चलता है कि हज़रत अब्दुल मुत्तलिब को अल्लाह पर कितना भरोसा था।

इस के बाद जब अबरहा काबे की ओर बढ़ा तो काबे से कुछ मील दूर मुज़दलिफ़ा की वादी में उसके हाथियों पर अचानक अबाबीलों (काले व सुरमई रंग के छोटे-छोटे पक्षियों) ने कंकरियों से हमला करके विशाल हाथियों वाली सेना को तहस नहस कर दिया और काबे को ध्वस्त करने की योजना ख़ाक में मिल गई। अल्लाह ने अपनी ताक़त का चमत्कार दिखा कर हज़रत अब्दुल मुत्तलिब के विश्वास पर सत्य की मोहर लगा दी। उस युग के सब से बड़े ज़ालिम को ख़त्म करके अल्लाह ने इस बात की घोषणा भी कर दी थी कि यह चमत्कार दुनिया में मज़लूमों के सबसे बड़े हमदर्द के आगमन का सूचक भी है।

आम-उल-फ़ील के नाम से मशहूर इसी वर्ष के तीसरे महीने रबी उल अव्वल की 17 तारीख़ (29 अगस्त 570 ई) में हज़रत अब्दुल मुत्तलिब के बेटे हज़रत अब्दुल्लाह की पत्नी हज़रत आमिना के घर हज़रत

मोहम्मद का जन्म हुआ। हज़रत मोहम्मद के पिता हज़रत अब्दुल्लाह का निधन पैग़म्बर साहब के जन्म से कुछ माह पूर्व ही हो गया था। इस लिए शुरू शुरू में उनका लालन पालन दादा हज़रत अब्दुल मुत्तलिब ने किया, उनके निधन के बाद पैग़म्बर साहब का पालन पोषण उनके चाचा हज़रत अबू तालिब ने किया जिन्हें अपने पिता के निधन के बादकाबा के प्रबंधन की ज़िम्मेदारी भी मिली थी।

दादाः- हज़रत अबू तालिब हज़रत अब्बास के दादा थे। वही पहले व्यक्ति थे जिन्हें इस बात का पता चला कि जिस किशोर का लालन पालन वह कर रहे हैं वह अल्लाह का भेजा हुआ पैग़म्बर है। अस्ल में पैग़म्बर साहब के जन्म लेने से पूर्व ही कुछ इतनी अद्‌भुत घटनाएँ घटीं कि विश्व भर के अनेक धर्म गुरुओं को इस बात का यक़ीन हो चला था कि अल्लाह की ओर से अंतिम पैग़म्बर आने वाला है। विशेष कर यहूदी और ईसाई धर्म की पुस्तकों में इस का काफ़ी उल्लेख था। (खुद हमारे देश के अनेक धर्म ग्रंथों में भी एक महा पुरुष के आने की भविष्य वाणी मौजूद थी) इसी लिए सब लोग इन्तिज़ार में थे कि इंसानों को नया जीवन देने वाला पैग़म्बर जल्द से जल्द इस धरती पर पधारे।

हज़रत अबू तालिब अक्सर अपने व्यवसाय के सिलसिले में अन्य देशों में जाया करते थे। एक बार वह हज़रत मोहम्मद को भी अपने साथ सीरिया की ओर लिए जा रहे थे तो रास्ते में उन्हें एक ईसाई धर्मगुरु (राहिब) मिला। उसने कहा ''इस बच्चे के साथ-2 एक बादल का टुकड़ा चल रहा है जिससे पता चलता है कि यह वही ईश्वरीय दूत है जिसका इस संसार को इन्तिज़ार है। आप इस बच्चे को सीरिया की ओर न ले जाएँ वहाँ के लोग इस बच्चे की हत्या कर देंगे।'' हज़रत अबू तालिब को पूरा विश्वास हो गया कि हज़रत मोहम्मद अल्लाह के भेजे हुए संदेशवाहक हैं इसी लिए वह पैग़म्बर साहब को ले कर मक्का लौट आए। उसके बाद से वह मोहम्मद साहब की सुरक्षा का पूरा ख़्याल रखने लगे। जब लगभग 40 वर्ष की आयु में हज़रत मोहम्मद ने अल्लाह के आदेश पर इस्लाम के संदेश को फैलाना शुरू किया तो अरब जगत के ईसाई, यहूदी और काफ़िर (अल्लाह का इन्कार करने

वाले) उनकी जान के दुश्मन बन गए। हालाँकि पहले यही लोग एक ईश्वरीय प्रतिनिधि के इस संसार में आगमन का इन्तिज़ार कर रहे थे। लेकिन जब उनको लगा कि हज़रत मोहम्मद को पैग़म्बर मान लेने से पुरखों का धर्म नष्ट हो जाएगा तो उन्होंने पैग़म्बर साहब को झूठा कहना शुरू कर दिया और उन पर अत्याचार करना शुरू कर दिए मगर हज़रत अबू तालिब जैसे सशक्त व्यक्ति की ओर से संरक्षण प्राप्त होने के कारण पैग़म्बर साहब इस्लाम के संदेश को निर्भीक हो कर फैलाते रहे।

चाचा हज़रत मोहम्मदः- पैग़म्बर हज़रत मोहम्मद हज़रत अब्बास के चचा थे क्योंकि उनके पिता हज़रत अली और मोहम्मद साहब आपस में चचेरे भाई थे। (स्वयं हज़रत मोहम्मद के एक चचा का नाम भी अब्बास इब्ने अब्दुल मुत्तलिब था और उन्हीं के नाम पर हज़रत अली ने हज़रत अब्बास का नाम रखा था।) हज़रत मोहम्मद इस संसार में उस अल्लाह की इबादत का संदेश देने आए थे जो निराकार, निःस्वरूप, सर्वशक्तिमान, सारे जगत को पैदा करने वाला, समस्त प्राणियों का पालन हार है, जो हर चीज़ में मौजूद है और जो कहीं नहीं है,,जिस को हर प्राणी के जीवन और मृत्यु पर अधिकार है। वही रात को दिन और दिन को रात बनाता है। हज़रत मोहम्मद ने बताया कि सूरज, चाँद, सितारे, समुन्द्र, हवा, बादल, पर्वत और पेड़ पौधे पूजनीय नहीं हैं बल्कि सब अल्लाह के बनाए हुए हैं और कोई इबादत के लायक़ नहीं सिवाए अल्लाह के।

हज़रत मोहम्मद ने इस्लाम का प्रचार इस संदेश के साथ शुरू किया ''कहो,, कि कोई नहीं अल्लाह,,अल्लाह के सिवा,,'' इसी बात को लेकर अरब के सारे धर्मगुरु पैग़म्बर साहब के विरुद्ध हो गए क्योंकि इन लोगों ने धर्म के नाम पर जो दुकानें खोल रखी थीं उनके बंद हो जाने का ख़तरा पैदा हो गया था। अल्लाह को क़ाबिले इबादत ठहराने के कारण न सिर्फ़ पैग़म्बर साहब को तरह तरह से परेशान किया गया बल्कि उनका सामाजिक बायकाट भी किया गया। दुख और संकट की इस घड़ी में हज़रत मोहम्मद के चाचा हज़रत अबू तालिब ने सारे मुसलमानों

को सुरक्षा प्रदान करने के लिए एक विशेष शिविर बनाया जिसको इतिहास में शुऐब अबू तालिब कहा जाता है। हज़रत अब्बास को अल्लाह के वजूद का यक़ीन चाचा हज़रत मोहम्मद और इस्लाम की सुरक्षा का सबक़ दादा हज़रत अबू तालिब की शिक्षाओं से मिला।

पिता हज़रत अलीः- हज़रत अबू तालिब के चार बेटे (हज़रत तालिब, हज़रत अक़ील, हज़रत जाफ़र और हज़रत अली) थे। लेकिन इन चारों में सब से अधिक वीर, साहसी और विद्वान बेटे हज़रत अली थे। जिन्होंने अपने पिता के निधन के बाद पैग़म्बर साहब की सुरक्षा का दायित्व अपने कान्धों पर लिया और जब जब अरब के काफ़िरों, यहूदियों और ईसाइयों ने हज़रत मोहम्मद पर हमला किया हज़रत अली ने उन के दाँत खट्टे करने का काम अंजाम दिया। हज़रत अली का पालन पोषण स्वयं हज़रत मोहम्मद ने किया था इस लिए दोनों के बीच बेइंतिहा प्रेम और स्नेह था। हज़रत अली केवल एक वीर, साहसी, योद्धा व सेनापति नहीं थे वरन मोहम्मद साहब के बाद सब से बड़े विद्वान, ज्ञानी, दयालु, दाता, सहनशील, रहम करने वाले, इंसानों के दुखदर्द बाँटने वाले, बीमारों की ख़बरगीरी करने वाले और मानव जाति का कल्याण करने वाले थे।

हज़रत अली की शादी पैग़म्बर हज़रत मोहम्मद की इकलौती बेटी हज़रत फ़ातिमा से हुई थी। हज़रत फ़ातिमा और हज़रत अली के दो बेटे (हज़रत हसन और हज़रत हुसैन) और दो बेटियाँ (हज़रत ज़ैनब और उम्मे कुलसूम) थीं। हज़रत फ़ातिमा केवल 18 वर्ष की उम्र में इस दुनिया से रुख़सत हो गई। जिस समय मुसलमानों में पैग़म्बर साहब के उत्तराधिकार का विवाद शुरू हुआ तो हज़रत अली के घर पर एक उग्र भीड़ यह माँग करने के लिए जमा हो गई कि वह सक़िफ़ा में चुने गए ख़लीफ़ा को मान्यता दें। इन लोगों के उपद्रव के कारण हज़रत अली के घर का दरवाज़ा हज़रत फ़ातिमा पर गिर गया जिसके कारण उनके पेट में पल रहे शिशु हज़रत मोहसिन शहीद हो गए और हज़रत फ़ातिमा भी कुछ ही दिनों के अंदर शहीद हो गई। हज़रत फ़ातिमा के जीवन में हज़रत अली ने दूसरा विवाह नहीं किया। लेकिन हज़रत

फ़ातिमा की शहादत के बाद उन्होंने अन्य महिलाओं से विवाह किए। हज़रत अली की एक पत्नी का नाम हज़रत फ़ातिमा कलाबिया था जिनको इतिहास में हज़रत उम-उल-बनीन के नाम शोहरत मिली। उन्हें शिया समुदाय मे हज़रत फ़ातिमा ज़हरा के बाद सब से ज़्यादा सम्मान से याद किया जाता है।

भाई इमाम हसन और इमाम हुसैनः- हज़रत अब्बास के यूँ तो अनेक भाई थे लेकिन इमाम हसन और इमाम हुसैन को हज़रत अब्बास सब से ज़्यादा चाहते थे। इमाम हसन को शिया वर्ग के लोग अपना दूसरा इमाम मानते हैं, जबकि सुन्नी वर्ग के अनुसार इमाम हसन के शासन के 6 महीने ख़िलाफ़त-ए-राशिदा कहे जाने वाले उस सिलसिले में शामिल हैं जिसका अंत हज़रत अली पर हुआ था। अर्थात हज़रत हसन और अमीरे मुआविया के बीच हुई संधि के बाद ख़िलाफ़त समाप्त हो गई और इस्लाम में बादशाही की कुप्रथा शुरू हुई।

हज़रत अब्बास के जीवन के लगभग 14 वर्ष हज़रत इमाम हसन के साये में गुज़रे और उनकी सुरक्षा का दायित्व अपने कान्धों पर लिए रखा। अमीरे मुआविया से संधि के बाद जब हज़रत हसन को ख़त्म किए जाने की साज़िशें चल रहीं थीं इसी साज़िश की कड़ी के रूप में इराक़ के मूसल नगर की मस्जिद से निकलते वक़्त इमाम हसन पर एक आतंकी ने ज़हर में बुझाए गए नैज़े (विष युक्त बल्लम) से घात लगा कर हमला किया। इमाम हसन घायल हो गए लेकिन हमलावर जान बचा कर भाग गया। कुछ दिनों बाद हज़रत अब्बास को वही आतंकवादी एक जगह दिखाई पड़ा और उन्होंने उस कपाटी का नैज़ा छीन कर उस पर ऐसा प्रहार किया कि उसके सिर के दो टुकड़े हो गए।

हज़रत हसन की (सन 50 हिजरी में) शहादत के बाद हज़रत हुसैन को इमाम का पद हासिल हुआ। हज़रत अब्बास तो पहले ही से हर पल हर घड़ी इमाम हुसैन पर अपनी जान क़ुर्बान करने को तैयार रहते थे। हज़रत हुसैन के इमाम बनने के बाद हज़रत अब्बास के लिए अब सिर्फ़

भाई ही नहीं थे बल्कि मोमनीन (ईमान वालों) के रहबर भी थे। उनकी सुरक्षा की सारी ज़िम्मेदारी हज़रत अब्बास ने अपने कांधों पर ले ली हालाँकि बनी हाशिम (मोहम्मद साहब के परिवार) में बड़े-2 योद्धा मौजूदथे लेकिन हज़रत अब्बास का नाम कुछ ऐसा था कि अरब जगत के विख्यात सूरमा उनका नाम सुन कर दहल जाते थे। सुप्रसिद्ध पहलवान हज़रत अब्बास का ख़्याल आते ही नींद से चौंक कर उठ बैठते थे।

जब कहीं भी इमाम हुसैन का ज़िक्र होता था तो लोग उनके परिचय में जहाँ यह बात कहते थे कि वह रसूल के नवासे और अली के बेटे है वहीं लोग यह कहना कभी नहीं भूलते थे कि हुसैन हज़रत अब्बास के भाई हैं। हज़रत अब्बास ने भी यज़ीद की बैयत से इन्कार किया और इस्लाम को बचाने के लिए इतनी बड़ी कुर्बानियाँ दीं कि रहती दुनिया तक सारे विश्व के मज़लूम उनको याद करते रहेंगे।

बहनें हज़रत ज़ैनब व हज़रत कुलसूमः- हज़रत अब्बास को अपनी बहनों हज़रत ज़ैनब और हज़रत उम्मे कुलसूम से बहुत मोहब्बत थी। हज़रत ज़ैनब उनसे आयु में लगभग 20 साल बड़ी थीं और उन्होंने एक माँ की तरह हज़रत अब्बास की देख भाल की थी।

असल में हज़रत ज़ैनब को बचपन से ही मालूम कि हज़रत अब्बास ही वह विशेष व्यक्ति हैं जिन्हें अल्लाह ने कर्बला में क़ुर्बानी देने के लिए इस दुनिया में भेजा है। हज़रत ज़ैनब को यह बात भी पता थी कि हज़रत मोहम्मद के फैलाए हुए दीन को बचाने में ही उनके सारे परिवार को क़ुर्बानी देना पड़ेगी और खुद उनको व परिवार के अन्य सदस्यों को क़ैदी बना कर अपमानित किया जाएगा लेकिन मानवता को बचाने के लिए वह अपने भाइयों की क़ुर्बानी और खुद को बंदी बनाए जाने की मुसीबत सहने पर भी राज़ी थीं।

अली का अरमान

दुनिया में कुछ लोग पैदा होने के बाद अच्छे अच्छे काम करते है और दुनिया में अपना नाम रौशन करते हैं। लेकिन अल्लाह की तरफ़ से कुछ ख़ास लोग ख़ास मक़सद को अंजाम देने के लिए दुनिया में भेजे जाते हैं। अल्लाह ने रसूलों और पैग़ंबरों को इंसानों की फ़लाह के लिए भेजा तो अपने आख़िरी रसूल और उनके पवित्र परिवार को उसने कुल कायनात की फ़लाह के लिए इस धरती पर उतारा। आख़िरी रसूल को अल्लाह ने रहमत -उल-लिल-आलमीन (समस्त संसार पर करुणा और दया की वर्षा करने वाला) बना कर उतारा और उन्हीं के पवित्र परिवार में उस ने हज़रत अली को शुजाअत, संयम, त्याग और इस्लाम की विजय का प्रतीक बना कर भेजा, उन्होंने उन तलवारों का पानी उतारा जो इंसानियत के दुश्मन थीं। अल्लाह ने हज़रत अली को एक ख़ास तलवार अता की जिसका नाम था जुल्फ़िक़ार और उसी जुल्फ़िक़ार ने इस्लाम के दुश्मनों से पैग़ंबर हज़रत मोहम्मद और उनके फैलाए हुए दीन की हिफ़ाज़त की। अल्लाह ने हज़रत मोहम्मद को ज्ञान और शिक्षा का शहर भी बना कर भेजा ताकि मनुष्यों को अंधकार से निकाल कर रौशनी में लाया जा सके और इस शहर का द्वार हज़रत अली को बनाया। संसार में जिस किसी को ज्ञान की तलाश है वह हज़रत अली के द्वार पर जाए बिना हज़रत मोहम्मद तक नहीं पहुँच सकता।

अल्लाह ने हज़रत फ़ातिमा के रूप में मानमर्यादा, उच्च चरित्र,सब्र व शुक्र और पाकीज़गी के शिखर पर बैठने वाली ख़ातूने जन्नत व सय्यदतुल-निसाए-आलमीन (समस्त संसार व स्वर्ग की सब से सर्वोच्च महिला) दुनिया वालों को अता की और समाज में उपेक्षा का शिकार बनी हुई नारी जाति को इज़्ज़त भरी ज़िंदगी दिलवाने का ज़रिया हज़रत फ़ातिमा को बनाया। हज़रत अली और हज़रत फ़ातिमा के पवित्र बेटे हसन और हुसैन कहलाए। इमाम हसन को अल्लाह ने सब्र,(सहन शीलता) सुलह (संधि) तथा क़लम के ज़रिये इस्लाम के दुश्मनों से टक्कर लेने के लिए दुनिया में उतारा ताकि कोई यह न कह सके कि

इस्लाम तलवार के माध्यम से फैला। उसी अल्लाह ने इमाम हुसैन को दुनिया में इस लिए भेजा कि वह अपने पवित्र ख़ून से बलिदान, संयम, वीरता, त्याग और मानवता का ऐसा इतिहास लिख जाएँ कि क़यामत तक कोई यह न कह सके कि इस्लाम ज़ालिम बादशाहों, अत्याचारी शासकों, विश्व विजय का सपना रखने वाले सेनानियों या आतंकवादियों का धर्म है। इमाम हुसैन ने इराक़ के रेगिस्तान में कर्बला नामक स्थान पर क़ुर्बानी और बलिदान का जो शहर स्थापित किया उसका द्वार बने उनके छोटे भाई हज़रत अब्बास,,कोई भी व्यक्ति अगर इमाम हुसैन तक पहुँचना चाहता है तो उसको पहले हज़रत अब्बास के द्वार पर अपना सिर झुकाना होगा।

हज़रत अली की शादीः- इतिहास कारों का कहना है कि हज़रत फ़ातिमा की शहादत के बाद जब हज़रत अली ने पुनः विवाह करने का निर्णय किया तो उन्होंने अपने भाई हज़रत अक़ील से कहा कि वह अरब के किसी बहादुर परिवार की महिला से शादी करना चाहते है ताकि एक ऐसी बहादुर औलाद पैदा हो जो कर्बला की ज़मीन पर धर्म व अधर्म के बीच होने वाले निर्णायक युद्ध में उनके बेटे इमाम हुसैन की मदद करे।

है इख़्तियार में जो कुछ भी कायनात में है
अली के वास्ते हर चीज़ मुमकिनात में है
मगर कुछ अपने लिए उम्र भर नहीं माँगा
यक़ीन गो उन्हें बेहद ख़ुदा की ज़ात में है
हसन हुसैन से बेटे हैं उनके पास मगर
एक और चाँद अली के तसव्वुरात में है
ख़ुदा से माँगा यद उल्लाह ने कुछ अपने लिए
यह वाक़िआ भी अजब सारे वाक़िआत में है
यह बात सुन के मशियत भी मुस्कुरा उठी
एक आरज़ू दिले मौलाए कायनात में है।

हज़रत अक़ील ने हज़रत अली को कलाबिया क़बीले की एक महान और पवित्र महिला फ़ातिमा से विवाह करने की सलाह दी जिनका

उपनाम हज़रत उम-उल-बनीन (बेटों की माँ) था (अरब में उस समय आम रिवाज था कि लोग अपने बेटों व बेटियों को नेक शगुन के तौर पहले ही से उपनाम दे दिया करते थे। कुछ इतिहासकारों का मानना है कि चार बेटों को जन्म देने के कारण उन्हें बाद में उम-उल-बनीन के उपनाम से पुकारा जाने लगा) कलाबिया परिवार को अरब के शूर वीरों का क़बीला माना जाता था। हज़रत अली ने इस विवाह के लिए कलाबिया परिवार के मशहूर सेनानी हुज़ाम बिन ख़ालिद के घर रिश्ता ले कर अपने भाई हज़रत अक़ील को भेजा। हुज़ाम ने हज़रत अक़ील का बहुत ही मान सम्मान के साथ स्वागत किया। जब हज़रत अक़ील ने उनकी बेटी के लिए हज़रत अली का रिश्ता पेश किया तो हुज़ाम ख़ुशी से फूले नहीं समाए लेकिन इस्लामी आदर्शों का अनुपालन करते हुए अपनी बेटी फ़ातिमा कलाबिया से इजाज़त लेने घर के अंदर गए और बेटी से कहा ''अक़ील इब्ने अबी तालिब आए हैं और अली इब्ने अबी तालिब से तुम्हारी शादी का पैग़ाम (प्रस्ताव) लाए हैं,,बेटी तुम्हारी क्या राय है?'' जब हज़रत फ़ातिमा कलाबिया ने यह सुना तो ख़ुशी से फूली नहीं समाईं और बोलीं ''बाबा जान आपको इख़्तियार है,, लेकिन इतना कहे देती हूँ कि मेरे दिल में हमेशा से यह तमन्ना थी की मेरा शौहर (पति) बेमिसाल वीर, बेनज़ीर और यकता (दुनिया में सब से बेहतर) हो,,यह मेरी ख़ुशनसीबी है कि मेरे दिल की तमन्ना पूरी होने के दिन आ गए। मैं बिल्कुल राज़ी हूँ। इख़्तियार (निर्णय) आपके हाथ में है।

हुज़ाम इब्ने ख़ालिद बाहर आए हज़रत अक़ील ने पूछा ''हुज़ाम क्या कहते हो?'' हुज़ाम बोले ''आप पर मेरी जान क़ुर्बान,,,कहना क्या है अली से रिश्ता क़ायम करना बड़ा ही गौरव पूर्ण और इज़्ज़त बढ़ाने वाला संयोग है। जिस दिन आप चाहें मेरी लाडली बेटी को अली के घर दुल्हन बना कर ले जाइए।'' हज़रत अक़ील वापस आये और हुज़ाम के राज़ी होने की ख़बर दी। हज़रत अली ने हज़रत फ़ातिमा कलाबिया से निकाह किया और फिर ख़ान्दान (बनी हाशिम) की महिलाओं को भेजा ताकि वह हज़रत फ़ातिमा कलाबिया को रुख़सत करवा कर लांए। हज़रत फ़ातिमा कलाबिया जब हज़रत अली के घर में दाख़िल होने

लगीं तो दरवाज़े को चूमा फिर अंदर जा कर हज़रत इमाम हसन और हज़रत इमाम हुसैन को (दोनों उस दिन बीमार थे) उठा कर बिठाया और दोनों के चारों तरफ़ तीन बार चक्कर लगा कर उन पर से क़ुर्बान हुई फिर दोनों साहबज़ादों के मुँह पर प्यार किया उनकी जुल्फ़ें (केश) सूँघी और आँसू भरी आँखों से कहा ''ए मेरे आक़ाज़ादो (स्वामी के बेटों) मुझे अपनी कनीज़ (सेविका) के रूप में क़ुबूल करो मैं तुम लोगों पर से क़ुर्बान,,मैं तुम्हारी सेवा के लिए आई हूँ तुम्हारे कपड़े धोऊँगी और जान-ओ-दिल से तुम्हारी सेवा करूँगी।

हज़रत अब्बास का जन्मः- हज़रत अब्बास हिजरत के **26** वें साल में शाबान माह की चार तारीख़ को मदीने के पाक शहर में बनी हाशिम के मोहल्ले के एक ऐसे घर में पैदा हुए थे जहाँ हर तरफ़ पाक ओ पाकीज़ा माहौल था। इस घर में सोने चाँदी की दीवारें नहीं इंसानियत की फ़सीलें थीं। महलों जैसी ऊँची छतें नहीं बल्कि चरित्र की बुलंदियाँ विराजमान थीं और यहाँ राज महलों का शोर शराबा नहीं सिर्फ़ क़ुरआन की तिलावत (पाठ) और दुआओं की आवाज़ें थीं।

जैसे ही हज़रत अब्बास के पैदा होने की ख़बर हज़रत अली को मिली उन्होंने अपनी जबीन सजदे में रख दी।

उस आरज़ू के एवज़ जो ख़ुदा ने बख़्शा है
वह शाहकारे वफ़ा अब अली के हाथ में है
अली के पास है उम उल बनीन का अरमां
दुआए फ़ातिमा ज़हरा भी जिसके साथ में है

जब इमाम हुसैन को अपने इस भाई के पैदा होने की ख़बर मिली तो वह फ़ौरन घर आये और नन्हे से अब्बास अपनी बाँहों मैं भर लिया। हज़रत अब्बास ने उस वक़्त ही आँखें खोली जब इमाम हुसैन ने उन्हें अपनी गोद में ले कर कान में अज़ान कही। (इस से पहले भी इतिहास में एक बार और ऐसी ही घटना हुई थी जब हज़रत अली पवित्र काबा में पैदा हुए तो उन्होंने भी उसी वक़्त आँखें खोलीं थी जब पैग़म्बर हज़रत मोहम्मद ने उन्हें अपनी गोद में लिया था।)

क़मरे बनी हाशिमः- जन्म के बाद हज़रत अब्बास को एक सेफ़ेद कपड़े में लपेट कर परिवार वालों को दिखाया गया। वह इस क़द्र खुसूरत लग रहे थे कि सारे लोगों ने इस बच्चे को देखते ही क़मर ए बनी हाशिम (हाशमी क़बीले का चान्द) कहना शुरू कर दिया।

कहा यह फ़िज़्ज़ा ने देखा जो चेहर-ए-अब्बास
चमक दमक कहां ऐसी जवाहरात में है
जहां में चमकेगा दिन रात चान्द हाशिम का
ऐ माहताब! तेरी ज़ौ तो सिर्फ़ रात में है

सफ़ेद कपड़े में लिपटे हुए हज़रत अब्बास जब हज़रत अली की गोद में आए तो हज़रत अली रोने लगे इस खुशी के मौक़े पर हज़रत अली को रोता देख कर हज़रत उम-उल-बनीन घबरा गईं और हज़रत से रोने का सबब (कारण) पूछा तो मौला ने उन्हें बताया कि पैग़म्बर हज़रत मोहम्मद ने उन्हें बताया था कि यह बच्चा कर्बला के मैदान में हज़रत इमाम हुसैन की नुसरत (मदद) करते हुए अपने दोनों बाज़ू कटवा देगा। यह सुन कर हज़रत उम-उल-बनीन भी बहुत रोईं और बचपने से ही हर पल हज़रत अब्बास को यह याद दिलाती रहीं कि उनका जन्म कर्बला में क़ुर्बानी पेश करने के लिए हुआ है।

अक़ीक़ा और नामकरणः- जन्म के सातवें दिन हज़रत अब्बास के सिर के बाल उतारे जाने की रस्म अदा की गई इस रस्म को अक़ीक़ा कहा जाता है। अक़ीक़े के बाद हज़रत अली ने अपने बेटे का नाम अब्बास रखा हज़रत अली के एक चाचा का नाम भी अब्बास था। अब्बास का अर्थ होता है शेर। अपने नाम के अर्थ को हज़रत अब्बास ने इस तरह साकार किया कि वह शेर की तरह ही ज़िंदा रहे और शेर की तरह ही शान से अपनी जान दी।

इमाम हुसैन का स्नेहः- एक बार हज़रत अली मस्जिद में बैठे थे कि इमाम हुसैन वहाँ अपनी गोद में हज़रत अब्बास को लेकर तशरीफ़ लाए और बोले ''बाबा जान,,यह बच्चा मुझ को बहुत प्यारा है मैं इस की परवरिश करूँगा।'' हज़रत अली ने फ़रमाया ''बेटा यह बहुत खुशी की

बात है।'' मस्जिद से वापस होते हुए हज़रत अली से इमाम हुसैन ने फिर कहा ''बाबा जान क्या बात है कि जब इस बच्चे पर मुझे बहुत प्यार आता है तो मेरी आँख में आँसू भी आ जाते हैं?'' हज़रत अली ने फ़रमाया ''बेटा अल्लाह के विशेष बंदों के लिए ख़ुशी और ग़म एक ही जैसे हैं, यह बच्चा आज तुम्हें खुश कर रहा है लेकिन एक दिन ऐसा भी आने वाला है कि तुम इस की लाश पर आँसू बहाओगे,,।'' जब इमाम हुसैन ने इस का विवरण जानना चाहा तो हज़रत अली ने कहा ''जब तुम्हारा जन्म हुआ था तो हज़रत जिबरईल (अल्लाह के विशेष दूत और फ़रिश्ते) तुम्हारा शहादत नामा (शहीद होने का प्रपत्र) लाए थे,, जिसमें लिखा था कि हुसैन शहीदों के सरदार और अब्बास उनके अलमदार कर्बला में शहीद होंगे।'' इस तरह इमाम हुसैन को भी यह बात मालूम थी कि हज़रत अब्बास ही उनके सबसे बड़े मददगार होंगे।

इमाम हुसैन से हज़रत अब्बास का स्नेहः- हज़रत अब्बास ने जब थोड़ा होश सँभाला तो रात दिन अपने भाई हुसैन की सेवा में लग गए। वह चाहते थे कि इमाम हुसैन की सेवा घर के नौकर चाकर नहीं बल्कि वह खुद करें। इसी कारण वह कभी भी इमाम हुसैन को भाई कह कर नहीं पुकारते थे बल्कि आक़ा (स्वामी) कह कर संबोधित करते थे। एक बार का ज़िक्र है कि हज़रत अली, इमाम हुसैन और हज़रत अब्बास मस्जिदें में बैठे थे। इतने में इमाम हुसैन को प्यास लगी तो उन्होंने घर के सेवक हज़रत क़ंबर से पानी माँगा लेकिन हज़रत अब्बास ने क़ंबर को इशारे से रोका और कहा कि ठहरो अपने आक़ा के लिए मैं पानी लाऊँगा,,,हज़रत अब्बास पानी लेने गए। बचपन के दिन थे तो सिर पर ठंडे पानी से भरा बरतन रख कर पानी ले कर इमाम की सेवा में पहुँचे,,सिर पर रखे बरतन से इतना पानी छलका कि आप के कपड़े भीग गए। इमाम हुसैन ने अब्बास की मोहब्बत और बदन को पानी से भीगे देखा तो रोने लगे। इसी तरह की मोहब्बत का एक नमूना उस समय देखने में आया जब हज़रत अब्बास की बहन हज़रत ज़ैनब ने महसूस किया कि हज़रत अब्बास कई रातों से सोए नहीं है और लगातार जागने से उनकी आँखें लाल हो गईं हैं। उन्होंने हज़रत अब्बास

से इसका कारण पूछा तो पहले तो हज़रत अब्बास चुप ही रहे बाद में जब जनाबे ज़ैनब ने बहुत आग्रह किया तो हज़रत अब्बास ने बताया कि ''इमाम हुसैन को हमेशा से ही प्यास ज़्यादा लगती है और वह रात को सोते में उठ कर पानी माँगते हैं मैं हमेशा ही से उनकी हलकी सी आवाज़ पर उठ जाता हूँ और जब भी वह पानी माँगते है मैं अपने आक़ा को पानी देता हूँ,,,लेकिन कुछ दिन पहले कि बात है कि मैं ज़रा गहरी नींद सो गया और मेरा आक़ा पानी माँगता रहा। जब मैं नींद से जागा तो मैं ने देखा कि मेरा आक़ा खुद उठ कर पानी पी रहा है। मैं ने उसी रात से सोना छोड़ दिया क्योंकि मेरी तबियत को यह गवारा नहीं हुआ कि मैं सोता रहूँ और मेरा आक़ा एक पल के लिए भी प्यासा रहे,,, इस तरह की क़ुर्बानियों से भरा पड़ा है हज़रत अब्बास के जीवन का इतिहास,,, यक़ीनन क़ुर्बानियों के ऐसे ही न जाने कितने क़िस्से रहे होंगे जिनको न तो इतिहास अपने पन्नों में समेट सका न ही हर समय इतिहासकार मौजूद थे जो पल पल घटित होने वाले क़िस्सों को लिख कर महफ़ूज़ कर देते।)

उम-उल-बनीन के बेटेः- हज़रत फ़ातिमा कलाबिया के पवित्र गर्भ से हज़रत अली के चार बेटों ने जन्म लिया। जिनके नाम क्रमशः हज़रत अब्बास (जिनका नाम उन्होंने अपने चचा के नाम पर रखा) दूसरे बेटे का नाम हज़रत अब्दुल्लाह (पैग़म्बर साहब के पिता) के नाम पर, तीसरे बेटे का नाम उसमान (पैग़म्बर साहब के एक बड़े सहाबी और अपने क़रीबी मित्र हज़रत उसमान बिन मज़ूऊन) के नाम पर और चौथे बेटे का नाम अपने भाई जाफ़र इब्ने अबी तालिब के नाम पर जाफ़र रखा। चार बेटों को जन्म देने के कारण हज़रत अब्बास की माँ को उम-उल-बनीन (बेटों की माँ कहा जाता है)

उंचा क़द उंची शानः- हज़रत अब्बास बचपन से इतने ख़ूबसूरत थे कि लोग उनको क़मर-ए-बनी हाशिम (हाशमी क़बीले का चाँद) कहते थे। उनका व्यक्तित्व इतना प्रभावशाली था कि वह जिधर से गुज़रते लोग अपना काम काज छोड़ कर उन्हें देखने लगते थे।उनका क़द इतना ऊँचा था कि जब वह घोड़े पर सवारी करते थे तो उनके दोनों पैर

ज़मीन पर ख़त (निशान) देते जाते थे। सिफ़्फ़ीन की जंग (जिसका ज़िक्र आगे के पन्नों में किया गया है) में हज़रत अब्बास की उम्र केवल 11 वर्ष थी फिर भी उनके वस्त्र उनके पिता के बदन पर इस तरह जचे कि खुद उनको भी दुशमनों ने कई बार हज़रत अली समझा था।

हज़रत अब्बास की शादीः- जब हज़रत अब्बास जवान हुए तो उनकी मां हज़रत उम्मउल बनीन ने इमाम हुसैन से कहा ''सुलताने दो आलम (संसार और स्वर्ग के सम्राट) क्या ही अच्छा होता जो मेरे नूरे नज़र (बेटे) का घर आबाद कर दिया जाता।'' इस तमन्ना के व्यक्त किए जाने के बाद इमाम हुसैन ने हज़रत अब्बास की शादी का इन्तिज़ाम करना शरू किया और अपने नाना हज़रत मोहम्मद के चचाज़ाद भाई उबैद उल्लाह इब्ने अब्बास अब्ने अब्दुल मत्तलिब से उनकी बेटी हज़रत लुबाबा का हाथ अपने भाई के लिए मांगा जिसे उन्होंने ख़ुशी से मन्ज़ूर किया। हज़रत अब्बास और हज़रत लुबाबा की शादी हो गई। इस प्रकार हज़रत अब्बास का पैग़म्बर साहब से दोहरा रिश्ता स्थापित हो गया।

हज़रत लुबाबा और हज़रत अब्बास की शादी से तीन बेटे पैदा हुए जिनके नाम हैं। 1.**हज़रत फ़ज़ल** (इनको मोहम्मद भी कहा जाता था) 2. **हज़रत क़ासिम** 3. **उबैद उल्लाह**। कुछ किताबों में हज़रत अब्बास की एक बेटी होने की भी बात लिखी गई है और अरब के कुछ शायरों ने हज़रत अब्बास की इसी बेटी की शादी इमाम हुसैन के बेटे हज़रत अली अकबर से होने की बात मर्सियों (शोकपूर्ण काव्य) में कही है लेकिन इतिहासिक रूप से इस की पुष्टि नहीं होती।

उस समय में आम तौर पर लोगों को बड़े बेटे के पिता की हैसियत से पुकारा जाता था इसी लिए अरब के लोग हज़रत अब्बास को अबुल फ़ज़लिल (फ़ज़ल के पिता) अब्बास कहते थे।

हज़रत अब्बास की शिक्षाः-समस्त मुसलमानों का यह मानना है कि पैग़म्बर हज़रत मोहम्मद से बड़ा आलिम (विद्वान और ज्ञानी) न तो कोई था न कभी होगा। हज़रत मोहम्मद ने संसार में किसी से शिक्षा ग्रहण नहीं की थी बल्कि अल्लाह ने सारे ज्ञान उनके सीने में भर कर उन्हें इस दुनिया में भेजा था। हज़रत मोहम्मद ने कहा है ''मै ज्ञान का शहर

हूं और अली उसका दरवाज़ा (प्रवेश द्वार) हैं।''

स्वयं हज़रत अली का कहना है कि पैग़म्बर मोहम्मद ने समस्त ज्ञान इस तरह उन तक पहुंचाए हैं जिस तरह एक परिन्दा (पक्षी) अपने बच्चों को दाना भराता है। हज़रत अली के ज्ञान का यह आलम था कि हमेशा कहते रहते थे कि ''इस से पहले कि तुम मुझे खो दो मुझसे जो पूछना है पूछ लो।''

हज़रत इमाम हसन व इमाम हुसैन भी इसी लिए सभी विद्याओं के ज्ञानी थे कि उनकी परवरिश (पालन पोषण) हज़रत मोहम्मद और हज़रत अली ने मिल कर किया था। हज़रत अब्बास को सारे हुनर व ज्ञान अपने पिता हज़रत अली और दोनों भाईयो (हसन-हुसैन) के ज़रिये मिले थे। इसी लिए बड़े बड़े विद्वान उनके आगे सर झुकाते रहे। रणभूमि के फ़न और हुनर (कला-कौशल) दीन ओ दुनिया के उलूम (धर्म व संसार के समस्त ज्ञान) और सब्र (धैर्य) व इन्सानियत (मानवता) के आदर्श उनको तीन इमामों के साए में रह कर प्राप्त हुए थे। हज़रत अब्बास को ही केवल यह इफ़्तिख़ार (गौरव) प्राप्त है की उनकी शिक्षा-दीक्षा ऐसे तीन लोगों ने की जो अल्लाह की तरफ़ से इमाम नियुक्त किए गये थे और जिनको इमामे मासूम (गुनाहों और ग़ल्तियों से मुक्त इन्सान) का दर्जा प्राप्त था। हज़रत अब्बास ख़ुद भी गुनाहों और ग़ल्तियों से मुक्त थे लेकिन एक इमाम की मौजूदगी में दूसरा इमाम नहीं हो सकता इस लिए वह इमाम के पद पर नहीं रहे मगर वह इस्लामी दुनिया के मात्र ऐसे व्यक्ति हैं जिनको (पैग़म्बर हज़रत मोहम्मद के परिवार के) चौदह मासूम कहे जाने वाले पाक सिलसिले के हर सदस्य ने सम्मान व स्नेह दिया।

हज़रत अब्बास की पहली जंग

जब सीरिया (इस देश को शाम के नाम से भी पुकारा जाता है) के गवर्नर अमीरे मुआविया ने हज़रत अली के इस्लामी गणराज्य पर हमला किया और हज़रत अली की सेना उस के मुक़ाबले के लिए फ़ुरात नदी के तट पर पहुँचीं तो वहाँ पहले से मौजूद शामी फ़ौज (सीरियाई सेना) ने फ़ुरात के घाट पर क़ब्ज़ा करके हज़रत अली की सेना पर पानी बंद कर दिया अर्थात उन्हें प्यासा रहने पर मजबूर कर दिया। जब हज़रत अली की सेना के सिपाही बेहाल होने लगे तो हज़रत अली ने मुआविया को संदेश भिजवाया कि यह अमानवीय कार्य है और अगर हम तुझ से पहले आते तो कभी भी तेरी सेना पर पानी बंद नहीं करते क्योंकि हम पानी पर लड़ने नहीं आये हैं बल्कि धर्म को बचाने के लिए लड़ने आये हैं हज़रत अली के दूत की बात पर विचार विमर्श के बाद मुआविया की सेना ने कहा कि तुम लोगों ने हज़रत उसमान (तीसरे ख़लीफ़ा) पर पानी बंद किया था इस लिए तुम लोगों पर पानी बंद ही रखा जाएगा (हालाँकि सच्चाई तो यह थी कि असंतुष्ट मुसलमानों की उपद्रवी भीड़ में घिरे तीसरे ख़लीफ़ा के लिए पानी और खाने का इन्तिज़ाम हज़रत अली ने ही किया था। यह तो सिर्फ़ एक बहाना था।) पानी बंद करके मुआविया की सेना अपना वहशीपन दिखा रही थी। जब शामी सेना ने किसी तरह पानी लेने पर लगी पाबंदी नहीं उठाई तो हज़रत अली ने दस हज़ार सिपाहियों का नेतृत्व कर रहे अपने दोस्त व सहयोगी हज़रत मालिक अशतर को हुक्म दिया कि वह शामी सेना से घाटों को छीन लें। हज़रत मालिक अशतर ने अपने सैनिकों के साथ हमला किया लेकिन शामी सेना की संख्या बहुत अधिक थी इस लिए इस्लामी लश्कर कमज़ोर पड़ने लगा। यह देख कर हज़रत अली के सपूत इमाम हुसैन ने अपने पिता से जंग की इजाज़त माँगी। इमाम हुसैन को जंग की इजाज़त मिली तो हज़रत अब्बास भला उनको अकेले मैदाने जंग मैं कैसे जाने देते? वह तो हर पल हर घड़ी साये की तरह इमाम हुसैन के साथ रहते थे। इस जंग का हाल बताने वालों का कहना है कि जैसे ही

इमाम हुसैन रणभूमि की तरफ़ चले तो अचानक अली की सेना में एक बिजली सी कौन्दी और किसी तरफ़ से एक नवजवान तेज़ी से निकला यह भी न मालूम हो सका कि वह युवक कौन है बस लोगों ने इतना देखा कि वह युवक मुआविया की सेना के बीच-ओ-बीच पहुँच गया है। उस नवजवान के हाथ में तलवार नहीं नैज़ा (भाला) था और उसी भाले से वह दुश्मन के फ़ौजियों को उठा उठा कर फेंक रहा था। इतनी तेज़ी से हुए हमले के कारण मुआविया की सेना में खलबली मच गई और कुछ ही पलों में इस युवक ने **90**सैनिकों को मौत के घाट उतार दिया। मुआविया के फ़ौजी एक दूसरे से पूछ रहे थे कि आख़िर यह युवक है कौन तो किसी ने आवाज़ देकर कहा ''पहचान लो इन्हें यह हैं हज़रत अली के शेर हज़रत अब्बास।''

सेना के दूसरे हिस्से में इमाम हुसैन अपनी तलवार के जौहर इस तरह दिखा रहे थे कि अमीरे मुआविया की फ़ौज बौखलाई हुई भाग रही थी। अली के दोनों शेरों ने थोड़ी ही देर में सीरिया की फ़ौज को दूर तक खदेड़ दिया। हालाँकि उस समय हज़रत अब्बास की उम्र सिर्फ़ ग्यारह वर्ष ही थी लेकिन अपने पिता के जैसे हाथ दिखाए यहाँ तक कि मुआविया के सिपाहियों को यह लगने लगा कि हज़रत अली ख़ुद हज़रत अब्बास का लिबास पहन कर मैदान में आये हैं।

दोनों भाइयों के हमले के बाद फ़ुरात के तमाम घाटों पर इस्लामी सेना का क़ब्ज़ा हो गया। हज़रत हुसैन और हज़रत अब्बास जब नदी पर क़ब्ज़ा करके वापस लौटे तो लोगों ने हज़रत अली को बेटों की जीत पर मुबारक बाद दी। हज़रत अली रोने लगे। लोगों ने कहा ''मौला यह तो ख़ुशी का मौक़ा है आप रो क्यों रहे हैं?'' हज़रत अली ने कहा ''मुझे इस समय वह वक़्त याद आ गया जब कि मेरे बच्चे कर्बला की ज़मीन पर भूखे प्यासे शहीद कर दिए जाएँगे।''

नदी पर हज़रत अली की सेना का क़ब्ज़ा होने के बाद मुआविया ने अपने कमांडर अमरे आस को बुरा कहना शुरू कर दिया कि अब अगर अली ने पानी बंद कर दिया तो हम बिना लड़े हुए ही हार जाएँगे। इस पर अमरे आस ने कहा ''दुश्मनों में घिरे हज़रत उसमान को पानी की

मश्कें पहुँचाने वाले अली पानी कभी नहीं बंद करेंगे वह तेरी तरह नहीं हैं वह इंसानों पर रहम करते हैं और उनकी ग़लतियों को माफ़ करने वाले हैं।'' यह था हज़रत अली का वह क़सीदा (प्रशंसा) जो उनके विरोधियों की ज़ुबान पर था।

मुआविया ने ज़ुहाक इब्ने क़ैस की अध्यक्षता में बारह आदमियों का एक प्रतिनिधि मंडल हज़रत अली के पास भेजा। इस दल ने हज़रत अली से आग्रह किया कि मुआविया की सेना पर पानी बंद न किया जाए। हज़रत अली चाहते तो पानी रोक कर जंग उसी समय जीत सकते थे लेकिन हज़रत अली तो समस्त प्राणियों के इमाम थे वह तो जानवरों को भी प्यासा नहीं देख सकते थे भला इंसानों पर पानी कैसे बंद करते? भले ही यह लोग उनके दुश्मन थे और उनके ख़ून के प्यासे थे। हज़रत अली ने फ़ौरन ही कहा ''तुम लोग बेफ़िक्र रहो हम किसी पर पानी बंद नहीं करते।'' उसके बाद घाट पर मौजूद अपने सैनिकों को आदेश भेजा कि वह किसी पर पानी बंद न करें। उन्होंने कहा ''पानी समस्त इंसानों पर हलाल है किसी को पानी पीने से रोका नहीं जा सकता। दोनों सेनाओं के आदमियों और जानवरों के लिए जिसको जितना पानी चाहिए हो उसे ले जाने दिया जाए।''

पानी पर पाबंदी न लगाए जाने के फ़ैसले पर हज़रत अली के आगे सिर टेकने के बजाए मुआविया की एहसान फ़रामोश (उपकार को भुला देने वाली) फ़ौजें फिर एक बार सामने आ गईं और युद्ध शुरू हो गया। यह पहली जंग थी जिस में हज़रत अली के चार बेटे हिस्सा ले रहे थे और युद्ध में शामिल होने वाले भाइयों में सब से छोटे हज़रत अब्बास थे।

बाप के तन पर बेटे के वस्त्रः- अस्ल में उस समय एक प्रथा यह थी कि मैदाने जंग में जाने वाले प्रसिद्ध योद्धा अपने चेहरे पर नक़ाब डाल कर मैदान में जाते थे ताकि दुश्मन के सिपाही सूरत देखते ही न भाग खड़े हों, हज़रत अली के सामने तो बड़े बड़े सूरमाओं का दम निकलता था। इस लिए अक्सर वह अपने किसी रिश्तेदार या दोस्त का लिबास पहन कर मैदान में आते थे ताकि दुश्मन सूरत देख कर ही भाग खड़ा न हो। हज़रत अली ने जंगे सिफ़्फ़ीन के दौरान एक बार

मैदान में आकर (युद्ध शुरू करने के ज़िम्मेदार) अमीर मुआविया को चुनौती देते हुए कहा कि ''ए हिन्दह के बेटे! क्यों मुसलमानों में रक्तपात करते हो? खुद मैदान में निकल आओ और हम तुम फ़ैसला कर लें।'' मगर मुआविया में इतनी हिम्मत कहाँ थी कि वह हज़रत अली के सामने आकर उनसे मुक़ाबला करता। इस लिए हज़रत अली वस्त्र और घोड़ा बदल कर मैदान में आए और दुश्मन की सेना को चुनौती दी। अमीरे मुआविया का कमांडर अमरे आस हज़रत अली को पहचाना नहीं और जंग करने के लिए सामने आ गया, आते ही उस ने अरब की परंपरा के अनुसार रजज़ पढ़ी (अपने ख़ान्दान और अपनी वीरता का बखान किया) हज़रत अली को भी रजज़ पढ़ना पढ़ी क्योंकि यह अरबों की परंपरा थी। जैसे ही हज़रत अली ने ज़ुबान खोली अमरे आस हज़रत अली को पहचान गया और भाग खड़ा हुआ।

इस के बाद मुआविया की सेना से 'करइब इब्ने सबाह' नाम का एक बहुत ही कुख्यात पहलवान सामने निकल कर आया और हज़रत अली की सेना को चुनौती दी। करीब में इतनी ताक़त थी कि वह चुटकी में सिक्के को दबा कर उस पर बनी आकृति को मिटा देता था। इस के मुक़ाबले के लिए हज़रत अली की सेना के एक वीर सेनानी मुबरिक़ा ख़ूलानी मैदान में गए लेकिन शहीद हो गए उनके बाद एक और योद्धा को अपनी जान से हाथ धोना पड़े। तब हज़रत अली ने सोचा कि वह खुद रणभूमि में जाएँ लेकिन उन्हें पता था कि उनकी शक्ल देखते ही करइब बिन सबाह भाग खड़ा होगा। इस लिए उन्होंने अपनी सेना के सब से छोटे सिपाही हज़रत अब्बास का रूप धारण किया।

सिफ़्फ़ीन की जंग में हज़रत अब्बास की आयु केवल 11 वर्ष थी मगर उनका क़द किसी जवान से कम नहीं था वह इस उम्र में भी अपने पिता के समान लगते थे। हज़रत अब्बास के डील-डौल का फ़ायदा उठाते हुए हज़रत अली ने अपने बेटे अब्बास को पास बुलाया और उनका लिबास पहना उन्हीं का घोड़ा लिया और बेटे का रूप धारण करके मैदान में आए तो उनके एक और सेनानी अब्दुल्लाह बिन अबी हाज़िबी ने कहा कि ''मौला आप ठहरिए मैं करइब से जंग करने

जाऊँगा'' अब्दुल्लाह मैदान में गए और शहीद हुए। तब हज़रत अली हज़रत अब्बास का रूप धारण किए हुए मैदान में आये और एक ही वार में करइब का सिर उड़ा दिया।

लगभग डेढ़ माह तक चलने वाली जंग-ए-सिफ़्फ़ीन में हज़रत अब्बास को अपना साहस और कौशल दिखाने के कई अवसर मिले ऐसे ही एक मौक़े पर हज़रत अब्बास चेहरे पर नक़ाब डाले मैदान में आये और अपने घोड़े को चारों तरफ़ घुमा कर दुश्मन को चुनौती दी लेकिन कोई सामने नहीं आया तब अमीरे मुआविया ने अपने सेनानी इब्ने शाअसा को हुक्म दिया कि वह हज़रत अब्बास का सामना करे। इब्ने शाअसा ने कहा ''तू मुझे एक नवयुवक से लड़ने के लिए कह रहा है? जबकि सीरिया वासी मुझ अकेले को दस हज़ार सिपाहियों के बराबर मानते हैं इस नवजवान के मुक़ाबले में जाना मेरे लिए अपमान जनक है लेकिन तेरे आदेश का पालन करते हुए मैं अपने बेटे को इस युवक से लड़ने के लिए भेजता हूँ।'' इब्ने शाअसा ने एक बेटे को भेजा वह मारा गया दूसरे को भेजा वह मारा गया और फिर तीसरा इस तरह उस के सात बेटे हज़रत अब्बास के हाथों क़त्ल हुए। यह देख कर ख़ुद इब्ने शाअसा अपने बेटों के क़त्ल का बदला लेने के लिए सामने आया मगर हज़रत अब्बास के एक वार ने उसे भी जहन्नुम में पहुँचा दिया। इस के बाद किसी में हिम्मत नहीं हुई कि इस नक़ाबपोश युवक के क़रीब आता। लोग कहने लगे कि अली फिर से अपने बेटे का रूप धारण करके आये हैं तो हज़रत अब्बास ने अपनी नक़ाब उलट दी तो सब उस चाँद से चेहरे को देख कर चकित रह गए।

सिफ़्फ़ीन की जंग और कर्बला की यादः- इस युद्ध के दौरान कई बार हज़रत अली ने कर्बला में भविष्य में घटित होने वाली क़ुर्बानी को याद किया। जब वह अपनी राजधानी कूफ़े से सिफ़्फ़ीन की तरफ़ चले तो कर्बला नगर रास्ते में पड़ा वहाँ हज़रत अली थक कर थोड़ी देर के लिए सो गए तो उन्होंने ख़्वाब में देखा कि एक ख़ून का सागर मौजें मार रहा है और उसमें इमाम हुसैन डूब रहे हैं यह सपना देख कर हज़रत अली बहुत रोए।

इसी तरह एक बार सिफ़्फ़ीन के युद्ध के दौरान हज़रत अब्बास प्यास से बेहाल हो गए तो उन्होंने अपने पिता हज़रत अली से पानी माँगा। हज़रत अब्बास को पानी देते समय हज़रत अली रोने लगे। हज़रत अब्बास ने घबरा कर इस रोने का कारण पहुँचा तो हज़रत अली ने कहा कि बेटा तुम्हें प्यास से बेहाल देख कर मुझे भविष्य की एक घटना याद आ गई ''जब कि एक बहता हुआ दरिया तुम्हारे सामने होगा लेकिन तुम्हारे होंटों तक पानी का एक क़तरा नहीं पहुँचेगा। तुम्हारे साथ तुम्हारा भाई हुसैन भी होगा। बेटा इसी गिरोह के लोग जो आज हमारे सामने हैं यही लोग तुम लोगों पर पानी बंद करेंगे और तुम सब लोग यहाँ तक कि छोटे छोटे बच्चे भी क़त्ल कर दिए जाएँगे।''

कर्बला के युद्ध की भूमिका

जैसा कि पिछले अध्यायों मैं हम बता चुके है कि सत्य और असत्य के बीच सन **61** हिजरी में इराक़ के कर्बला नामक स्थान पर एक ऐसा युद्ध हुआ जिसके बाद यह बात हमेशा हमेशा के लिए तय हो गई की इस्लाम को तलवारों ने नहीं शहीदों के ख़ून ने बचाया है। आगे बढ़ने से पहले कर्बला के युद्ध के इतिहास से जुड़ी अहम घटनाओं पर प्रकाश डालना आवश्यक है ताकि हमारा जीवन भी इस से रौशन हो।

पैग़म्बर हज़रत मोहम्मद के निधन के सिर्फ़ 50 वर्ष के बाद मुसलमानों की सत्ता का केंद्र मदीने और कूफ़े से हट कर सीरिया की राजधानी दमिश्क़ में एक राज शाही के रूप मैं क़ायम हो गया। सत्ता के इस केंद्र पर ज़ालिम, दुराचारी और चरित्र हीन शासक यज़ीद का क़ब्ज़ा हो गया और उसने गद्दी पर बैठते ही इमाम हुसैन व पैग़म्बर साहब के अन्य परिवार जनों को इस बात के लिए बाध्य करने की कोशिश की कि वह लोग उस के शासन को इस्लामी गणराज्य के रूप में मान्यता दें।

यज़ीद ने शासक का पद ग्रहण करते ही मदीने में तैनात अपने राज पाल वलीद बिन अक़बा को संदेश भेजा कि ''हुसैन से मेरी बैयत लो और अगर वह इन्कार करें तो उनका सिर काट कर मेरे पास भेज दो।'' वलीद को मालूम था कि हुसैन अमीरे मुआविया के जीवन काल

में ही यज़ीद की बैयत से इन्कार कर चुके थे क्योंकि यज़ीद कुकर्मी और बदचलन था। वलीद ने इमाम हुसैन को दरबार में बुलाया। इमाम हुसैन अपने परिवार के अनेक जवानों (जिनकी संख्या 40 से 70 के बीच बताई जाती है) को लेकर वलीद के दरबार में पहुँचे लेकिन अंदर जाते वक़्त सभी को बाहर रोक कर अकेले दरबार में गए। वलीद ने इमाम हुसैन को सब से पहले मुआविया के मरने की सूचना दी और उसके बाद यज़ीद का वह पत्र इमाम को दिखाया जिसमें उसने इमाम हुसैन, अब्दुल्लाह इब्ने ज़ुबैर, अब्दुल रहमान बिन अबी बक्र और अब्दुल्लाह इब्ने उमर से बैयत लिए जाने का आदेश दिया था। इस पर इमाम हुसैन ने कहा ''पहले तुम चारों लोगों को जमा करो फिर देखा जाएगा,,, यज़ीद की बैयत के मामले में छुप कर बात नहीं की जा सकती तुम मुझे आम लोगों की उपस्थिति में बुलाना, तब मैं जवाब दूँगा।''

इतनी बात करके इमाम हुसैन जाने के लिए उठे तो वलीद के सहयोगी मरवान ने वलीद से कहा ''हुसैन से यहीं बैयत ले ले अगर अभी यह निकल गए तो फिर कभी हाथ न आएँगें।'' मरवान की बात सुनते ही इमाम हुसैन को ग़ुस्सा आ गया और आप ने ऊँची आवाज़ में कहा ''मरवान! किस की मजाल है जो हुसैन को हाथ भी लगा सके?'' इमाम हुसैन की आवाज़ बुलंद होते ही हज़रत अब्बास के नेतृत्व में इमाम के परिवारजन तलवारें लहराते हुए दरबार में दाख़िल हो गए लेकिन इमाम हुसैन ने अपने बिफरे हुए शेरों का ग़ुस्सा शांत किया। इस तरह बिना किसी टकराव के इमाम हुसैन व उनके साथी दरबार से बाहर आ गए। अगर इमाम हुसैन को सत्ता प्राप्त करना होती तो इस से बेहतर कोई मौक़ा नहीं था वह अपने परिवार जनों की मदद से वलीद और मरवान को मार कर सत्ता के केंद्र को फिर से मदीने में स्थापित करने की घोषणा कर सकते थे क्योंकि उस वक़्त हज़रत अब्बास, हज़रत मुस्लिम बिन अक़ील, मोहम्मद हनफ़िया, हज़रत अली अकबर, इमाम ज़ैनुल आबदीन और बनी हाशिम के अन्य जाँबाज़ और जियाले योद्धा उनके साथ थे जो अकेले ही हज़ारों सैनिकों को हराने की क्षमता रखते थे।

लेकिन इमाम हुसैन को सत्ता या तख़्त और ताज से कोई सरोकार नहीं था वह तो अपने नाना के फैलाए हुए दीन और इस्लामी आदर्शों व शिक्षाओं को बचाना चाहते थे। उन्हें पता था कि मदीने में ख़ून ख़राबा होने से यज़ीद को यह झूठा प्रचार करने का अवसर मिल जाएगा कि हुसैन ने झगड़े की शुरुआत की और सत्ता के लोभ में उन्होंने मदीने के गवर्नर की हत्या कर दी। घर वापस आकर उन्होंने अपने परिवारजनों से विचार विमर्श किया और फिर मदीना छोड़ने का फ़ैसला किया।

मदीने से रूख़सतः- मदीने में इस ख़बर से कोहराम मच गया कि इमाम मदीना छोड़ कर जा रहे हैं। मदीने के लोग इमाम के जाने पर आँसू बहा रहे थे। खुद इमाम हुसैन भी अपने नाना और अपनी माँ के पवित्र मज़ारों से लिपट कर रो रहे थे। लेकिन मदीने में रहना मुमकिन नहीं था। क़ाफ़िला रुख़सत होने को तैयार था। हज़रत मोहम्मद के घराने की पाक महिलाएँ, बच्चे और जवान सवार हो रहे थे। इन सब को ऊँटों और घोड़ों पर बिठाने की ज़िम्मेदारी बनी हाशिम के नवजवान मुस्तैदी से अंजाम दे रहे थे कि इसी बीच एक नवजवान ने आवाज़ दी कि सब इस जगह से हट जाएँ उसके बाद दो पवित्र महिला सर से पैर तक चादर में लिपटी हुई घर से निकलीं किसी ने पूछा कि नूर में लिपटी यह महिलाएँ कौन हैं? तो जवाब मिला कि यह हज़रत अली की पवित्र बेटियाँ हज़रत ज़ैनब और उम्मे कुलसूम हैं। इनके बाहर आते ही हज़रत अली अकबर ने महमिल का पर्दा थामा हज़रत क़ासिम ने पैरों के नीचे कुर्सी रखी लेकिन अली की बेटियाँ ऊँट पर सवार हुई तो इस शान से कि भाई अब्बास ने ज़मीन पर घुटने टेके और अब्बास के घुटनों पर हज़रत ज़ैनब और उम्मे कुलसूम ने पाँव रखे और इमाम हुसैन ने दोनों बहनों के बाज़ुओं को सहारा दे कर उन्हें सवार किया। इस के बाद हज़रत अब्बास ने अपने भाई इमाम हुसैन के घोड़े की रकाब थामी और उन्हें भी सवार होने में मदद की। जब क़ाफ़िला चला तो अहले मदीना और बनी हाशिम के मोहल्ले की औरतें रोते हुए चिल्ला चिल्ला कर अलविदा,,अलफ़िराक़,,,के नारे लगाने लगीं। हज़रत अब्बास ने इस अवसर पर मदीना वासियों से कहा ''क़सम ख़ुदा की आज

जुदाई हो रही है और अब क़यामत में ही मुलाक़ात हो सकेगी।''

इस तरह (60 हिजरी में रजब माह की 28 तारीख़ को) इमाम हुसैन अपने परिवार के सदस्यों के साथ मक्का के पवित्र नगर की ओर प्रस्थान कर गए। मदीने में उनके परिवार के कुछ सदस्य रह गए। इन लोगों में उनकी बीमार बेटी फ़ातिमा सुग़रा, हज़रत अब्बास की वालिदा हज़रत उम-उल-बनीन, इमाम हुसैन की नानी हज़रत उम्मे सलेमा, और भाई मोहम्मद हनफ़िया इत्यादी शामिल थे।

इमाम हुसैन मक्के में:- इमाम हुसैन व उनके परिवारजन लगभग चार महीने तक पवित्र काबा के निकट स्थित मक्के के एक मशहूर मोहल्ले शोएब अली में रहे। काबा के आस पास के क्षेत्र को अल्लाह की ओर से हराम घोषित किया गया है अर्थात इस क्षेत्र में किसी प्राणी की हत्या करने या किसी को जंग करने की अनुमति नहीं है।

इमाम हुसैन यहाँ इस लिए आये थे कि वह अल्लाह की इबादत करते रहें और यज़ीद की सेनाओं से टकराव की नौबत भी न आए। मगर यज़ीद को इस्लामी आदर्शों, इस्लाम की शिक्षाओं या अल्लाह की ओर से प्रतिबंधित किए गए किसी क्षेत्र के मान सम्मान से क्या लेना देना था? उसने हाजियों के बहरूप में अपने सैनिकों की एक टुकड़ी मक्के में इस उद्देश्य के साथ भेज दी कि वहाँ हज के दौरान इमाम हुसैन की हत्या कर दी जाए। हालाँकि हज के दौरान किसी पतंगे तक को मारने की अनुमति नहीं है मगर यज़ीद जैसे कुकर्मी के लिए यह सब बातें क्या अर्थ रखती थीं? उसे तो सत्ता का सुख भोगने से मतलब था।

काबे से कर्बला तकः- जब इमाम हुसैन को इस साज़िश की सूचना मिली तो उन्होंने काबे की पवित्र ज़मीन को रक्त रंजित होने से बचाने का निर्णय लिया और हज को छोड़ कर सिर्फ़ उमरा अदा करके मक्के से रुख़सत हो गए। मक्के में प्रवास के दौरान हज़रत हुसैन को कूफ़ा (जो केवल 21 वर्ष पूर्व हज़रत अली की राजधानी था) वासियों की ओर से लगातार पत्र मिल रहे थे कि वह लोग यज़ीद के अत्याचारों से बहुत ज़्यादा परेशान है। इन हालात में उन्हें एक इमाम, रहबर, शीर्ष धर्म गुरु, सही रास्ता दिखाने वाला अल्लाह की ओर से नियुक्त प्रतिनिधि की

ज़रूरत है। लेकिन यह पत्र अधिकतर ऐसे लोगों के थे जो इमाम के वफ़ादार नहीं थे बल्कि गहरी साज़िश की एक कड़ी के रूप मैं उन्हें लगातार कूफ़े की ओर आने की दावत दे रहे थे। इमाम हुसैन अल्लाह के भेजे हुए रहबर थे और इमाम के लिए शरीयत का आदेश है कि वह हर उस इंसान की मदद करें जिस पर ज़ुल्म किया जा रहा हो। ऐसे में कूफ़े वालों की मदद करना उनका धार्मिक दायित्व भी था।

इमाम हुसैन ने इन लोगों के दिलों का हाल जानने के लिए अपने चचेरे भाई हज़रत मुस्लिम बिन अक़ील को अपना प्रतिनिधि बना कर कूफ़े की ओर भेजा लेकिन वहाँ हज़रत मुस्लिम और उनके दो बच्चों की निर्मम हत्या कर दी गई। इमाम हुसैन को इस की सूचना मक्का छोड़ने के बाद ज़बाला नामक स्थान पर मिली। इस दर्दनाक ख़बर के बाद भी इमाम हुसैन ने अपना सफ़र जारी रखा।

दुश्मन की प्यास बुझानाः- शराफ़ नामक स्थान पर उन्हें यज़ीदी सेना के एक अफ़सर हुर बिन यज़ीद रियाही के नेतृत्व में एक हज़ार फ़ौजियों की एक सैनिक टुकड़ी मिली यह सेना इमाम हुसैन के क़ाफ़िले का पीछा करती हुए पहुँची थी। हुर के लश्कर के पास पानी बिल्कुल ख़त्म हो चुका था उसके सेनानियों का यह आलम था कि प्यास के मारे चलना दुशवार था और घोड़ों की जुबानें बाहर निकली हुई थीं। इमाम हुसैन चाहते तो अपने साथियों से कहते कि इस प्यासी सैनिक टुकड़ी पर टूट पड़ो क्योंकि यह टुकड़ी हमें घेर कर मारने के लिए आई है लेकिन वह तो इंसानियत के मसीहा थे। उनकी तरफ़ से किसी अमानवीय कार्य की कल्पना भी करना गुनाह है। उनके दुश्मन ने उन से कहा कि हम आपका रास्ता रोकने आए है लेकिन उन्होंने दुश्मन के प्यासे सैनिकों और जानवरों के लिए उस पानी की मश्कें खोल दीं जो उन्होंने अपने क़ाफ़िले वालों के लिए एकत्रित किया था।

सब जानते है कि रेगिस्तान के सफ़र में अपने लिए सुरक्षित रखा गया पानी कितना अहम होता है। पानी की ज़रा सी कमी अपनी और अपने बच्चों की जान के लिए ख़तरा बन सकती है। इस माहौल में जबकि बच्चे और औरतें साथ थीं इमाम हुसैन ने हज़रत अब्बास और अपने बेटे

हज़रत अली अकबर से कहा ''इन्हें जी भर के पानी पिलाओ मेरे बच्चों का अल्लाह मालिक है''। हज़रत अब्बास ने मश्कों के मुँह खोल दिए दुश्मन के सिपाहियों ने जी भर के पानी पिया। उसके बाद थाल मँगवाए गए और जानवरों के सामने रखे गए जब तक घोड़े ख़ुद मुँह से हटा नहीं लेते थे उनके आगे से पानी का थाल हटाया नहीं जाता। हुर के सिपाही बिन ताआन का कहना था ''मैं किसी वजह से देर से पहुँचा तो सब को पानी पिलाया जा चुका था मुझे देख कर इमाम हुसैन ने कहा सवारी से उतरो और पानी पियो उसके बाद इमाम हुसैन ने अपने हाथ से मुझे और मेरे घोड़े को पानी पिलाया।''

इस एहसान के बदले में हुर का दिल बदल गया उसके बाद हुर ने कहा कि ''मैं आप को गिरफ़्तार करके कूफ़ा ले जाने के लिए भेजा गया हूँ।'' इमाम हुसैन ने कहा ''ख़ुदा की क़सम मेरे जीते जी तू मुझे गिरफ़्तार नहीं कर सकता।'' इमाम हुसैन के इस जवाब पर हुर ने कहा कि मैं भी आपका पीछा नहीं छोड़ूँगा, बात आगे बढ़ी तो हुर ने कहा कि मुझे आप से लड़ने का हुक्म नहीं मिला है सिर्फ़ यह कहा गया है कि मैं आपको घेर कर कूफ़े तक पहुँचा दूँ। अगर आप इसे मंज़ूर नहीं करते तो ऐसा रास्ता इख़्तियार कीजिए जो न कूफ़े की तरफ़ जाता हो न मदीने की तरफ़।

जब रात आई तो हुर ने कहा ''ऐ! हुसैन रात के अँधेरे में आप का दिल जिधर चाहे चले जाइए मैं रोकूँगा नहीं। मैं कूफ़े के राजपाल इब्ने ज़ियाद को लिख दूँगा कि हुसैन रास्ता बदल कर न जाने किधर निकल गए और मैं आपको गिरफ़्तार नहीं कर सका।'' इमाम हुसैन राज़ी हो गए रात में कूच किया। सारी रात सफ़र जारी रहा सुबह होते ही हुर ने फिर घेर लिया। इमाम हुसैन ने कहा ''कल तो तुम ने खुद ही राय दी थी कि दूसरे रास्ते पर चला जाऊँ और आज फिर घेर रहे हो?'' इस पर हुर ने कहा ''मौला मेरे ही किसी साथी ने मेरे शासक से चुग़ली कर दी उस ने मुझे आदेश दिया है कि उस वक़्त तक हुसैन का पीछा करते रहना जब तक मेरी सेना वहाँ पहुँच न जाए। उसका आदेश बहुत सख़्त है, मौला अब आप को छोड़ना मेरे लिए मुमकिन नहीं है।''

इमाम हुसैन आगे बढ़ते रहे। हुर की सेना उनके पीछे पीछ चलती रही। तभी कूफ़े के गवर्नर इब्ने ज़ियाद का संदेश हुर के पास आया जिसमें लिखा था कि हुसैन के क़ाफ़िले को ऐसी जगह रुकने पर बाध्य करो जहाँ पेड़ पौधे न हों और पानी कहीं दूर दूर तक मौजूद न हो। हुर ने इमाम हुसैन को इस ख़त के बारे में बताया।

इस बीच इमाम हुसैन के दो साथी अमरवे बिन ख़ालिद सैदावी और तरहामा बिन अदी कूफ़े से आ कर इमाम के क़ाफ़िले में शामिल हो गए ताकि इमाम पर अपनी जान दे सकें। इस पर हुर ने आपत्ति की और कहा ''मैं इनको गिरफ़्तार करके कूफ़े भेजूँगा।'' इमाम ने कहा ''यह मेरे साथी हैं और अगर तूने इनको गिरफ़्तार करने की कोशिश की तो हम तुझ से लड़ेंगे। फिर हुर ने इमाम हुसैन से कुछ नहीं कहा। शायद हुर ने हज़रत अब्बास के हाथों में चमकती हुई तलवार देख कर सोचा कि यह अकेली ही तलवार मेरे सैनिक दस्ते का काम तमाम करने के लिए काफ़ी है या उसको इमाम की मानवता याद आ गई जो चंद दिन पहले ही उसने खुद देखी थी। हुर की तरफ़ से लगातार पीछा किए जाने के कारण इमाम के एक साथी ज़ुहैर-ए-क़ैन ने कहा ''मौला जंग की इजाज़त दीजिए अभी यह लोग एक हज़ार हैं इन से इसी वक़्त निबट लें।'' इमाम ने कहा ''नहीं,, मैं युद्ध की शुरुआत नहीं करना चाहता।'' क़ाफ़िला लगातार आगे की तरफ़ बढ़ता रहा। यह क़ाफ़िला चलते चलते सन 61 हिजरी में मोहर्रम की 2 तारीख़ को एक ऐसे शहर में पहुँचा जहाँ कुछ आबादी थी। इमाम ने स्थानीय लोगों से पूछा कि इस जगह का क्या नाम है। लोगों ने कहा ''इसे शत-उल-फ़ुरात कहते हैं।'' उन्होंने कहा ''दूसरा नाम बताओ।'' लोगों ने कहा ''इसे मारिया कहते है।'' तीसरे ने कहा ''इस को नैनवा भी कहते हैं। इमाम ने पूछा ''और कोई नाम?'' एक किसान ने कहा इसे ग़ाज़रिया भी कहा जाता है। मगर अभी तक वह नाम सुनने को नहीं मिला था जिस को वह बचपन से सुनते आए थे इस लिए उन्होंने फिर पूछा ''इस ज़मीन का कोई और नाम भी है? इस पर एक व्यक्ति ने कहा ''मौला इस का नाम अब न पूछिए।'' जब इमाम ने इसरार किया तो उस ने कहा ''इस को कर्बला

भी कहते हैं।'' यह सुन कर मौला की आँखों में आँसू आ गए और उन्होंने अपने वफ़ादार साथियों से कहा ''उतर पड़ो और एक क़दम भी आगे न बढ़ो। ख़ुदा की क़सम यहीं पर हमारी सवारियाँ उतरेंगी।यहीं पर हमारा ख़ून बहेगा। यहीं पर हमारी औरतें असीर होंगी। मर्द क़त्ल होंगे और बच्चों की गले काटे जाएँगे यहीं हमारी क़ब्रें बनेंगी। यहीं मेरा वायदा पूरा होगा।'' यह सुन कर सब वहीं उतर पड़े।

कर्बला में पड़ावः- हुसैनी क़ाफ़िले ने फ़ुरात की अलक़मा नहर के किनारे पड़ाव डाला ख़ेमे (शिविर) लगाए गए। (सैंकड़ों साल पहले यह नहर अलक़मा नामक बादशाह द्वारा फ़ुरात नदी से काट कर कर्बला तक लाई गई थी इसी कारण इस को नहरे अलक़मा कहा जाता है।) अभी बच्चे और औरतें ठीक से बैठने भी नहीं पाए थे कि हज़ारों यज़ीदी सैनिकों की टुकड़ी उमरे सअद के नेतृत्व में आ पहुँची। इतनी बड़ी संख्या मैं सेना भेजने के पीछे यज़ीद की खीज साफ़ नज़र आती थी।

नहर से ख़ेमे हटाने का हुक्मः- हिजरत का 61 वा वर्ष शुरू ही हुआ था कि पैग़म्बर साहब के परिवार जनों को तथाकथित मुसलमानों की सेना घेरे खड़ी थी। इमाम हुसैन के पास केवल दो रास्ते थे। पहला यह कि यज़ीद को मान्यता देकर अपनी और अपने परिवार वालों की जान बचा लें और दूसरा रास्ता था कि पवित्र पैग़म्बर साहब के परिवार के सदस्यों की क़ुर्बानी देकर उस इस्लाम को बचा लें जिसको उनके नाना हज़रत मोहम्मद ने मानवता के कल्याण के लिए फैलाया था।

इमाम हुसैन के क़ाफ़िले के कर्बला में पड़ाव डालते ही यज़ीदी सेना ने उन्हें फ़ुरात नदी के किनारे से अपने शिविर दूर स्थापित करने को कहा। इस पर हज़रत अब्बास बिफर गए और यज़ीदी सेना पर शेर की तरह टूट पड़ने को तैयार हो गए। लेकिन इमाम हुसैन ने संघर्ष कि स्थिति को टालते हुए हज़रत अब्बास को समझाया और अपने ख़ेमे (शिविर) नदी के किनारे से हटाने को कहा हज़रत अब्बास का यह पहला इम्तिहान था। नदी के पास यज़ीदी सेना की टुकड़ियों ने क़ब्ज़ा जमा लिया और इमाम हुसैन को अपने शिविर फ़ुरात से लगभग तीन मील दूर लगाने पर बाध्य किया।

क़ब्रों के लिए ज़मीनः- इमाम हुसैन को बचपन से ही इस बात का ज्ञान था कि कर्बला की ज़मीन उनके लिए बनी है और वही इसी ज़मीन को अमर करने वाले हैं। कर्बला में ठहरने के बाद उन्होंने उस इलाक़े के किसानों (बनी असद) को बुलाया और उनसे कहा कि वह यह ज़मीन ख़रीदना चाहते हैं। उन लोगों ने 60 हज़ार दिरहम (अरब की मुद्रा) में ज़मीन इमाम हुसैन के हाथ बेच दी।

उसके बाद इमाम हुसैन ने वह ज़मीन उन्हीं को इस शर्त पर हिबा (भेंट) कर दी कि वह लोग इमाम हुसैन व उनके साथियों की लाशों को दफ़न करेंगे, खेती करते समय इमाम हुसैन व उनके साथ शहीद होने वालों की क़ब्रों पर हल नहीं चलाएँगे और जो लोग इमाम के मज़ार के दर्शन के लिए आएँगे उन्हें यह लोग तीन रोज़ तक मेहमान रखेंगे।

इधर इमाम ने ज़मीन ख़रीदी उधर यज़ीदी सेना ने फ़ुरात पर पहरा कड़ा कर दिया और इमाम हुसैन के क़ाफ़िले तक पानी पहुँचने पर रोक लगा दी। उन्होंने इमाम के शिविर नदी के किनारे से हटवाए ही इसी उद्देश्य से थे कि झुलसती धूप और जिस्म को फूँक देने वाले लू के झक्कड़ों के बीच पानी न होने से तंग आकर शायद इमाम हुसैन यज़ीद की बैयत कर लें।

सक़्क़ा-ए-अहले हरमः- नहर से पानी लाने पर प्रतिबंध के बाद इमाम हुसैन के क़ाफ़िले में शामिल औरतों व बच्चों के लिए पानी लाने की ज़िम्मेदारी हज़रत अब्बास ने खुद पर ले ली। हर बार वही नहर से पानी लाते। इमाम हुसैन के परिवारजनों तक पानी पहुँचाने के लिए हर बार इन सैनिकों से संघर्ष की नौबत आती। हर बार हज़रत अब्बास नहर पर जाते और यज़ीदी सैनिकों से झड़प के बाद पानी भर कर लाते। कभी उनके साथ हज़रत अली अकबर (इमाम हुसैन के बेटे) तो कभी क़ासिम (भतीजे) और कभी औन व मोहम्मद (भाँजे) होते तो कभी कुछ मित्र और साथी।

हर रोज़ तीस चालीस हुसैनी जवान पानी भर कर लाते और क़ाफ़िले वालों की प्यास बुझाई जाती। इमाम हुसैन के क़ाफ़िले में मर्दों की तादाद 72 थी लेकिन बच्चों और औरतों की कुल तादाद कितनी थी

इसका सही अनुमान लगाना मुश्किल है फिर भी सब मिला कर इनकी संख्या डेढ़ सौ के आस पास होगी। इसके अलावा चालीस घोड़े और कई ऊँट भी क़ाफ़िले में शामिल थे। इस लिए यह अनुमान आसानी से लगाया जा सकता है कि बीस या पच्चीस मश्कों का पानी इतनी तेज़ गर्मी में कितनी देर चलता होगा?

हुसैनी ख़ेमों में आख़िरी बार पानीः- मोहर्रम की 6 तारीख़ को जब पानी की कमी हुई और इमाम हुसैन व उनके साथियों के गले सूखने लगे तो इमाम ने हज़रत अब्बास से कहा कि ''भाई जाओ और फ़ुरात से पानी लाओ।'' हज़रत अब्बास ने अपने साथ तीस सवारों और बीस पैदल सैनिकों को लिया पैदल सैनिकों के पास मश्कें थी। हज़रत अब्बास के नेतृत्व में जा रहे इस दस्ते में हिलाल बिन नाफ़ए आगे आगे चल रहे थे। जब यह लोग नहर के किनारे पहुँचे तो नहर पर पहरा दे रहे अम्र बिन हज्जाज ने पूछा तुम लोग कौन हो तो हज़रत हिलाल बिन नाफ़ेए ने कहा ''मैं हूँ तेरा रिश्तेदार नाफ़ेए (नाफ़ेए और अम्र बिन अल हज्जाज एक ही क़बीले के थे) इस पर अम्र ने कहा नाफ़ेए ख़ूब पानी पियो जी भर के पियो । उसका जवाब सुन कर बिलाल ने कहा ''तुझ पर अल्लाह की लानत,,मुझे तो पानी पीने की इजाज़त देता है लेकिन रसूल अल्लाह (पैग़म्बर हज़रत मोहम्मद) के नवासे को प्यास से तड़पा रहा है।'' अम्र ने कहा मुझ को आदेश हुआ है मैं उसका पालन करूँगा। हिलाल ने अपने साथियों से कहा कि तुम लोग इस की बातों पर ध्यान मत दो और पानी भरो। अम्र ने यह देख कर अपने साथियों को इन लोगों को रोकने का आदेश दिया हुसैनी सिपाही दो दलों में बट गए एक दल ने हज़रत अब्बास के साथ मिल कर यज़ीदी सेना से टक्कर लेना शुरू की और दूसरे दल ने पानी भरना शुरू किया। यज़ीद की सेना भाग खड़ी हुई और इस लड़ाई में हुसैनी सेना का कोई भी सदस्य न तो घायल हुआ न ही किसी की शहादत हुई। इमाम हुसैन के ख़ेमे में जब यह बहादुर जवान पानी लेकर आए तो इमाम हुसैन बहुत ख़ुश हुए और हज़रत अब्बास को सक़्क़ा-ए-अहले हरम (परिवार के सदस्यों की प्यास बुझाने वाले) का ख़िताब दिया। इस घटना के दूसरे दिन ही

यानी कर्बला पहुँचने के केवल पाँच दिन बाद (मोहर्रम की सातवीं तारीख़ को) यज़ीदी सेना की तादाद हज़ारों से बढ़ कर एक लाख बीस हज़ार हो गई और फ़ुरात नदी से पानी लाने के लिए भरपूर युद्ध के अलावा कोई रास्ता नहीं रह गया। इमाम हुसैन के साथ केवल 72 शूर वीर थे और उधर लाखों का लश्कर। हालांकि 72 आदमियों की यह छोटी सी टुकड़ी लाखों की सेना से टक्कर लेने में पूरी तरह सक्षम थी लेकिन इमाम हुसैन सत्य और असत्य, धर्म एवं अधर्म तथा ज़ालिम व मज़लूम के बीच के इस युद्ध को पानी के लिए होने वाली लड़ाई में परिवर्तित होते नहीं देख सकते थे। वह दुनिया को यह बताना चाहते थे कि कर्बला का युद्ध पानी के लिए नहीं बल्कि इस्लाम के आदर्शों की हिफ़ाज़त और मानवता को बचाने की ख़ातिर हो रहा है।

इंसानी समाज को ज़ालिमों से बचाने की ख़ातिर ही इमाम हुसैन अपनी, अपने बच्चों, भाइयों, भतीजों, भांजों और दोस्तों की क़ुर्बानी देने को कर्बला के मैदान में आए थे। इस लिए उन्होंने अपने छोटे छोटे बच्चों का प्यासा रहना मंज़ूर किया लेकिन जंग की शुरुआत करना उचित नहीं समझा।

जैसे जैसे समय गुज़रता गया इमाम हुसैन के बच्चों को प्यास तड़पाने लगी। बच्चों और महिलाओं को प्यास से तड़पते देख कर आठ मोहर्रम की रात में हज़रत अब्बास ने रिश्तेदारों को जमा किया और सब ने मिल कर एक कुआँ भी खोदा लेकिन उसमें पानी नहीं निकला तो उसे बंद कर दिया गया।

भाई की ग़ुलामी:- हज़रत अब्बास बचपन से इतनी मोहब्बत करते थे कि इमाम हुसैन को अपना आक़ा (स्वामी) और खुद को उनका ग़ुलाम (दास) सेवक कहते थे। इसी भावना का एक बेमिसाल नमूना शबे नहुम (नौ मोहर्रम की रात) को देखने को मिला जब इमाम हुसैन और यज़ीद का सेनापति उमरे सअद 20-20 आदमियों की उपस्थिति में आख़िरी बार शान्ति वार्ता के लिए एकत्रित हुए। इमाम चाहते थे कि जिस तरह भी मुम्किन हो जंग को अपनी तरफ़ से टाला जाए। इतिहासकारों का कहना है कि इमाम हुसैन ने यज़ीद के राज्य की सीमाओं से बाहर

(भारत या यमन) जाने का प्रस्ताव भी रखा लेकिन यज़ीद की तरफ़ से एक ही बात दोहराई जा रही थी कि या तो हुसैन बैयत करें या फिर उन्हें क़त्ल कर दिया जाएगा। यह वार्ता विफल हुई तो यह तय हुआ कि इमाम हुसैन व उमरे साअद अकेले में बात करें और साथ में दोनों के बेटे व ग़ुलाम (दास) के अलावा कोई नहीं होगा। उमरे सअद अपने ग़ुलाम और बेटे को साथ लाया और इमाम हुसैन के साथ उनके बेटे हज़रत अली अकबर और हज़रत अब्बास आए। इस पर उमरे सअद ने आपत्ति की और कहा कि बेटे और ग़ुलाम को साथ लाने की बात तय हुई थी। तो हज़रत अब्बास ने कहा तेरे साथ तेरा ग़ुलाम है और (अपनी तरफ़ इशारा करके कहा कि) हुसैन के साथ हुसैन का ग़ुलाम है।

हज़रत अब्बास का सब्रः- सब्र का अर्थ होता धैर्य व संयम। पशु या पक्षी सब्र करना नहीं जानते। शेर को भूख में खाना न मिले तो वह जंगल छोड़ कर शहरों में आ कर इन्सानों को अपना निवाला बना लेता है। किसी पक्षी को इस से मतलब नहीं होता कि दूसरा परिन्दा क्या खाएगा? उसे तो सिर्फ़ अपना और अपने बच्चों का पेट भरने के अलावा कोई फ़िक्र नहीं होती। उस की कोशिश बस यही होती है कि सबसे पहले वह अपना पेट भरे। इसी तरह दूसरे पशुओं पर क्या अत्याचार हो रहा है इस बात से भी किसी जानवर को कोई मतलब नहीं होता। यह गुण सिर्फ़ इन्सानों में ही पाया जाता है। सब्र धैर्य व संयम के दो रूप है। एक सब्र मजबूरी का है और दूसरा सब्र इख़्तियारी है। पहला सब्र वह है कि कोई ताक़तवर किसी कमज़ोर पर अत्याचार करे और वह कमज़ोर उसके ज़ुल्म को सिर्फ़ इस लिए सहता रहे कि उसमें जवाब देने की ताक़त ही नहीं है और दूसरा सब्र वह है यानी किसी में बहुत शक्ति हो लेकिन वह अपनी शक्ति का प्रदर्शन न करते हुए अपने से कमज़ोर आदमी के अत्याचार पर सिर्फ़ इस लिए संयम से काम ले कि जवाब देने से उसके आदर्शों या उद्देश्य पर आंच आएगी।

सब्र, पैग़म्बर या इमाम (अल्लाह के प्रतिनिधि) पर वाजिब (अनिवार्य) है लेकिन इन लोगों को व्यक्तिगत मामलों में तो सब्र का आदेश है मगर दीन (धर्म) इन्सानियत (मानवता) दबे और कुचले हुए इन्सानों (दलितों)

और सरकारी तन्त्र के ओर से ढाए जा रहे सामूहिक अत्याचारों पर इन्हें सब्र करने की इजाज़त नहीं है बल्कि इन्हें इन अत्याचारों के ख़िलाफ़ उठ खड़े होने का आदेश है। इसी लिए पैग़म्बर हज़रत मोहम्मद ने ख़ुद पर होने वाले हर ज़ुल्म पर ख़ामोशी से सब्र किया लेकिन जब यह अत्याचार हद से ज़्यादा बढ़ गए तो उन्होंने मक्का छोड़ कर मदीने की ओर हिजरत (यात्रा) की ताकि वहां जा कर अत्याचार करने वाले लोगों के विरुध अभियान छेड़ा जा सके। मदीने में जब उनकी जान सुरक्षित हो गई तो पैग़म्बर साहब ने अत्याचार और अधर्म के ख़िलाफ़ अभियान को तेज़ कर दिया। नतीजे में मक्के के काफ़िरों ने वहां भी हमला करके उनके दीन को मिटाने का सपना देखना शुरू कर दिया जब बात धर्म पर आई तो मोहम्मद साहब अपनी जान की हिफ़ाज़त की फ़िक्र न करते हुए केवल 213 लोगों की सेना लेकर (मैदान बद्र में) दस हज़ार की फ़ौज से टकरा गए और ज़ालिमों के हर सपने को बिख़ेर दिया।

इसी तरह हज़रत अली भी जीवन भर हज़रत मोहम्मद के साथ हर क़दम पर सब्र (संयम व धैर्य) का इम्तेहान देते रहे मगर जब दीन पर वक़्त पड़ा तो वह हर मैदान में इस्लाम का ध्वज उठाए ज़लिमों का सर्वनाश करते हुए नज़र आये। पैग़म्बर साहब के बाद भी हज़रत अली ने ख़िलाफ़त (उत्तराधिकार) के मामले में सब्र किया लेकिन दीन और मानवता पर आक्रमण हुआ तो वह लगभग 60 वर्ष की आयु होने के बावजूद जंगे जमल, जंगे सिफ़्फ़ीन और जंगे नहरवान में एक जवान की तरह हमलावरों के ख़िलाफ़ जिहाद करते हुए नज़र आए।

उनके बेटे हज़रत हसन से जब बल पूर्वक ख़िलाफ़त छीनी गई तो उन्होंने इस लिए सब्र किया कि मुसलमानों का ख़ून न बहे। उनसे जो सन्धि की गई इस्लामी आदर्शों से ख़िलवाड़ न करने का आश्वासन उस में मौजूद था।

हज़रत इमाम हुसैन ने भी दस वर्ष तक सब्र किया और अपने भाई द्वारा की गई सन्धि का अनुपालन किया। हज़रत अब्बास भी अपने भाई हसन की सन्धि के पाबन्द रहे और सब्र के रास्ते पर हर क़दम इमाम हुसैन

के साथ रहे।
यज़ीद के सत्ता ग्रहण के बाद जब इमाम हुसैन से बैयत मांगने के लिए वलीद के दरबारी मरवान ने इमाम हुसैन को क़त्ल करने की बात कही तो हज़रत अब्बास दोनों का सिर वहीं उतार सकते थे मगर उन्होंने सब्र किया। हुर की सेना ने इमाम हुसैन का रास्ता रोका मगर अब्बास जैसे वीर ने सब्र किया हालांकि उस समय यज़ीद की सेना को हरा देना बहुत आसान था। उस दल से तो लड़ने की भी ज़रुरत नहीं पड़ती केवल उन्हें पीने के लिए पानी न देते तो हुर की सैनिक टुकड़ी रेगिस्तान में प्यास से तड़प तड़प कर मर जाती।
कर्बला में जब नहर के किनारे ख़ेमे से हटाए गये तो हज़रत अब्बास इतने सक्षम थे कि उसी समय उनको मुंह तोड़ जवाब देते लेकिन यह सब ऐसे अत्याचार थे जिनका जवाब देने का मतलब होता व्यक्तिगत लड़ाई। हज़रत अब्बास अपने भाई के साथ कर्बला में इस्लाम और मानवता को बचाने आए थे व्यक्तिगत लड़ाई न तो उनका मक़सद थी न ही वह वयक्तिगत जज़बात (भावों) में आकर उस उद्देश्य पर कोई आंच आने दे सकते थे जिसके लिए वह मदीना से हिजरत करके कर्बला के मैदान में पहुंचे थे। उन्होंने तीन दिन की प्यास में संयम और धैर्य से काम लेते हुए सब्र के उच्च आदर्शों को अपने सीने से लगाए रखा।
क़ूव्वते बर्दाशत (सहनशीलता):- सहनशीलता मनुष्यों का एक बेहतरीन गुण है और यह गुण भी जानवरों में नहीं पाया जाता। एक चींटी भी अपनी जान का ख़तरा महसूस करते ही काट लेती है। किसी शेर की दुम पर किसी का पैर पड़ जाए तो वह एक पल सोचे बिना पैर रखने वाले को ख़त्म कर देगा उसे क्या पता कि किसी की ग़लती को सहन करना चाहिए। यह सिर्फ़ इन्सान ही है जो अपने कष्टों को बर्दाशत करके मुस्कुराता है और कष्ट पहुचाने वाले लोगों को क्षमा करके सुख का अनुभव करता है। जिस व्यक्ति में जितनी अधिक क़ूव्वते बर्दाशत (सहनशीलता) हो इन्सानी समाज उसको उतने ही आदर से देखता है।
अपने आप पर पड़ने वाले दुखों पर मुस्कुराना, अपने कष्टों को हंस कर

टाल देना और अपने रास्ते में कांटे बिछाए जाने के बाद भी चुप चाप गुज़र जाने वाले लोग सहनशीलता के उच्च आदर्श स्थापित करते है लेकिन जब मानवता पर वक़्त पड़ता है तो यह लोग बड़े से बड़े अत्याचारी के ख़िलाफ़ आवाज़ बुलन्द करने में ज़रा सा भी संकोच नहीं करते। पैग़म्बर हज़रत मोहम्मद के परिवार के लोगों ने दुनिया में सहनशीलता के ऐसे ऐसे नमूने पेश किए है कि यदि हम उनका ज़िक्र करने बैठ जाएं तो सारी किताब उसी से भर जाएगी।

इनके अधिकार छीने गए लेकिन यह लोग दीन-ए-खुदा के ख़ज़ाने को अपने चरित्र की दौलत से भरते रहे, इन्हें इनके घरों से निकाला गया लेकिन इन लोगों ने इस्लाम को बे वतन नहीं होने दिया। यह लोग ख़ुद भूखे रहे मगर कभी कोई भिखारी इनके दरवाज़े से ख़ाली नहीं गया। इनका घर तो जल गया लेकिन मानवता को नई रौशनी भी मिल गई। इस घर के बच्चे तो बेदर्दी से शहीद कर दिए गए लेकिन इस्लाम को ऐसी जवानी मिल गई जो क़यामत तक बाक़ी रहेगी। हज़रत मोहम्मद के घर के चिराग़ तो ज़ालिमों ने बुझा दिए लेकिन वह ज़ालिम इन्सानियत की दुनिया में अन्धेरा नहीं कर सके। इस पवित्र परिवार की सम्मानित महिलाओं के सिर से चादरें छिन गईं मगर ईमान के सिर पर साया हो गया। पैग़म्बर साहब के घर की पवित्र औरतें तो क़ैदी बना ली गईं लेकिन अल्लाह का दीन हमेशा हमेशा के लिए आज़ाद हो गया। हज़रत अब्बास का अलम दरिया किनारे गिरा तो लेकिन इस्लाम का ध्वज बन कर इस तरह उठा कि आज सारे विश्व में करोड़ों हाथ इस को थामें हुए हैं।

यज़ीदी सेना का पहला हमला

नौ मोहरर्म के दिन हज़रत अब्बास के नेतृत्व में इमाम हुसैन के 72 सैनिकों की फ़ौज कर्बला के सहरा में शदीद (कड़ी) प्यास में एक ऐसी लड़ाई के लिए रणनीति बना रही थी जिसमें तलवारें ख़ून से मात खाने वाली थीं। बच्चों के लिए पानी का इन्तिज़ाम (प्रबन्ध) करना इस सेना की पहली तर्जीह (सर्वोच्च प्राथमिकता) थी लेकिन यह लोग अपने पवित्र युद्ध को पानी के लिए किए गए युद्ध का नाम भी नहीं देना चाहते थे। यज़ीद के सेना की सारी टुकड़ियां आ चुकी थीं और अब इस की संख्या हज़ारों के बजाए लाख का आंकड़ा पार कर चुकी थी। दिन भर सलाह मशविरे और युद्ध की तैयारी में गुज़रा। अस्र (तीसरे पहर) की नमाज़ के बाद हुसैनी लशकर के सैनिक ज़रा देर के लिए अपने ख़ेमों में आराम के लिए तशरीफ़ ले गए। ख़ुद इमाम हुसैन भी एक कुर्सी पर तशरीफ़ फ़र्मा (बैठे) थे मौला ने थोड़ी देर के लिए अपने घुटनों पर सिर रखा तो आंख लग गई। मौला की आंख लगते ही उनके नाना पैग़म्बर हज़रत मोहम्मद, वालिद (पिता) हज़रत अली, मां हज़रत फ़ातिमा और बड़े भाई इमाम हसन उनके ख़्वाब में आए और इमाम हुसैन से कहा ''हुसैन तुम हम से कल आ मिलोगे।''

इसी बीच अचानक फ़ौज-ए-यज़ीद की तरफ़ से हमला कर दिया गया। हुसैनी सिपाही जल्दी जल्दी हथियार संभालने लगे और युद्ध के वस्त्र पहनने लगे। हज़रत अब्बास ने जल्दी से इमाम हुसैन को इस की हमले की ख़बर दी तो इमाम हुसैन उठ ख़ड़े हुए और बोले ''चलो हम दोनों मिल कर चलें और इन से पूछें कि क्यों आए हो?'' हज़रत अब्बास ने कहा ''नहीं मौला आप ज़हमत न कीजिये मैं अकेला जाऊंगा।'' यह सुन कर इमाम ने कहा '' अच्छा भाई तुम घोड़े पर सवार हो कर जाओ और उन लोगों से पूछो कि तुम्हें क्या हो गया है ख़ैर तो है क्यों आए हो?'' हज़रत अब्बास अपने साथ हज़रत ज़ुहैरे क़ैन व हबीब इब्ने मज़ाहिर जैसे शूर वीरों और 20 दूसरे सैनिकों को ले कर मैदान में पहुंचे और उनसे पूछा ''क्या बात है क्या इरादा रखते हो?'' यज़ीदी सैनिकों ने

कहा ''अभी अभी शासक का आदेश आया है कि हम तुम्हारे सामने यह बात पेश करें कि तुम (बैयत करने का) यज़ीद का आदेश मानो या फिर हम से लड़ो। हज़रत अब्बास ने कहा कि थोड़ी देर रुको मैं अपने आक़ा हुसैन से बात करके अभी आता हूं। हज़रत अब्बास इमाम हुसैन से बात करने के लिए ख़ेमों की तरफ़ चले गए लेकिन हुसैन के 20 सैनिक हज़रत हबीब और हज़रत ज़ुहैर के साथ मैदान में डटे रहे। हज़रत अब्बास ने वापस आकर इमाम हुसैन को सारी बात बताई तो इमाम हुसैन ने कहा ''ए अब्बास! वापस जाओ और अगर हो सके तो लड़ाई को कल तक के लिए रोक दो। इन लोगों को आज की रात हम लोगों से दूर करो ताकि हम आज की रात और नमाज़ें पढ़ लें और अल्लाह की इबादत में कुछ और वक़्त गुज़ार लें। ख़ुदा बेहतर जानता है कि मैं नमाज़, क़ुरआन की तिलावत और दुआ करने को कितना दोस्त रखता हूं।'' हज़रत अब्बास ने वापस आकर कहा ''आज जंग न करो कल तुम्हारा जो जी चाहे कर लेना,,, हमें नमाज़ और इबादत के लिए समय चाहिए है।'' यज़ीदी सैनिकों व अधिकारियों में एक रात का समय दिए जाने के मामले पर पहले तो वाद विवाद हुआ लेकिन बाद में वह लोग एक रात की मोहलत (समय) देने पर राज़ी हो गए।

शबे आशूर

10 मोहरर्म की रात को शबे आशूर कहा जाता है। ऐसी रात दुनिया में न तो इस से पहले कभी आई थी न दोबारा ऐसी रात आएगी। एक तरफ़ 72 लोगों की एक सैनिक टुकड़ी अपने ख़ून में नहाने की तैयारी कर रही थी तो दूसरी तरफ़ लाखों का लश्कर रंग रलियों में मसरूफ़ था। एक तरफ़ भूखे प्यासे मुजाहिद थे तो दूसरी तरफ़ शराब ओ कबाब की महफ़िलें सजी थीं। एक तरफ़ अल्लाह वालों की पवित्र टुकड़ी थी तो दूसरी तरफ़ कुकर्मी, कपाटी और बेरहम हत्यारों का समूह प्यासे मुसाफ़िरों के ख़ून से अपनी तलवारों की प्यास बुझाने के तैयारियां कर रहा था। एक तरफ़ शहादत, कामयाबी, और कभी न ख़त्म होने वाली विजय थी तो दूसरी तरफ़ विनाश, मौत और हमेशा के लिए हाथ आने वाली शिकस्त थी।

साथियों को वापस चले जाने की सलाहः- इसी बीच इमाम हुसैन ने अपने सभी साथियों और रिश्तेदारों को जमा किया और अपने ख़ेमे के चिराग़ बुझा दिए। अन्धेरा करने के बाद इमाम ने इन लोगों से कहा ''ए मेरे असहाब (साथियों)! मैं सच कहता हूं कि मेरे असहाब से ज़्यादा बेहतर असहाब मुमकिन नहीं हैं और मेरे अहले बैत (परिवारजनों) से उम्दा (अच्छे) और लायक़ (सुशील) अहले बैत का इमकान (सम्भव) नहीं। ए मेरे अक़रबा (रिश्तेदारो) और असहाब (साथियो) ख़ुदा तुम को जज़ा-ए-ख़ैर (उचित पुरस्कार) दे मगर मैं यह कहे बिना नहीं रह सकता कि मैं अपनी बैयत (वफ़ादारी की शपथ) तुम पर से हटाता हूँ। तुम लोग मुझे छोड़ कर जा सकते हो और अपने मित्रों से यह भी कहता हूं कि तुम लोग मेरे एक-एक रिश्तेदार को भी अपने साथ लेते जाओ। मैं ने तुम्हें इजाज़त दे दी है और तुम सब के सब मेरी तरफ़ से आज़ाद हो। इस वक़्त रात का परदा हाएल (पड़ा) है तुम अन्धेरे में किसी तरफ़ भी चले जाओ मै तुम्हें यक़ीन दिलाना चाहता हूं कि यह क़ौम (यज़ीदी) सिर्फ़ मेरा ख़ून बहाना चाहती है जब यह लोग मुझे क़त्ल कर लेंगे तो फिर किसी और की तरफ़ रुख़ भी नहीं करेंगें।'' इमाम की इस तक़रीर के बाद सबसे पहले हज़रत अब्बास ख़ड़े हुए और बोले कि ''हम ऐसा किस लिए करें? क्या इस लिए कि आपके बाद ज़िन्दा रहें? हर्गिज़ नहीं,,,ख़ुदा वह बुरा दिन हम को कभी न दिखाए।'' उनके बाद अनेक रिश्तेदारों और साथियों ने इमाम और उनके मक़सद (उद्देश्य) पर से बार बार निसार हो जाने की बात कही और अन्धेरे ख़ेमे में चारों तरफ़ वफ़ा की रौशनी फैल गई। इसी मौक़े के लिए हुसैनी शायर फ़ज़ल नक़वी ने कहा है।

ज़माना कब समझता था शबे आशूर से पहले
चिराग़ों को बुझाने से उजाला और होता है

इमाम हुसैन के ख़ेमे में रात भर इबादत और दुआ की आवाज़े आती रहीं कुछ इतिहासकारों का कहना है कि यज़ीद की सेना के लगभग 30 सिपाही रात को टोह लेने के लिए इमाम हुसैन के ख़ेमों के क़रीब आए तो उन्होंने ऐसी आवाज़ सुनी जैसी कि मधुमखियों के छत्ते से

आती है। इन लोगों ने झांक कर देखा तो हैरान रह गए हर व्यक्ति नामाज़ और इबादत में मसरूफ़ था। इस टोही दल पर इसका इतना प्रभाव पड़ा कि यह लोग इमाम हुसैन की सेना में शामिल हो गए इसी कारण से कर्बला मे इमाम हुसैन के साथ शहीद होने वालों की संख्या इतिहास में कहीं कहीं 103 भी मिलती है लेकिन अधिकतर उलेमा इसी बात पर सहमत है कि कर्बला में शहीदों की संख्या सिर्फ़ 72 थी।

प्यासे बच्चों की हालतः- ख़ेमे में पानी न होने के कारण इमाम हुसैन के परिवार के छोटे छोटे बच्चे बार बार अल अतश (हाय प्यास) की आवाज़ बुलन्द कर रहे थे। इमाम हुसैन की छोटी बेटी हज़रत सकीना ने इस रात में ख़ेमे के अन्दर पानी न होने का मन्ज़र इस प्रकार ब्यान किया है '' नवीं मोहरर्म का दिन गुज़र जाने के बाद जब रात आई तो पानी की एक बून्द तक मौजूद न होने के कारण हम लोग मौत के क़रीब पहुंच गए और ख़ुश्क बरतनों और मश्कों की तरह हमारी ज़बानें भी सूख गईं ऐसी हालत हो गई जो बर्दाशत के क़ाबिल नहीं थी। इस लिए मैं कुछ दूसरे बच्चों के साथ अपनी फुफी (पिता की बहन) हज़रत ज़ैनब के पास गई ताकि उनसे अपनी हालत बयान करूं। हम जब उनके ख़ेमे में पहुंचे तो देखा कि वह कभी ख़ड़ी हो जाती थीं और कभी बैठ जाती थीं और मेरा (6 महीने का) भाई अली असग़र उनकी गोद में इस तरह तड़प रहा था जैसे कि मछली पानी के बाहर तड़पती है। वह मेरे भाई से कहती जाती थी ''ए मेरे भाई के लाल (बेटे) ज़रा सब्र करो,,'' वह यह भी कहती थीं ''मैं जानती हूं कि तुझे सब्र कैसे आ सकता है जबकि (प्यास के कारण) तेरी यह हालत है। ऐ बेटा क्या करूं? इस बात से मुझे सख़्त तकलीफ़ है कि मैं तेरी यह हालत देखती हूं और कुछ कर नहीं सकती।'' हज़रत सकीना आगे कहती हैं ''जब मैने फुफी जान की बातें सुनी और अपने भाई की यह हालत देखी तो मैं भी रो पड़ी। जब मुझे फुफी ने रोते हुए देखा तो मुझ से कहा कि क्यों रो रही हो तो मैं ने सोचा कि अगर मैं अपनी प्यास का हाल उन्हें बताऊंगी तो वह ज़्यादा परेशान हो जाएंगी। मैं ने उनसे कहा ''ए फुफी जान! अगर आप अन्सार (इमाम हुसैन के साथियों) के ख़ेमों में किसी

को भेजें तो शायद किसी के यहां थोड़ा पानी बचा हुआ मिल जाए। यह सुन कर फुफी ज़ैनब ने अपने सिर पर चादर डाली अली असग़र को गोद में लिया। खुद मेरी उंगली पकड़ी और कई ख़ेमों में तशरीफ़ ले गईं लेकिन कहीं पानी का कोई क़तरा नहीं मिला। पानी की इस तलाश के दौरान हमारे साथ तक़रीबन (लगभग) 20 बच्चे जमा हो गए जो सब के सब बहुत प्यासे थे।''

पानी लाने की एक कोशिशः- बच्चों की यह हालत देख कर इस रात में इमाम हुसैन के कुछ जांनिसारों ने वफ़ादारी और मानवता की एक नई दास्तान लिखी। हज़रत सकीना कहती हैं ''सारे बच्चे प्यास के कारण ख़ेमों में रो रहे थे कि अचानक उधर से इमाम हुसैन के एक मित्र हज़रत बुरैर-ए-हमदानी गुज़रे। उन्होंने जब हमारी यह हालत देखी तो बेसाख़्ता (फूट फूट कर) रोने लगे और अपने सिर पर ख़ाक डालते हुए दूसरे असहाब से मिले और उनसे कहा ''बड़े अफ़सोस की बात है कि हमारे हाथ में तलवारें होने के बावजूद पैग़म्बर हज़रत मोहम्मद के परिवार के बच्चे प्यास से मरे जा रहे हैं? मेरे दोस्तो! अगर हम उन्हें पानी नहीं पिला सके तो वह प्यास से मर जाएंगे तो इस से तो बेहतर यह है कि हम लोग मौत को अपने गले लगा लें। मेरी राय यह है कि हम लोग इन बच्चों का हाथ पकड़ें और इन्हें नहर पर ले चलें और इन्हें सेराब करने (पानी पिलाने) की कोशिश करें।'' यह सुन कर इमाम हुसैन के एक और मित्र यहिया माअज़नी बोले ''मेरे ख़्याल में बच्चों को नहर पर ले जाना मुनासिब (उचित) नहीं है क्योंकि दुश्मन हमला ज़रूर करेंगें और अगर इस हमले में कोई बच्चा शहीद हो गया तो हम लोग उस के ज़िम्मेदार ठहराए जाएंगे इस से बेहतर तो यह है कि मश्कें ले लो और नहर पर चल कर पानी हासिल करो। पानी मिल जाने पर इन बच्चों को सेराब करो (पानी पिलाओ)।''

हज़रत यहिया माअज़नी की राय सब ने पसन्द की और हज़रत बुरैर-ए-हमदानी की क़यादत (नेतृत्व) में अज़द क़बीले के सिर्फ़ चार लोग मश्कें ले कर नहरे फ़ुरात की तरफ़ चल पड़े। जब यह लोग फ़ुरात पर पहुंचे तो पहरेदारों ने आवाज़ दी ''कौन है?'' इस पर हज़रत बुरैर

ने जवाब दिया ''मैं बुरैर हूं और यह मेरे सहाबी और हमराही हैं।'' पहरेदारों ने फिर पूछा ''क्यों आये हो?'' हज़रत बुरैर ने कहा ''पानी पीने और ले जाने के लिए आए हैं।'' इस पर पहरेदार ने कहा ''ठहरो अपने सरदार से पूछ लें तभी पानी पीने की इजाज़त मिलेगी।'' एक पहरेदार नहर के सरदार इसहाक़ बिन हैयशूरा के पास गया और उस से कहा कि बुरैर हमदानी अपने साथियों के साथ पानी लेने आए है इसहाक़ का भी अज़द क़बीले से ही ताअल्लुक़ रखता (समबन्धित) था। उस ने कहा कि बुरैर जितना पानी चाहे पी लें लेकिन पानी ले जाने की इजाज़त नहीं है। इस बीच हज़रत बुरैर अपने साथियों समेत नहर में उतर गए। बुरैर व उनके साथियों की वफ़ादारी का यह अद्‌भुत नमूना था कि पानी के अन्दर उतरने के बावजूद पानी नहीं पिया। हज़रत बुरैर ने अपने साथियों से कहा ''जल्दी जल्दी मश्कें भर लो क्योंकि इमाम हुसैन के छोटे छोटे बच्चों के दिल प्यास की गर्मी से झुलसे जा रहे है।'' बुरैर की बातें एक दुश्मन ने सुन लीं और उसने पुकार कर कहा ''तुम को सिर्फ़ पानी पीने की इजाज़त दी गई है तुम पानी ले कर नहीं जा सकते। मैं इसहाक़ को इस की जानकारी देता हूं लेकिन यह भी सुन लो कि अगर उसने तुम को रिश्तेदारी की वजह से इजाज़त दे भी दी तब भी मैं पानी ले जाने नहीं दूंगा।'' हज़रत बुरैर ने उसको समझाने की कोशिश की लेकिन वह न माना और उस ने नहर के सरदार इसहाक़ को ख़बर कर दी। इसहाक़ ने आदेश दिया कि उन्हें पानी ले जाने से रोका जाए और अगर ना मानें तो उन्हें गिरफ़्तार कर लिया जाए और सारा पानी मश्कों से बहा दिया जाए। दुश्मन का आदमी आया और उसने मश्कों का पानी बहाने का आदेश दिया। हज़रत बुरैर ने कहा ''ख़ुदा की क़सम मैं पानी बहा देने से अपना ख़ून बहा देना बेहतर समझता हूं। मैं ने एक क़तरा पानी भी नहीं पिया हमारा मक़सद (उद्देश्य) सिर्फ़ ख़याम हुसैनी (हुसैन के शिवरों) तक पानी पहुंचाना है। जब तक दम में दम है कोई हमारी मश्कों को जी भर के देख भी नहीं सकता।''

इसके बाद दुश्मन की सेना ने इन लोगों को चारों तरफ़ से घेर लिया।

इन बहादुरों ने अपनी मश्कों को ज़मीन पर रख दिया और उनके चारों तरफ़ घुटने टेक कर ख़ड़े हो गए। दुश्मन ने तीर बरसाना शुरू कर दिए। एक बहादुर ने एक मश्क उठा कर कान्धे पर रख ली और चाहा कि जल्दी से निकल कर इमाम हुसैन के ख़ेमों तक पहुंच जाए इतने में एक तीर कान्धे पर आकर लगा। मश्क का तस्मा कट गया और ख़ून बह कर पैरों तक पहुंच गया। इमाम हुसैन के जांनिसार ने कहा ''तमाम तारीफ़ें उस ख़ुदा के लिए हैं जिस ने मेरी गर्दन को मश्क के लिए सिपर (ढाल) बना दिया।'' हज़रत बुरैर ने दुश्मनों से कहा ''देखो अभी तक हमारी तलवारें नियाम (मियान) में सो रही हैं उन्हें बेदारी (जागने) का मौक़ा न दो वर्ना बड़ी ख़ूंरेज़ी (रक्तपात) होगी। इस पर दुश्मनों ने कहा '' हम ने हुसैन और उनके बच्चों पर पानी हराम (प्रतिबन्धित) कर दिया है यह नामुमकिन (असम्भव) है कि तुम पानी ले जा सको।'' दोनो तरफ़ से तकरार बढ़ी और दुश्मन की तरफ़ से चीख़ना चिल्लान तेज़ हुआ तो इमाम हुसैन के ख़ेमों तक आवाज़ें पहुंचीं यह आवाज़े सुन कर हज़रत इमाम हुसैन ने कहा ''ऐ अब्बास कुछ लोगों को ले कर बुरैर की मदद को पहुंचो वह दुश्मनों में घिर गए हैं।'' हज़रत अब्बास अपने साथ अपने भाईयों और कुछ साथियों को ले कर नहर पर हज़रत बुरैर की मदद के लिए पहुंचे।

यह देख कर उमर बिन हज्जाज ने अपने सैनिकों को आदेश दिया कि यद्यपि रात का अन्धेरा है लेकिन तीर चलाना शुरू कर दो। उसके आदेश पर तीरों की बारिश शुरू हो गई। तीरों की बारिश के बीच इमाम हुसैन के मित्र मश्कों को बचाने की कोशिश में लगे रहे और कई लोग घायल भी हुए इसी युद्ध में इमाम हुसैन के एक भाई जिनका नाम हज़रत अब्बास-उल-असग़र (छोटे अब्बास) था शहीद हुए। हज़रत हुसैन की तरफ़ से कर्बला के मैदान में अब्बास-उल-असग़र की शहादत के साथ ही क़ुर्बानी देने का सिलसिला शुरू हो गया।

तीरों की इस बारिश में ऐसा लगता है कि यह लोग केवल एक मश्क ही बचा पाए थे। क्योंकि इतिहास में मिलता है कि हज़रत बुरैर और उनके साथी उस मश्क के आगे आगे चल रहे थे जो ख़ुद हज़रत बुरैर ने

अपनी गर्दन में लटका रखी थी। उन सब की एक ही कोशिश थी कि कोई तीर मश्क पर लगने न पाए। इसी बीच एक तीर एक बहादुर के सीने को पार करने के बाद हज़रत बुरैर की गर्दन में लगा। सब घबरा गए और समझे कि तीर मश्क पर लगा लेकिन हज़रत बुरैर ने मुस्कुरा कर कहा कि मश्क बच गई अल्लाह का शुक्र कि तीर मेरी गर्दन पर लगा इस तरह पानी की एक मश्क हुसैन के ख़ेमें तक पहुंच गई।
हज़रत बुरैर मश्क लिए हुए ख़ेमों के क़रीब आए और पुकार कर कहा ''ऐ पैग़म्बर हज़रत मोहम्मद के छोटे छोटे बच्चो! आओ,,, पानी आ गया,,ख़ुशी से पियों।''
यह ख़बर सुन कर बच्चों में शोर मच गया और वह एक दूसरे को पुकारने लगे ''आओ आओ बुरैर पानी लाए हैं'' तमाम बच्चे दौड़ पड़े। कुछ बच्चों ने अपने को मश्क पर गिरा दिया। कुछ अपने रुख़सार और आंखें उस पर मलने लगे कुछ बच्चे मश्क की ठण्डक को अपने हाथों से छू कर महसूस करने लगे। मश्क पर इतना दबाव पड़ा कि मश्क का सारा पानी बह गया और सब ने मिल कर आवाज़ दी ''अरे बुरैर पानी बह गया।'' बुरैर अपना मुंह पीट कर कहने लगे ''हाय कितनी मेहनत से पानी मिला लेकिन अतफ़ाले ख़ान्दाने रिसालत (हज़रत मोहम्मद के परिवार के बच्चे) प्यासे ही रहे।'' यह भी हो सकता है कि इस मश्क में जो पानी लाया गया उसमें घायल सिपाहियों का ख़ून मिल गया हो और जब ख़ेमों की रौशनी में देखा गया हो तो बच्चे उसे पी नहीं सके और शायद प्यासे बच्चे अपने हाथों से पानी को छू कर यह एहसास कर रहे हों कि ठण्डा पानी कैसा लगता है।

आशूर की सुबह

दस तारीख को अरबी में आशूर कहा जाता है। सन 61 हिजरी में जिस दिन कर्बला के सहरा में इमाम हुसैन और यज़ीद की सेनाएं टकराईं उस दिन मोहरर्म माह की दस तारीख़ थी
यह एक ऐसा दिन था जिस दिन छोटे छोटे बच्चे बच्चे प्यासे शहीद होने वाले थे। उस दिन तो सूरज का बस भी चलता तो वह उदय न होता लेकिन सुबह की पहली किरन फूटने से पहले ही इमाम हुसैन के

मंझले बेटे हज़रत अली अकबर ने अज़ान दी।

यह सोच कर कि देखे न आशूर की सहर
सूरज ज़मीं से दूर बहुत दूर हो गया
सूरज तो चाहता था अन्धेरों में गुम रहे
अकबर ने दी अज़ान तो मजबूर हो गया।

अम्न की आख़िरी कोशिशः- इधर हज़रत अली अकबर की अज़ान ख़त्म हुई और उधर दस मोहरर्म का सूरज निकला। दोनों तरफ़ की सेनाएं लड़ाई की तैयारी में लग गईं। तब इमाम हुसैन ने एक इमाम होने का दायित्व निभाते हुए दुशमनों के सामने आख़री बार अम्न का प्रस्ताव रखा और उन ज़ालिमों के दिलों को पिघलाने का अन्तिम प्रयास किया। हज़रत हुसैन एक ऊंटनी पर सवार हुए (जो अरब जगत में शान्ति का प्रतीक थी वहां के लोग जब लड़ने जाते थे तो घोड़े पर बैठ कर जाते थे लेकिन अम्न की बात करने के लिए अरब वासी ऊंटनी पर बैठ कर युद्ध स्थल में जाया करते थे ताकि दूर से ही देख कर सैनिकों को अन्दाज़ा हो जाए कि दूसरे दल से निकल कर आने वाला व्यक्ति अम्न का सन्देश ला रहा है।) पवित्र क़ुरआन को अपने हाथ में लिया और यज़ीदी सैनिकों के सामने आ कर उन्हें सम्बोधित करते हुए कहा ''ए लोगो मेरी बात सुनो और मेरे क़त्ल में जल्दी मत करो,,,जब तक कि मैं उन बातों की नसीहत न कर दूं जो (एक इमाम होने के नाते) तुम तक पहुंचा देना मेरा कर्तव्य है। अगर तुम ने मेरी बातें क़ुबूल कर लीं तो तुम मुझ पर ज़ुल्म करने से बाज़ रहोगे और दुनिया व आख़िरत में (मृत्यु के बाद) कामयाब रहोगे लेकिन अगर तुम मेरी नसीहत न सुनो और इन्साफ़ से काम न लो तो फिर तुम अपने साथियों को एकत्रित करके अपने काम को पूरा करो ताकि तुम्हारे काम की असलियत छुपी न रह जाए। उसके बाद जो बर्ताव मेरे साथ करना हो करो। मुझे मोहलत न दो मेरा मालिक वही अल्लाह है जिसने पवित्र क़ुरआन धरती पर भेजा है और जो अच्छे आचरण वाले लोगों को पसन्द करता है।''

इमाम हुसैन का इतना ही भाषण हुआ था कि उनके ख़ेमें में औरतें रोने लगीं तो इमाम ने हज़रत अब्बास को भेजा कि वह इन लोगों को रोने से

मना करें। हज़रत अब्बास अन्दर गए और सब महिलाओं को चुप करवाया। उसके बाद इमाम ने फिर अपना भाषण शुरु किया और दुश्मनों को वह सारी कठिनाइयां याद दिलाईं जो पैग़म्बर साहब और उनके परिवार जनों ने इस्लाम को फैलाने के दौरान बर्दाशत कीं। इमाम ने पैग़म्बर साहब से अपनी रिश्तेदारी, हज़रत मोहम्मद के (उनके प्रति) स्नेह और हज़रत मोहम्मद की वह हदीसें (कथन) याद दिलाईं जो उन्होंने इमाम हुसैन की शान में बयान की थीं। फिर उन्होंने दुश्मन के सैनिकों से पूछा '' अरे यह तो बताओ कि तुम लोग मुझे क्यों क़त्ल कर रहे हो? क्या मैं ने कोई सुन्नत (पैग़मबर साहब का अनुसरण करने का तरीक़ा) बदल दी है? क्या शरीयत का कोई क़ानून बदल दिया है? तुम्हारा कोई अधिकार छीन लिया है? क्या मैं ने तुम मे से किसी को क़त्ल किया है? किसी का माल छीना है?'' फिर उन्होंने क़ुरआन शरीफ़ सामने रख कर कहा ''यह क़ुरआन हमारे तुम्हारे बीच में है तुम सोचो कि तुम्हें क्या करना चाहिए?'' दुश्मनों की तरफ़ से कोई नहीं बोल सका सिर्फ़ शिम्र ने इतना कहा ''ख़ुदा की क़सम हम सुनते ही नहीं तुम क्या कह रहे हो।'' इमाम को मालूम था कि वह पत्थर दिल लोग उन्हें क़त्ल ज़रूर करेंगे लेकिन वह चाहते थे कि कोयले की कान में दबा हुआ कोई हीरा अगर हो तो वह इसी कोयले के ढेर में जल कर राख न हो जाए।

हुर का आगमनः- इमाम की इस तक़रीर के बाद दुनिया ने कर्बला की धरती पर अजब मन्ज़र देखा। यज़ीद का ख़ास सैन्य अधिकारी हुर इब्ने यज़ीद रियाही (जिस ने इमाम हुसैन रास्ता रोका था) उमरे सअद से पूछ रहा था ''क्या तू हुसैन के क़त्ल से बाज़ नहीं आएगा?'' उमरे सअद ने कहा ''हां आज हुसैन वालों के साथ ऐसा युद्ध करूंगा कि उनके जिस्मों से सिर और पैर अलग हो जाएंगे।'' हुर ने कहा ''हुसैन ने अपनी तक़रीर में जो बातें कहीं हैं क्या उनमें से एक भी क़ुबूल किए जाने के क़ाबिल नहीं?'' उमरे सअद ने कहा ''अगर हुकूमत मेरे हाथ में होती तो ग़ौर करता लेकिन क्या करूं इब्ने ज़ियाद का हुक्म है।''

उमरे सअद का जवाब सुन कर हुर अपने बेटे के साथ यज़ीद की सेना

को छोड़ कर इमाम हुसैन की सेनाओं की तरफ़ सिर को झुकाए इस तरह चला कि सारा बदन कांप रहा था। एक साथी ने हुर का मज़ाक़ उड़ाते हुए कहा ''ए हुर मैं ने तेरी ऐसी हालत कभी नहीं देखी अगर मुझ से कोई पूछता कि कूफ़े में सब से ज़्यादा बहादुर कौन है तो मैं तेरा नाम लेता लेकिन इस वक़्त मै तेरी जो हालत देख रहा हूं वह मैंने किसी जंग में नहीं देखी।'' हुर ने कहा ''मैं जंग के ख़ौफ़ से नहीं कांप रहा हूं बल्कि मेरे पीछे दोज़ख (नर्क) और सामने जन्नत है लेकिन मैं जन्नत को ही चुनने वाला हूं चाहे मेरे बदन को टुकड़े टुक्ड़े कर दिया जाए।''

एक ओर हैं दोज़ख़ के शोले एक सिम्त जिनाँ का मन्ज़र है
हुर निकला है किस बस्ती से आंखों में कहाँ का मन्ज़र है।

हुर और उसके बेटे ने दौलत की लालच और दुनिया के मोह से ख़ुद को मुक्त करके इमाम हुसैन के उस क़ाफ़िले को अपना लिया जिसके पास इस्लाम, क़ुरआन, सत्य, अहिंसा, बलिदान, धैर्य, सब्र, और सहनशीलता की दौलत थी। हुर ने इमाम हुसैन के क़दमों में सिर रख कर कहा ''ख़ुदा मुझ पर लानत करे। मैं ही वही शख़्स हूं जिसने आप को राह से वापस जाने नहीं दिया और आप को यहाँ आने पर बाध्य किया। मुझे नहीं मालूम था कि यह लोग आपके साथ ऐसा सुलूक करेंगें। अब मैं तौबा करके आप के पास आया हूं और मरते दम तक आप का साथ न हीं छोड़ूंगा। क्या आप मेरी ख़ता माफ़ करेंगे?''
इमाम ने हुर के चेहरे पर मोहब्बत से हाथ फेरा और गले से लगा कर कहा ''ए हुर इन्सान जैसा भी गुनाह करे लेकिन जब वह तौबा करता है तो अल्लाह उसके गुनाहों को माफ़ करता है।'' फिर इमाम ने कहा ''ए हुर तेरी मां ने तेरा नाम बहुत अच्छा रखा (हुर का अर्थ होता है आज़ाद) तू दुनिया में भी हुर है और आख़िरत में भी तू आज़ाद रहेगा।'' थोड़ी देर पहले तक जो आदमी सिर्फ़ हुर था वह हुसैन के लश्कर में शामिल हो कर हज़रते हुर बन गया। वह एक ऐसे लशकर में शामिल हो चुका था जिसके सिपाहियोंके चेहरों पर ईमान की चमक, दिल में मज़्लूमियत की कसक, आंखों में आस और होंटों पर प्यास थी लेकिन उनके चेहरों

का नूर (तेज) देख कर ख़ुद सूरज भी हैरान था।

सुबहे आशूर था यह देख के शशदर सूरज
एक सहरा में थे एक साथ बहत्तर सूरज

इन पाक ओ पाकीज़ा चेहरों का केन्द्र थे इमाम हुसैन और इमाम की उम्मीदों का केन्द्र थे हज़रत अब्बास जिन्हें इमाम हुसैन ने अपना अलमदार (सेनापति) बनाया था। इन्हीं चमकते चेहरों के बीच एक अलम (हुसैनी ध्वज) शान और शौकत के साथ यह एलान कर रहा था कि मेरी चमक के आगे सूर्य का प्रकाश भी फीका पड़ जाएगा।

आज चमकेगा फ़क़त एक अलम का पन्जा
आज शर्मिन्दा बहुत होगा निकल कर सूरज

अलम व अलम दारी

अलम का अर्थ ध्वज अथवा परचम होता है। हर देश, धर्म, सेना, और क़ौम अपने लिए एक ध्वज चुनती है और यही उसकी शान का प्रतीक होता है। हम सब जानते हैं कि इसी ध्वज की इज़्ज़त के लिए लोग अपनी जान की बाज़ी लगा देते हैं। अपने देश का ध्वज मरने के बाद लाश पर रख कर अक्सर बड़े बड़े सैनिकों का और वीरों का सम्मान किया जाता है। हर देश में राष्ट्रीय ध्वज का सम्मान करना उस देश के निवासियों के लिए अनिवार्य होता और उसका अपमान करने पर सज़ा दी जाती है लेकिन राष्ट्रीय ध्वज और राजनीतिक पार्टियों के झंडे में काफ़ी फ़र्क़ होता है। किसी राजनीतिक पार्टी के झंडे का कोई सम्मान करे या न करे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता है।

देश, क़ौम या सेना के ध्वज का गिर जाना या झुक जाना अपमान का प्रतीक है जबकि किसी के मृत व्यक्ति के प्रति सम्मान व्यक्त करने के लिए खुद से ध्वज को झुकाना सम्मान का प्रतीक समझा जाता है। आम तौर पर हर देश में दो ध्वज होते है एक राजकीय और दूसरा सेना के लिए। हमारे देश में भी ऐसा ही है तिरंगा तो भारत का परचम है लेकिन तीनों भारतीय सेनाओं के अलग अलग परचम भी हैं जिनके बीच में

छोटा सा एक तिरंगा भी बना होता है।

अरब देशों में परचम तथा अलम को रायत और लिवा कहा जाता था। उस समय हर बादशाह का अपना ध्वज होता था और उसी को देश का ध्वज समझा जाता था।

इस्लामी ध्वज को लिवा-ए-मोहम्मद या लिवा-ए-इस्लाम कहा जाता था लेकिन मुस्लिम सेना के अलग अलग भागों में जो ध्वज होता था उसको रायत कहा जाता था। वैसे इन दोनों में कोई ज़ियादा फ़र्क़ नहीं है।

अलमदारीः- अरबों में किसी सेना का लिवा या रायत उठाना एक बहुत सम्मान जनक पद था। यह पद बड़े से बड़े योद्धा और सेनानी के हाथ में सौंपा जाता था। इसी व्यक्ति को अलमदार कहा जाता था यही व्यक्ति सेनापति की भूमिका निभाता था और हार जीत का सेहरा भी उसी के सर बन्धता था। पैग़म्बर हज़रत मोहम्मद की सेना में यह पद अधिकतर उनके परिवार के सबसे बड़े वीर हज़रत अली के हाथ में रहा। एक आध युद्ध में हज़रत अली नहीं थे तो यह पद परिवार के ही दूसरे लोगों को मिला।

हज़रत अब्बास के पिता हज़रत अली ने कभी भी किसी जंग में इस्लामी ध्वज को झुकने नहीं दिया बल्कि उनके हाथों में अलम होने का मतलब ही यह होता था कि इस्लाम एक बार फिर से विजयी होने वाला है। हज़रत अली के हाथों में अलम देख कर ही बड़े बड़े कुशल योद्धा अपनी हार सुनिश्चित समझने लगते थे। हज़रत अली ने बहुत ही कठिन वक़्त में हज़रत मोहम्मद को सुरक्षा प्रदान की और हज़ारों की सेना को अकेले अपने दम पर पराजित किया। हज़रत मोहम्मद भी हर कड़े वक़्त और संकट की घड़ी में हज़रत अली को आवाज़ देते थे। जिस के कारण उनको मुश्किल कुशा (कठिनाइयाँ दूर करने वाला) कहा जाने लगा और हज़रत अली मनुष्यों के लिए सहायता का प्रतीक बन गए। इसी कारण आज भी करोड़ों लोग मुश्किलों में 'या अली मदद' कह कर हज़रत अली से सहायता माँगते हैं। हज़रत अब्बास वीरता में अपने पिता के जैसे ही थे। इसी लिए इमाम हुसैन ने उनको अपना सेनापति और अलमदार बनाया।

हज़रत अब्बास के हाथों में इस्लाम का अलम था इस के विपरीत यज़ीदी सैनिकों के पास इस्लामी ध्वज नहीं बल्कि बनी उम्मैया के झंडे थे। हज़रत अब्बास के हाथों में जो ध्वज था वह केवल लिवाए हुसैन ही नहीं बल्कि लिवाए मोहम्मद भी था। जिसके साए में शान्ति, मानवता और सत्य ने पनाह ले रखी थी जबकि यज़ीद की सेना के हाथों में ऐसे झण्डे थे जिनके नीचे असत्य, हिंसा और आतंक के नाग फन उठाए खड़े थे।

अलम का शब्द उर्दू और फ़ारसी भाषा में उसी ध्वज के लिए इस्तेमाल होता है जो कर्बला की जंग में हज़रत अब्बास के हाथों में था। किसी भी देश या दल के झण्डे को हुसैनी समुदाय के लोग अलम नहीं कहते क्योंकि यह नाम कर्बला की क़ुर्बानी का प्रतीक बन गया है। जैसे कि अपने देश के झण्डे को अलम-ए-हिन्द नहीं बल्कि परचमे हिन्द कहते हैं। अलम और परचम में यही स्पष्ट फ़र्क़ है।

वैसे भी हज़रत अब्बास के अलम और किसी देश के परचम की तुलना नहीं की जा सकती यह दोनो बिल्कुल भिन्न है। नागरिकता बदल जाने से ध्वज का आदर व सत्कार भी बदल जाता है लेकिन कोई भी हुसैनी चाहे भारत में रहे या पाकिस्तान में, ईराक़ वासी हो या ईरान का शहरी हो उसके लिए हज़रत अब्बास का अलम कभी नहीं बदलता।

युद्ध और मानवाधिकारः- हज़रत मोहम्मद द्वारा इस्लाम का प्रचार शुरू करने से पहले अरब में युद्ध अपराधों को भी सम्मान और इज़्ज़त का प्रतीक समझा जाता था। निहत्थे शहरियों तथा औरतों व बच्चों पर अत्याचार करना, लड़ाई में मारे गए लोगों की लाशों को टुकड़े टुकड़े कर उन पर घोड़े दौड़ाना, मरे हुए लोगों के नाक कान काट लेना, लाशों से सिर काट कर उन्हें शहरों शहरों घुमाना, युद्ध के बाद विरोधियों के घरों को जलाना और महिलाओं को अपमानित करना यहां तक कि लाशों को चीर कर उनके जिगर अथवा दिल को भून कर खा जाना अरबों की परम्परा का अटूट हिस्सा था (खुद पैग़म्बर साहब के प्रिय चचा हज़रत अमीर हमज़ा की पवित्र लाश से उनका जिगर निकाल कर यज़ीद की दादी हिन्दह ने चबाया था।) लेकिन इस्लाम की

रौशनी फैलने के बाद इस प्रकार के अपराधों पर पैग़म्बर साहब ने प्रतिबन्ध लगा दिया और उनके ज़माने में जितने भी युद्ध हुए इस्लामी सेना ने उसमें मानवता के सारे उसूलों को पूरी तरह निभाया। हज़रत अली ने अपने शासन काल में यह परम्पराएं भी उसी तरह निभाईं जिस तरह पैग़म्बर साहब ने निभाई थीं। सी लिए पुराने ज़माने में इस्लामी सैनिक सिर्फ़ मैदानों में लड़ाई किया करते थे। शहरों पर हमला न कर के नागरिकों की जान-माल की सुरक्षा करते थे। दुश्मन की फ़ौजें जंग में जैसे भी ग़लत तरीक़े अपनाए मुस्लिम सेना इस्लाम के नियमों का पालन करती थी। मुसलमानों की सेना बन्दियों के साथ अमानवीय सुलूक को निन्दनीय और घृणित अपराध मानती थी। भागते हुए लोगों का पीछा करने को हज़रत अली ने कायरता का प्रतीक बना दिया था। छुप कर या घात लगा कर हमला करना मुसलमानों के लिए नीच काम था। जंग में शामिल न होने वालों पर तलवार नहीं चलाई जाती थी। (मगर आज ख़ुद को जिहादी कहने वाले मुसलमान मस्जिदों में नमाज़ पढ़ रहे लोगों को बम से उड़ा देने को इस्लाम की ख़िदमत समझते हैं। यही लोग राह चलते मुसलमान शहरियों के ख़ून के दरिया बहा कर बड़े गर्व से वेबसाइट पर फ़ोटो दिखाते हैं। औरतों और बच्चों को अग़वा करते हैं और ख़ुद को इस्लाम का सेवक समझते हैं हालांकि यही लोग इस्लाम के सब से बड़े दुश्मन हैं।)

अरबों में लड़ाईयों के समय सेनाएं तीन भागों मैयमना (दाहिने), मैयसरा (बाएं) और क़ल्बे लश्कर (केन्द्र) में बटी होती थीं, हर भाग का एक सरदार होता था जिसके हाथ में एक ध्वज होता था। फ़ौज का सेनापति इन तीनों ही भागों का सरदार होता था। मैयमने और मैयसरे के ध्वजों को रायत और सेना के प्रमुख ध्वज को लिवा कहा जाता था।

उस समय की सेनाओं और आजकल की सेनाओं में बहुत अन्तर है। आजकल ध्वज सेना के साथ तो होता है लेकिन सेनापति उसको नहीं उठाता बल्कि पीछे रह कर रणनीति तय करता है। जबकि पिछले ज़माने में सेनापति हमेशा युद्ध के मोर्चे पर होता था। आज शासक और राजनेता मैदान में नहीं भी होते। लेकिन पुराने ज़माने में शासक (या

उसके परिवार के किसी व्यक्ति) का मैदान में होना अनिवार्य था और मैदान में जंग की रणनीति बनाना उसी का काम होता था। शासक ख़ुद लड़े या न लड़े लेकिन यह सम्भव नहीं था कि सेनापति के बिना कोई सेना मैदान में उतरे या सेनापति ख़ुद युद्ध में हिस्सा न ले।

युद्ध के तौर तरीक़ेः- पिछले ज़माने में युद्ध दो प्रकार का होता था। एक तरीक़ा था जंगे मग़लूबा (सामूहिक) का जिसमें दोनों ओर की सेनाएं एक दूसरे पर झपट पड़ती थी। दूसरा तरिक़ा होता था इन्फ़िरादी या तन ब तन (अकेले व्यक्ति का अकेले व्यक्ति से आमने सामने) जंग का, इस प्रकार के युद्ध में बहुत ही जाने माने योद्धा अकेले मैदान में आते थे और दुश्मन के लश्कर के सामने चुनौती पेश करते थे। विरोधी सेना से भी चुनौती देने वाले सैनिक का समकक्ष योद्धा निकल कर आता। छोटे स्तर के किसी योद्धा की चुनौती कोई बड़ा सेनानी स्वीकार नहीं करता था।

इसके अलाव भी एक तरीक़ा यह होता था कि अपनी हार सुनिश्चित देख कर एक अकेले आदमी पर बहुत सारे सैनिक टूट पड़ते थे लेकिन बात युद्ध के उसूलों के ख़िलाफ़ मानी जाती थी।

रजज़ः- मैदान में अकेला आने वाला योद्धा विरोधी सेना के सामने आकर अपने बुज़ुर्गों का बखान करता था अपने व्यक्तिगत कौशल और साहस के क़िस्से दोहराता था और बताता था कि किस किस युद्ध में उसने भाग लिया और किस नामी गिरामी (प्रसिद्ध) योद्धा को उसने पराजित किया। अपने कारनामों को दुश्मन के सामने बयान करके उस पर मनोवैज्ञानिक दबाव डालने का यह एक प्राचीन तरीक़ा था। इस को अरब में रजज़ (शौर्य-गाथा) पढ़ना कहते थे। चुनौती देने वाले पहलवान या योद्धा की बात सुन कर उसी के स्तर का कोई पहलवान विरोधी सेना से निकल कर आता और उसकी चुनौती को स्वीकार करके अपने बारे में रजज़ पढ़ता उसके बाद दोनों में लड़ाई होती।

युद्ध के अस्त्र-शस्त्र एंव वस्त्रः- उस ज़माने में युद्ध के दौरान बम या बन्दूक़ें इस्तेमाल होने के लिए मौजूद नहीं थी। प्रमुख शस्त्रों में

तलवार के अलावा तीर (बाण) कमान (धनुष) नैज़े (बल्लम) सिनां (भाले) और गुर्ज़ (गदा) इस्तेमाल किये जाते थे। अपनी सुरक्षा के लिए आम सैनिक हाथों में सिपर (ढाल) भी लेते थे मगर नामवर योद्धा ढाल लेने को अपनी शान के ख़िलाफ़ समझते थे और सिर्फ़ तलवार लेकर ही दुश्मन के सामने आते थे।

अपनी सुरक्षा के लिए सिर पर ख़ोद (लोहे की मज़बूत टोपी) पहनने का चलन था और जिस्म पर ज़िरह (लोहे की कड़ियों से बना वस्त्र जो तीरों और तलवारों से बचाता था) और बकतर (यह भी लोहे का बना एक सुरक्षा कवक्ष) होते थे जो सीने और हाथों की हिफ़ाज़त करते।

अधिकतर सैनिक पैदल होते थे और घोड़े सिर्फ़ बड़े बड़े योद्धाओं के पास हुआ करते थे। घोड़ों को घायल होने से बचाने के लिए उनके माथे और सामने के शरीर पर लोहे के कवक्ष सजाए जाते थे। कर्बला के युद्ध में हुसैनी सेना में केवल 32 मुजाहिदों (सिपाहियों) के पास घोड़े थे और 40 लोग पैदल सेना का फ़र्ज़ निभा रहे थे।

हुसैनी सेना की नई रणनीतिः- हज़रत मोहम्मद पर जितनी भी लड़ाईयां थोपी गईं उनमें अधिकतर में ख़ुद हज़रत मोहम्मद मौजूद थे लेकिन कभी भी किसी जंग में न तो वह मैदान में आए न ही उन्होंने कभी तलवार ही चलाई। हज़रत मोहम्मद ने एक अज़ीम तरीक़ा अपना रखा था। जंग के दौरान वह अपने परिवार के सदस्यों को ही सब से आगे रखते थे। इसी लिए जिस युद्ध में हज़रत अली शामिल हुए उसमें सेना की कमान उन्हीं के हाथों में रही और वही हर मोर्चे पर सब से आगे नज़र आए। जिस की वजह से सब से ज़्यादा ख़तरा हज़रत मोहम्मद के सबसे प्रिय सहयोगी और चहिते दामाद हज़रत अली के जीवन को ही रहता था। नहजुल बलाग़ा में हज़रत अली ख़ुद फ़र्माते है ''जंग में ख़तरनाक मौक़ों पर पैग़म्बर हज़रत मोहम्मद अपने परिवार के सदस्यों और रिश्तेदारों को आगे की पंक्ति में रखते थे और उन्हें अपने मित्रों की सिपर (ढाल) बनाते थे।'' अपने प्यारों को आगे रखना एक ख़तरे का काम था लेकिन हज़रत मोहम्मद अपने साथियों व मित्रों को कम से कम ख़तरे में डालना चाहते थे इसी लिए अपने परिवार वालों

की जान को ख़तरे में डाल कर उन्होंने नए आदर्श स्थापित किए। हज़रत अली ने भी पैग़म्बर हज़रत मोहम्मद की पैरवी (अनुसरण) करते हुए हर युद्ध में अपने परिवार वालों को अगले मोर्चों पर रखा।

उन लड़ाइयों में तलवारों को तलवार से मात दे कर इस्लाम को विजय दिलाना थी इस लिए अपने रिश्तेदारों के सीनों को तलवारों के आगे कर के दूसरे मुसलमानों की जान बचाई जा रही थी लेकिन कर्बला की जंग में तलवारों को ख़ून से मात देकर इस्लाम को बचाना था और यहां से कोई ज़िन्दा वापस जाने वाला नहीं था (सिवाए इस्लाम के) । इस लिए कर्बला में इमाम हुसैन और उनके साथियों ने रणनीति में तब्दीली की। उन सब ने यह फ़ैसला किया कि मैदान में इमाम के दोस्त और साथी सब से पहले जाएंगे, फिर बनी हाशिम के सदस्य (ईमाम हुसैन के परिवार वाले) लड़ने के लिए निकलेंगे, उनके बाद हज़रत अली की औलादें शहीद होंगी और सब से आख़िर में इमाम हुसैन अपनी क़ुर्बानी पेश करेंगे। इस परिवर्तन की वजह यह भी थी कि कर्बला की जंग में जो जितनी देर तक जीवित रहता उसकी कठिनाइयाँ और कष्ट उतने ही ज़्यादा बढ़ जाते। एक और कारण यह भी था कि अगर इमाम हुसैन सब से पहले शहीद हो जाते तो इमाम हुसैन के जानिसारों की लड़ाई पर शायद इतिहासकार यह भी लिख देते कि इमाम हुसैन की शहादत के बाद उनके साथियों ने इमाम के क़त्ल का बदला लेने के लिए जंग की। असल में कर्बला में जंग के साथ साथ क़ूवते बर्दाशत (सहनशीलता) का भी मुक़ाबला था।

हज़रत अब्बास के लिए सहनशीलता, संयम और धैर्य का परिचय देना सब से ज़्यादा कठिन काम था क्योंकि अरब जगत में उनका जलाल (ग़ुस्सा) बहुत मशहूर था। हज़रत अब्बास के जलाल का सबसे बड़ा पहलू यह था कि वह कभी भी किसी पर ज़ुल्म होते हुए नहीं देख सकते थे। ज़ालिमों के लिए वह मौत का सन्देश थे तो मज़्लूमों के लिए नई ज़िन्दगी का पैग़ाम,,,लोगों की इच्छाओं को पूरा करना, ग़रीबों की सहायता करना और मज़लूमों की पुकार सुनकर उनकी मदद के लिए पहुंचने का हुनर उन्होंने अपने पिता हज़रत अली से विरासत में पाया

था। इतिहास में उनके जलाल के ज़िक्र से ज़्यादा उनके सब्र और क़ूवते बर्दाशत का ज़िक्र (वर्णन) है।

बस एक इशारे पे सरवर के होता है ख़ामोश
बला का ग़ैज़ ओ ग़ज़ब जिसकी बात बात में है

अब्बास ताजदारे वफ़ाः- हज़रत अब्बास को शंहशाह-ए-वफ़ा, ताजदार-ए-वफ़ा, सुल्तान-ए-वफ़ा और अब्बास-ए-बवफ़ा के नामों से याद किया जाता है। क्योंकि उन्होंने कर्बाला में वफ़ादारी के ऐसे आदर्श स्थापित किए कि दुनिया आज भी हैरान है। उन्होंने अपने भाई के मक़सद के लिए न सिर्फ़ अपनी क़ुर्बानी दी बल्कि अपने भाइयों और बच्चों को भी क़ुर्बान कर दिया।

जैसा कि पहले लिखा जा चुका है हज़रत अब्बास की माँ हज़रत उम-उल-बनीन कलाबिया क़बीले की थीं। इस क़बीले के कुछ लोग यज़ीद के दरबारी थे या उस की सेना में शामिल थे। वह लोग चाहते थे कि हज़रत अब्बास और उनके तीनों भाई कर्बला की जंग में इमाम हुसैन का साथ न दें। इसी उद्देश्य से कूफ़े के यज़ीदी गवर्नर इब्ने ज़ियाद की सहमति से कलाबिया क़बीले से सम्बन्धित अब्दुल्लाह बिन जुरैर बिन अबी अलमहल नाम के एक दरबारी ने इब्ने ज़ियाद से कहा ''ऐ अमीर! मेरी एक ख़्वाहिश है अगर तो कहे तो मैं अर्ज़ करूं?'' इब्ने ज़ियाद ने कहा ''कहो।'' अब्दुल्लाह ने कहा ''हज़रत अली ने मेरी चचाज़ाद बहन उम-उल-बनीन से निकाह किया था जिनसे चार बेटे पैदा हुए थे। यह चारों अब्बास, अब्दुल्लाह, उस्मान और जाफ़र मेरे भान्जे हैं और कर्बला आए हुए हैं अगर इजाज़त हो तो उन्हें एक ख़त के ज़रिये अमान (सुरक्षा का आश्वासन) लिख दूं। ऐ मेरे अमीर तेरी बड़ी मेहरबानी होगी।'' इब्ने ज़ियाद ने कहा ''अच्छा मैं ने उन चारों को अमान दे दी। तुम उन्हें पूरे मामले की ख़बर दे दो ताकि वह लोग घबरा न जाएं।'' अब्दुल्लाह ने अपने ग़ुलाम क्ज़मान के हाथों हज़रत अब्बास और उनके तीन सगे भाइयों के नाम एक अमान नामा (सुरक्षा

प्रपत्र) लिख कर दिया और कहा कि बहुत जल्दी से जा कर हज़रत अब्बास व उनके भाइयों को यह ख़त दो मगर उन चारों के सिवा किसी को कानों कान ख़बर न होने पाए।'' इस ख़त में उन चारों लोगों को सुरक्षा की गारेन्टी इस शर्त पर दी गई थी कि वह कर्बला के युद्ध में इमाम हुसैन का साथ नहीं देंगें। हज़रत अब्बास को जब यह अमान नामा (सुरक्षा प्रपत्र) मिला तो उस को ठुकराते हुए उन्होंने क्ज़मान से कहा ''अब्दुल्लाह से जाकर कहो हम ऐसे नहीं हैं कि इब्ने ज़ियाद की अमान में बैठें। हमारे लिए अल्लाह की अमान इब्ने ज़ियाद की अमान से बेहतर है हम वही चाहते हैं जो ख़ुदा चाहता है।''

हज़रत अब्बास की वफ़ादारी का इम्तेहान लेने के लिए यज़ीद की सेना का एक बड़ा अधिकारी शिम्र ज़िल्जौशन भी कर्बला में आ चुका था (यह कुकर्मी भी कलाबिया क़बीले का कपूत था) और कर्बला पहुँचते ही उसने इमाम हुसैन के शिविरों के सामने आ कर कहा ''कहाँ हैं मेरी बहन (उम-उल-बनीन) के बेटे? अब्बास, जाफ़र, अब्दुल्लाह और उस्मान? मेरे सामने आयें मै उनके लिए अमान का हुकम (सुरक्षा का आश्वासन) लाया हूं।'' उसकी आवाज़ सुन कर भी चारों भाई ख़ेमे (शिविर) से नहीं निकले। इस पर इमाम हुसैन ने कहा '' तुम लोग देखो तो सही वह क्या कहता है हालांकि कुकर्मी है मगर तुम्हारी मां का रिश्तेदार है।'' इमाम की बात मान कर अली के चारों शेर ख़ेमें से निकल कर आए और पूछा ''क्या कहते हो?'' उसने कहा ''ऐ मेरे भान्जों तुम्हारे लिए अमान (जान बचाने) का रास्ता खुला है मैं ने इब्ने ज़ियाद से तुम्हारे लिए सुरक्षा नामा ले लिया है। तुम लोग हुसैन के साथ रह कर फ़ुज़ूल में अपनी जान मत दो और हुसैन के लश्कर को छोड़ कर यज़ीद की तरफ़ आ जाओ।'' उन शूर वीरों ने जवाब दिया 'ख़ुदा लानत करे (अल्लाह का अभिशाप हो) तुझ पर और तेरी अमान पर,, हम को तो अमान है और फ़रज़न्दे रसूल (पैग़म्बर हज़रत मोहम्मद के सपूत) को नहीं?'' हज़रत अब्बास ने उसे डांट कर कहा ''ख़ुदा तुझे दाख़िले जहन्नुम (नर्क वास) करे और तेरी अमान पर लानत करे। ए दुश्मने ख़ुदा! तू हमें राए देता है कि हम अपने भाई और आक़ा हज़रत

इमाम हुसैन को छोड़ कर मलऊन (यज़ीद) की तरफ़दारी करने लगें?'' शिम्र अपना काला मुँह ले कर अपनी सेना में लौट गया। (शिम्र हज़रत उम-उल-बनीन का सगा भाई नहीं था लेकिन अरब के क़बीला वादी व्यवस्था के तहत क़बीले की हर औरत को क़बीले के अन्य पुरूष अपनी बहन कह कर पुकारते थे इसी परम्परा को शिम्र सगा रिश्ता बनाने की नाकाम कोशिश कर रहा था। उसे न तो हज़रत उम-उल-बनीन के बेटों से मोहब्बत थी न ही रिश्तेदारी का पास वह तो बस हुसैन के लश्कर में फूट डालने के उद्देश्य से इस तरह की बातें कर रहा था। वैसे वह अगर हज़रत अब्बास का सगा मामूं भी होता तब भी कोई ताक़त हज़रत अब्बास के क़दम डगमगा नहीं सकती थी।)

यज़ीद ने न तो हज़रत अब्बास से बैयत मांगी थी न ही बनी हाशिम के किसी दूसरे सदस्य के नाम उसने सन्देश भेजा, उसे मालूम था कि हुसैन मोमनीन (ईमान वालों) के इमाम हैं इस लिए उन्हीं की बैयत काफ़ी है। हज़रत अब्बास उस समय इमाम हुसैन के साथ केवल इस लिए नहीं थे कि हुसैन उनके भाई थे बल्कि हज़रत हुसैन इमामे वक़्त (उस समय के इमाम) थे और इमाम की मदद करना साहिबाने ईमान की धार्मिक ज़िम्मेदारी थी। इब्ने ज़ियाद की ओर से उनको अमान देने का सन्देश बार बार इस लिए भेजा जा रहा था कि उसे यह ग़लत फ़हमी थी कि हज़रत अब्बास इमाम हुसैन के साथ सिर्फ़ इस लिए आ गए हैं कि वह उनके भाई हैं। दूसरा कारण यह भी था कि यज़ीदी सेना हज़रत अब्बास के सामने रिश्तेदारों की भीड़ खड़ी कर के उन्हें इमाम हुसैन से अलग करना चाहती थी। उसको यह नहीं मालूम था कि कर्बला के मैदान में हज़रत अब्बास की वही हैसियत थी जो हर इस्लामी युद्ध में पैग़म्बर साहब और हज़रत अली की हुआ करती थी। वह अपने पिता की तरह ही इस्लाम का ध्वज ले कर कर्बला के सहरा में खड़े थे। जिस अलम पर उनके पिता की क़ुर्बानियों का इतिहास लिखा था उसे भला वह अपने आप से कैसे जुदा कर सकते थे? इसी लिए हज़रत अब्बास दीन-ए-इस्लाम की हिफ़ाज़त व इमाम हुसैन पर से क़ुर्बान होने की ज़िम्मेदारी से एक क़दम पीछे हटने को तैयार नहीं थे।

निर्णायक युद्ध

सुबहे आशूर इमाम हुसैन की इमामत (नेतृत्व) में हुसैनी सिपाहियों ने सुबह की नमाज़ अदा की और दुआएं पढ़ना शुरू ही की थी कि
जंग का बिगुल बज गया और यज़ीदी फ़ौज ने तीर फेंक कर युद्ध शुरु होने का एलान किया। इमाम हुसैन मुसल्ले (नमाज़ के लिए बिछने वाली चटाई) से उठे और अपने साथियों से कहा ''ऐ मेरे बहादुर साथियों सुनो! आज के दिन हम सब शहीद हो जाएंगें और सिर्फ़ (इमाम) ज़ैनुल आबदीन ज़िन्दा रहेंगे। हिम्मत से कमर बान्धो और निकल पड़ो।''
इमाम की तरफ़ से शहादत की ख़बर मिलते ही इन बहादुरों के चेहरे खिल गए और यह लोग एक दूसरे से खुश हो कर हंसी मज़ाक़ करने लगे। इन में से एक बहादुर ने कहा यह मज़ाक़ का वक़्त नहीं तो दूसरे वीर ने कहा ''ख़ुदा की क़सम मैं ने ज़िन्दगी भर कभी हंसी मज़ाक़ नहीं किया और न मैं हंसी मज़ाक़ को पसन्द करता हूं लेकिन आज तो बेहद ख़ुशी का दिन है।'' इस से मालूम पड़ता है कि इमाम हुसैन के सहयोगी और साथी मौत की मन्ज़िल को कितना आसान समझते थे।
यज़ीद की सेना सज कर तैयार थी। लगभग एक लाख़ बीस हज़ार सैनिकों पर आधारित सेना का कमाण्डर इन चीफ़ उमरे सअद था। 30 हज़ार सैनिक मैयमने (सेना के दाहिने भाग) में ख़ड़े थे जिसका सरदार उमर बिन हज्जाज था। मैयसरे (बायें हिस्से) पर ख़ूली बिन असबेही भी 30 हज़ार सैनिकों के साथ तैयनात था। क़ल्बे लश्कर (केन्द्रीय टुकड़ी) पर शिम्र इब्ने ज़िल्जौशन बाक़ी के सैनिकों के साथ हमला करने को तैयार था। पैदल सैनिकों की कमान शैस बिन रबअई और घुड़सवार दस्ते का संचालन उरवा बिन क़ैस के हाथों में था। यज़ीदी झण्डा उमरे सअद का ग़ुलाम दवीद उठाए था। इस तरफ़ हुसैनी लश्कर में मैयमने (दाहिने हिस्से) पर हज़रत ज़ुहैरे क़ैन और मैयसरे (बाईं टुकड़ी) पर हज़रत हबीब इब्ने मज़ाहिर के साथ केवल 20-20 लोग थे। क़ल्बे लश्कर (केन्द्रीय टुकड़ी) पर हज़रत अब्बास के साथ बाक़ी के 32 सिपाही ज़ुल्म को अपने पैरों से रौन्दने के लिए तैयार थे।

हम पहले बता चुके हैं कि इमाम हुसैन ने हज़रत अब्बास को अपना अलम दार नियुक्त किया था। युद्ध शुरू होने पहले हुसैनी अलम की देख रेख कर रहे हज़रत अब्दुल्लाह बिन जाफ़र बिन अक़ील के पास इमाम हुसैन के गहरे मित्र हज़रत ज़ुहैरे क़ैन गए और उनसे कहा ''भाई ज़रा अलम मुझे तो दो।'' फिर हज़रत अब्दुल्लाह से अलम लेकर हज़रत अब्बास के पास आए और कहा ''ऐ मेरे सरकार, ऐ इमाम हुसैन के क़ूव्वते बाज़ू यह अलम संभालिए।'' हज़रत अब्बास ने हुसैन के अलम को आंखो से लगाया, चूमा और अपने हाथों मे शान से उठा कर तैयार हो गए। इसके बाद हज़रत ज़ुहैरे क़ैन ने कहा ''अगर आप इजाज़त दें तो वह बात कहूं जिसको बरसों से दिल में छुपाए हूं।'' इस पर हज़रत अब्बास ने कहा ''ज़रूर कहो ज़ुहैर जो तुम कहोगे वह सच ही होगा।'' इस पर ज़ुहैर ने कहा ''ए अब्बास क्या तुम्हें मालूम है कि जब हज़रत अली ने तुम्हारी मां उम-उल-बनीन से शादी करने का इरादा किया तो उन्होंने अपने भाई हज़रत अक़ील से कहा कि ए मेरे भाई मेरे लिए कोई ऐसी औरत तलाश करो जो बड़े ख़ान्दान की हो और जो वीरों व योद्धाओं के परिवार की हो ताकि उस से एक ऐसा लड़का पैदा हो जो बहुत ही दिलेर, निर्भीक, ताक़तवर और साहसी हो और जो कर्बला में हुसैन का क़ूव्वते बाज़ू बन कर उनकी मदद करे। ऐ अब्बास तुम्हारे बाप ने आज ही के दिन के लिए तुम्हारी आरज़ू की थी। देखो आज के दिन अपने भाई बहनों की मदद में कोई कसर न रखना।'' यह सुन कर हज़रत अब्बास को जोश आ गया और उन्होंने एक ऐसी वीरता भरी अंगड़ाई ली कि रकाबें टूट गईं हज़रत अब्बास बोले ''ऐ ज़ुहैर! तुम आज के जैसे दिन मुझे बहादुरी याद दिला रहे हो। ख़ुदा की क़सम आज ऐसी शुजाअत दिखाऊंगा कि तुम ने कभी देखी नहीं होगी।'' यह कह कर घोड़े को ऐड़ दी और पहले से तीर फेंक रही सेना पर अकेले ही हमला कर दिया। वहां भगदड़ मच गई। लोगों को लगा कि 20 वर्ष बाद अली फिर से युद्ध के मैदान में आ गए हैं। इस हमले में अनेक यज़ीदी सैनिकों को मौत के घाट उतार कर मैदान से वापस आए।

शायद हज़रत ज़ुहैर की जानिब गर्व से देख कर कहा हो कि देखा मै

चाहूं तो इतने बड़े लश्कर की इंट से इंट बजा दूं।

यज़ीदी सेना तीरों की बारिश कर के युद्ध की पहल कर ही चुकी थी। हज़रत अब्बास के हमले से खिसयाई हुई सेना ने और अधिक तेज़ी से बाणों की वर्षा शुरू कर दी और इमाम हुसैन के शूरवीर शहादत की मन्ज़िल तय करने के लिए निकल पड़े।

तीर आने लगे जाने लगे मरने वाले
घुस गए मौत की आंखों में न डरने वाले

जंगे मग़लूबाः- इमाम हुसैन के छोटे से फ़ौजी दल को चन्द पलों में ख़त्म कर देने के उद्देश्य से यज़ीद की सेना ने सामूहिक रूप से हमला कर दिया। हालांकि अरबों का आम उसूल यह था कि पहले अकेले अकेले की लड़ाई होती जिसमें नमी गिरामी पहलवान और योद्धा अपने बल और शौर्य का प्रदर्शन करते थे। (कभी-2 तो सिर्फ़ एक ही आदमी के मारे जाने के बाद युद्ध समाप्त हो जाता था जैसा कि इस्लामी इतिहास में बहुत ही महत्त्वपूर्ण दर्जा रखने वाले युद्ध जंग-ए-ख़न्दक़ के दौरान हुआ कि यहूदियों के सब से बड़े पहलवान अम्र इब्ने अब्दे वुत ने हज़रत अली को चुनौती दी और जब वह मारा गया तो सारी यहूदी सेना अपनी हार मान कर वापस चली गई।) जब सूरमा और साहसी योद्धाओं की लड़ाई कामयाब नहीं होती थी तो जंगे मग़लूबा का तरीक़ा इख़्तियार किया जाता था। यज़ीदी सेना कर्बला में उसूलों की जंग लड़ने नहीं आई थी। उसके लिए तो इसाइयों का कथन (जंग और मोहब्बत में सब कुछ जायज़ है) ही सही था। इस लिए उन्होंने पुराने उसूलों को तोड़ते हुए जंगे मग़लूबा का तरीक़ अपनाया।

ज़ाहिर है 72 व्यक्तियों के एक छोटे से दल पर अगर एक लाख़ से ज़्यादा की भीड़ हमला न भी करे और सिर्फ़ दौड़ पड़े जिसमें हज़ारों घुड़सवार भी हों तो 72 लोग कुचल कर ही मर सकते थे। यज़ीदी सेना की रणनीति यह थी कि इमाम हुसैन व उनके साथियों को जंगे मग़लूबा में ही शहीद कर दिया जाए और अपने फ़ौजियों को कम से कम जोखिम में डाला जाए। मगर अल्लाह रे हुसैनी जांनिसारों का हौसला उन्होंनें यज़ीदी सेना को धूल चटा दी। इस युद्ध में यज़ीद की

सेनाओं को बहुत ज़्यादा नुक़सान उठाना पड़ा और इमाम हुसैन के कई साथी भी शहीद हुए। जंगे मग़लूबा की रणनीती में मात खाने के बाद यज़ीदी सैनिकों के पास तन ब तन लड़ाई (अकेले के सामने अकेला) के अलावा कोई रास्ता नहीं बचा था।

हज़रत अब्बास की वीरता का एक नमूनाः- हम पहले भी हज़रत अब्बास की वीरता के अनेक क़िस्से लिख चुके हैं लेकिन यहां पर एक बहुत ही अहम क़िस्सा लिखे बिना हम आगे नहीं बढ सकते। जंगे मग़लूबा के कुछ देर बाद इमाम हुसैन के चार जाँबाज़ सिपाही अम्र बिन ख़ालिद सैदावी के नेतृत्व में यज़ीदी सेना पर टूट पड़े और जम कर लोहा लिया लेकिन मक्कार व साज़िशी यज़ीदी सेना ने इन चारों सैनिकों को हर तरफ़ से घेर लिया और इन पर तीर, तलवार और नैज़े चलाना शुरू कर दिए। यह दृश्य देख कर इमाम हुसैन ने उन चारों बहादुरों की मदद के लिए हज़रत अब्बास को भेजा।

इमाम का अदेश मिलते ही हज़रत अब्बास ने फ़ौज-ए-यज़ीद पर हमला कर दिया। इस भरपूर हमले से यज़ीदी लश्कर में त्राहि त्राहि मच गई और हर कोई अपनी जान बचाने के लिए भागा। यज़ीदी सेना को दूर तक भगाने के बाद, हज़रत अब्बास ने गम्भीर रूप से घायल हुए इन हुसैनी जांनिसारों को दुश्मन के घेरे से बचा कर बाहर निकाला और अपनी सेना तक उन चारों को वापस ले कर आए मगर इस हमले में ख़ुद हज़रत अब्बास के बदन पर एक ख़राश (घाव) तक नही आई।

हज़रत अब्बास चाहते तो उसी समय यज़ीदी सेना के क़दम उखाड़ देते और अकेले ही यह जंग फ़तह कर लेते मगर कर्बला की जंग तलवार पर तलवार की फ़तह के लिए नहीं बल्कि तलवार पर रगे गर्दन की कामयाबी की मोहर लगाने के लिए हुई थी।

दोपहर की नमाज़ः सुबह से शुरू हुई जंग में हुसैनी जियालों ने ऐसा हौस्ला दिखाया कि सुबह से दोपहर का वक़्त आ गया। इमाम हुसैन ने ज़ोहर की नमाज़ के लिए जंग रोकने की अपील की मगर यज़ीदी सेना को नमाज़ रोज़े से क्या मतलब था? वह किसी तौर राज़ी नहीं हुई। बल्कि यह भी कह दिया कि इमाम हुसैन को नमाज़ नहीं पढ़ने देंगें।

इस पर हज़रत हुर, हज़रत ज़ुहैरे क़ैन, हज़रत हबीब इब्ने मज़ाहिर ने तलवारें खींच लीं और दुश्मनों से कहा कि देखें किस में ताक़त है जो हमारे इमाम को नमाज़ अदा करने से रोके। इमाम की सेना ने यह तय किया कि दल को तीन टुकड़ों में तक़सीम कर दिया जाए एक टुकड़ा नमाज़ पढ़े, दूसरे टुकड़े के कुछ लोग युद्ध करें और तीसरे टुकड़े के लोग इमाम व नमाज़ पढ़ रहे अन्य लोगों की ओर आने वाले तीरों को अपने सीनों पर रोक कर नमाज़ियों को सुरक्षा कवक्ष प्रदान करे। इसी रणनीती के तहत इमाम हुसैन की तरफ़ से सब से पहले हज़रत हुर और उनके बेटे मैदान में उतरे। यह दोनों इमाम हुसैन के साथियों की तरह तीन दिन के प्यासे नहीं थे मगर इमाम हुसैन की सेना में आने के बाद से इन लोगों ने भी पानी नहीं पिया था। एक रात पहले इनके क़ब्ज़े में दरिया था और अब चारों तरफ़ प्यास ही प्यास थी लेकिन जो लोग अल्लाह वाले होते हैं वह प्यासे मर जाना पसन्द करते हैं मगर असत्य की तरफ़ वापस नहीं लौटते।

हज़रत हुर के पास चन्द घन्टों पहले तक दौलत, शोहरत, ठाठ बाट से भरी ज़िन्दगी थी लेकिन मरने के बाद सिर्फ़ और सिर्फ़ नर्क था। आशूर के दिन हुर उस रास्ते पर ख़ड़े थे जिस पर उनके बेटे की ख़ून भरी लाश और अपने ही जिस्म के बिखरे हुए टुकड़े नज़र आ रहे थे मगर मौत के बाद उन्हें जन्नत के दरवाज़े खुले हुए दिखाई दे रहे थे। जहां हज़रत हुसैन के नाना हज़रत मोहम्मद, वालिद हज़रत अली, मां हज़रत फ़ातिमा ज़हरा और भाई हज़रत हसन, हज़रत हुर और उनके बेटे के स्वागत के लिए तैयार थे। हज़रत हुर ने जिस लम्हे में इस्लाम का दामन थामा उस पल में सिवाए मौत के चारों तरफ़ कुछ नहीं था। यह हर आदमी के सोचने की बात है कि नाश हो जाने वाली दौलत, कभी भी अपमान में बदल जाने वाला मान-सम्मान और एक ज़ालिम की सरकार में किसी पद का प्राप्त होना ज़्यादा अहमियत रखते हैं या फिर एक पल की वह ज़िन्दगी अहम है जिसके साए में सत्य, धर्म और मानवता का बसेरा हो और जहां कभी न ख़त्म होने वाले सुख हों। हज़रत हुर का इमाम हुसैन की सेना में शामिल होना इस लिए इस्लामी

जगत की महत्वपूर्ण घटना बन गया कि आम इन्सान में इतना हौसला नहीं होता है कि वह सामने बहते हुए दरिया को छोड़ कर अपने और अपनी औलाद के लिए ख़ून के दरिया को चुने यह काम सिर्फ़ अल्लाह वाले लोग ही कर सकते हैं। हज़रत हुर और उनके बेटे की शहादत के बाद इमाम हुसैन के अन्य साथियों ने अपनी क़ुर्बानी पेश की जिन में हज़रत हबीब इब्ने मज़ाहिर, ज़ुहैरे क़ैन, मुस्लिम इब्ने औसजा और वहब कलबी जैसे सरदारों ने दुश्मन के दांत खटटे कर दिये और इस्लाम की राह में शहादत को गले से लगाया।

दूसरी तरफ़ इमाम हुसैन के साथी अबु समामा सायदी, हज़रत सईद बिन अब्दुल्लाह हनफ़ी और कुछ दूसरे बहादुरों ने इमाम को तीरों से बचाने के लिए ख़ुद को ढाल बना दिया। इस तरह इमाम हुसैन की नमाज़ अदा हुई लेकिन हज़रत अबू समामा और हज़रत सईद बिन अब्दुल्लाह हनफ़ी अपने इमाम को बचाने की कोशिश में अनेक तीर लगने से शहीद हो गए।

इस तरह इमाम हुसैन के सारे साथी व मित्र मैदान में अपनी शहादत का अमर इतिहास लिख कर जन्नत की ओर चले गए। (इन तमाम शहीदों क शहादत का विवरण देना सम्भव नहीं हैं क्योंकि पुस्तक बहुत बड़ी हो जाएगी) असहाब (साथियों) के बाद रिश्तेदारों और परिवार के सदस्यों की क़ुर्बानी का वक़्त आ गया। यहां पर यह कहना ज़रूरी है कि आशूर के दिन जब तक इमाम हुसैन का कोई भी साथी ज़िन्दा रहा। बनी हाशिम (इमाम के परिवार) के किसी जवान बूढ़े या बच्चे के एक छोटा सा घाव भी नहीं लगा लेकिन असहाब (मित्रों) की जानें क़ुर्बान हो जाने के बाद पैग़म्बर साहब के गुलशन के फूल मैदान में जा कर तीरों और तलवारों के वार सहने लगे।

हज़रत अली अकबर की शहादतः- इमाम हुसैन के केवल तीन ही बेटे थे और तीनों का नाम उन्होंने अपने पिता के नाम पर 'अली' रखा था। कर्बला के युद्ध से पहले इन्हें अली अकबर, अली औवसत और अली असग़र के नाम से पुकारा जाता था। इमाम के बड़े बेटे अली अकबर कर्बला के युद्ध में भाग नही ले सकते थे क्योंकि वह उस दिन

बीमार थे। दूसरे बेटे अली औवसत की उम्र 18 वर्ष थी और तीसरे बेटे अली असग़र की उम्र सिर्फ़ 6 माह थी। चूंकि कर्बला के युद्ध में इमाम हुसैन के बड़े बेटे अली अकबर बीमार होने की वजह से हिस्सा नहीं ले सके तो उन्हें इतिहासकारों ने इमाम ज़ैनुल आबदीन और मंझले बेटे अली औसत को हज़रत अली अकबर कहना शुरू कर दिया।
इमाम हुसैन ने अल्लाह की राह में सब से अनमोल और हसीन क़ुर्बानी के लिए सब से पहले अपने मंझले बेटे हज़रत अली अकबर को चुना। अरब के सारे लोग हज़रत अली अकबर को देख कर कहते थे कि उनकी शक्ल, सूरत, चाल, ढाल और बातचीत का अन्दाज़ बिल्कुल पैग़म्बर साहब जैसा था। शायद इमाम हुसैन ने हज़रत अली अकबर को सब से पहले शहीद होने के लिए इसी कारण भेजा कि मोहम्मद साहब का (झूठ-मूठ) नाम लेने वाली यज़ीदी सेना हज़रत अली अकबर की पैग़म्बर साहब से मिलती जुलती शक्ल देख कर यह समझ सके कि यही वह लोग हैं जो पैग़म्बर साहब के असली उत्तराधिकारी हैं मगर जिन लोगों के लिए नर्क बना हो वह पैग़म्बर साहब या उनके परिवारजनों का एहतिराम कैसे कर सकते हैं।
हज़रत अली अकबर को फ़ौजी हुनर उनके चचा हज़रत अब्बास ने सिखाए थे इसी कारण हज़रत अली अकबर को अरब जगत में बहुत ही बलवान व कुशल सेनानी के रूप में शोहरत हासिल थी। इतिहासकारों का कहना है कि कर्बला के युद्ध से एक दिन पहले हज़रत अब्बास, हज़रत ज़ैनुल आबदीन और हज़रत अली अकबर ने एक पहाड़ी पर ख़ड़े हो कर यज़ीद की सेना पर नज़र डाली और आपस में कहा कि हम से लड़ने को यज़ीद ने बस इतनी सी सेना मंगाई है? इतनी फ़ौज को तो सिर्फ़ हम तीन लोग ही मात दे देंगे। मगर अल्लाह की तरफ़ से इस लड़ाई का अन्त कुछ और ही तय था। इस युद्ध के बाद ही तय होना था कि इस्लाम सिर्फ़ तलवार से तलवार को मात देने वालों का धर्म नहीं बल्कि क़ुर्बानी (बलिदान) देने वालों का दीन (मज़हब) है। हज़रत अली अकबर जैसा कड़ियल जवान इसी लिए मैदान में आया था कि अपने पवित्र ख़ून से इस्लाम की तस्वीर में मज़लूमियत का ऐसा

रंग भर जाएं जो क़यामत तक यह बताता रहे कि इस्लाम मज़्लूमों का मज़हब है ज़ालिमों का नहीं।
तीन दिन की प्यास के बावजूद हज़रत अली अकबर मैदान में गए और बड़े बड़े पहलवानों को मात दे कर फ़ौज-ए-यज़ीद के छक्के छुड़ा दिए। अकेले अकेले की जंग में कई नामी गिरामी पहलवान मारे गए तो अब दुश्मन ने दूसरी चाल चली और चारों तरफ़ से घेर लिया।

अब्बास ने सिखाए हैं फ़ौजी हुनर इन्हें
दुश्मन यह बोले क़त्ल करो घेर कर इन्हें

हर तरफ़ से चल रहे तीरों के बीच हज़रत अली अकबर घायल हो गए इसी बीच यज़ीद के एक सेनानी मुर्रा बिन मिन्क़ज़ ने जो भाला चलाने वाले दल (सिनां बरदार दस्ते) का सदस्य था। हज़रत अली अकबर के सीने पर ऐसा वार किया कि वह शहीद हुए। हज़रत अकबर शहीद हुए लेकिन इस्लाम के बदन में हज़रत अली अकबर ने अपने जवान ख़ून को इस तरह भर दिया कि अब अल्लाह का दीन क़यामत तक जवान ही रहेगा

हश्र तक हो नहीं सकता कभी बूढ़ा इस्लाम
इस को हम शक्ले पैयम्बर ने जवानी दी है।

इमाम हुसैन जवान बेटे की लाश उठाने पहुंचे तो मगर बूढ़े बाप से जवान बेटे की लाश उठी नहीं। तब उन्होंने परिवार के जवानों को आवाज़ दी ''ऐ बनी हाशिम के बच्चों आओ और अपने भाई की लाश उठाओ।''

औलादे अक़ील का हमलाः- हज़रत अली अकबर की शहादत से इमाम हुसैन के ख़ेमों में कोहराम मच गया। अनेक बच्चे सिर पीटते हुए ख़ेमों से बाहर निकल आए। इन्हीं बच्चों में हज़रत अब्दुल्लाह बिन मुस्लिम बिन अक़ील बिन अबू तलिब भी शामिल थे जो हज़रत अली अकबर की लाश को आता देख कर सिर पीट रहे थे। इतने में अमरव बिन सबीह सदाई ने एक तीर चलाया जो बच्चे के हाथ को छेदता हुआ सिर में चुभ गया। उसके बाद दूसरा तीर आया जो बच्चे के सीने पर लगा। इस तरह हज़रत अब्दुल्लाह शहीद हो गए।

एक तरफ़ हज़रत अली अकबर जैसे हसीन हाशमी जवान की लाश और दूसरी तरफ़ हज़रत अब्दुल्लाह जैसे नाज़ुक फूल के नन्हे से बदन पर दो तीर लगे देख कर हज़रत अक़ील की औलादें अपने जज़बात पर क़ाबू नहीं रख सकीं और इन जोशीले जवानों ने फ़ौजे यज़ीद पर एक साथ हमला कर दिया।

कर्बला की लड़ाई में जो भी शामिल होने आया था वह वापस जाने के लिए नहीं आया था। (दुनिया का यह एक ऐसा अनूठा युद्ध था जिसमें मांऐ अपने बच्चों की शहादत की दुआ मांग रही थीं।) लेकिन सब योद्धाओं ने एक तरीक़ा इख़्तियार कर रखा था कि मैदान में जाने से पहले इमाम हुसैन की ख़िदमत में आ कर उनसे मैदान में जाने की इजाज़त ज़रूर लेते थे। हज़रत अली अकबर और हज़रत अब्दुल्लाह की शहादत ने इन हाशिमी जवानों को इतना बेक़रार कर दिया कि उन्होंने इजाज़त की रस्म अदा किए बिना ही मैदान का रुख़ कर लिया।

इन नौजवानों को मैदान की तरफ़ जाता देख कर मेहरबान और शफ़ीक़ इमाम ने अपना घोड़ा इन जवानों के पीछे दौड़ाया और आवाज़ दी ''हां! मेरे चचा के फ़रज़न्दो (बेटो) मौत के मरहले को सर कर दो।'' (मौत पर विजय पाओ)'' इस तरह इन जवानों के युद्ध पर इमाम हुसैन ने अपनी इजाज़त की मोहर लगा दी। यह लोग सैंकड़ों दुश्मनों को क़त्ल करने के बाद शहीद हुए।

औन और मोहम्मद की क़ुर्बानी:- फिर इमाम हुसैन की बहन हज़रत ज़ैनब के बेटों हज़रत औन और हज़रत मोहम्मद की क़ुर्बानी की बारी आई। जब से हज़रत ज़ैनब को यह मालूम हुआ था कि उनके भाई इमाम हुसैन कर्बला में शहीद होंगे तो उन्होंने यह अहद किया था कि अगर उनकी औलादों को अल्लाह ने सलामत रखा तो वह उन्हें इमाम हुसैन पर क़ुर्बान करेंगी। मौलाना नज्म-उल-हसन करारवी अपनी किताब ज़िक्र उल अब्बास में लिखते हैं ''दिन गुज़रे रातें गुज़रीं बच्चे चलने फिरने लगे। हज़रत ज़ैनब ने बच्चों को हज़रत अब्बास के पास फ़ने सिपह गरी (सैन्य कला कौशल) सिखाने के लिए भेज दिया। यह

दोनों रोज़ाना हज़रत अब्बास से जंग के हुनर सीखते थे और जब घर वापस आते तो हज़रत ज़ैनब फ़र्माती थीं

दुनिया की ख़ूबिया हैं सब इन के वास्ते
मैं पालती हूं दोनों को एक दिन के वास्ते'

आख़िर वह दिन आ गया जिस की तमन्ना में हज़रत ज़ैनब ने बच्चों को जवान किया था। दोनों बच्चे मैदान में गए और बहादुरी से लड़ते हुए अनेक दुश्मनों को जहन्नुम वासिल (नर्क में भेज) कर के अपने मामूं के अज़ीम मक़सद पर निसार हो गए और अपनी मां को अल्लाह के दरबार में सुर्ख़रू (प्रशंसा पात्र) होने का मौक़ा दिया। हज़रत ज़ैनब ने इन दोनों के शहीद होने के बाद शुक्र का सजदा अदा किया और दोनों बच्चों की लाशों के बीच बैठ कर कहा '' ऐ पालने वाले अपनी इस कनीज़ की यह क़ुर्बानी क़ुबूल कर।''

हज़रत हसन के बेटों की शहादतः- इमाम हुसैन के बड़े भाई हज़रत हसन के दो बेटों हज़रत क़ासिम बिन हसन और हज़रत अबूबक्र बिन हसन ने भी अपनी क़ुर्बानियां पेश कीं। हज़रत क़ासिम को कर्बला के युद्ध में शहीद होने वाले एक ऐसे योद्धा हैं जिनकी शादी केवल एक रात पहले ही इमाम हुसैन की बड़ी बेटी हज़रत फ़ातिमा कुबरा से हुई थी। हज़रत क़ासिम को हुसैनी समुदाय में एक रात के दूल्हा के नाम से याद किया जाता है और उन्हीं की याद में मोहर्रम के दौरान मेहंदी के जुलूस उठाए जाते हैं। भारतीय शियों के घरों में एक परम्परा यह भी है कि मोहरर्म आते ही शिया औरतें अपने हाथों की चूड़ियां तोड़ कर इमाम हुसैन की बेटी हज़रत फ़ातिमा कुबरा के ग़म में शरीक होती हैं।

औलादे अली की क़ुर्बानियांः- औलादे अली की क़ुर्बानी का सिलसिला वैसे तो एक रात पहले ही हज़रत अब्बास उल असग़र की शहादत से हो चुका था लेकिन आशूर के दिन हज़रत अली के बेटे हज़रत मोहम्मदे असग़र की शहादत से औलादे अली की क़ुर्बानी का सिलसिला शुरू हुआ। मोहम्मद असग़र अपने भाइ इमाम हसैन से इजाज़त लेकर मैदान में गए और अपने पिता हज़रत अली का नाम रौशन करते हुए दुश्मनों पर टूट पड़े। बाद मे इस प्यासे सिपाही को

बनी अबान क़बीले के एक तीर अन्दाज़ ने तीर मार कर शहीद किया। फिर हज़रत उमर इब्ने अली और हज़रत अबु अब्दुल्लाह मैदान में गए और अपनी वीरता की दास्तान लिख कर शहीद हुए। इन की शहादत के बाद हज़रत उम उल बनीन के बेटों ने जंग के मैदान में जा कर अपनी क़ुर्बानियों से इस्लाम की तस्वीर में वफ़ा के नए रंग भरे और सब से पहले हज़रत अब्दुल्लाह मैदान जंग में तशरीफ़ ले गए।

अब्दुल्लाह बिन अलीः- मौलाना अली नक़ी साहब मुजतहिद अपनी किताब शहीदे इन्सानियत में लिखते हैं ''हज़रत अब्बास अपने छोटे भाई हज़रत अब्दुल्लाह से अपनी औलाद की तरह मोहब्बत करते थे। इसी लिए वह चाहते थे कि अपनी आख़ों के सामने हज़रत अब्दुल्लाह को शहीद होते हुए देख लें क्योंकि रोज़े आशूर हालत यह थी कि हर शख़्स अपने से वाबस्ता (जुड़े) इन्सान को ख़ुद अपने सामने मैदान में भेजता और उसे बतौरे तोहफ़ा (भेंट स्वरूप) अपने हाथ से पेश करता था, फिर ख़ुद आगे बढ़ कर जान देता था।'' हज़रत अब्बास ने भी अपने भाइयों को अपनी शहादत से पहले मैदान में भेजा। सब से पहले हज़रत अब्बास ने अपने छोटे भाई हज़रत अब्दुल्लाह को बुलाया और कहा ''बढ़ो भाई,,आगे बढ़ो,,,ताकि मैं तुम को अपनी आँखों के सामने क़त्ल होते हुए देख लूँ और अपने लिए सामाने आख़िरत समझूँ (अल्लाह के दरबार ख़ुद को सम्मानित होते हुए देखूँ)।'' हज़रत अब्दुल्लाह अपने भाई से गले मिल कर विदा हुए और फिर इमाम हुसैन से इजाज़त ले कर युद्ध स्थल में पहुंचे। वह बहादुरी से लड़ते हुए हानी बिने सबीत की तलवार से शहीद हुए।

उस्मान बिन अलीः- हज़रत अब्दुल्लाह के बाद हज़रत अब्बास ने एक और छोटे भाई हज़रत उस्मान बिन अली को मैदान जंग में भेजा और अपने इस भाई की भी क़ुर्बानी राहे ख़ुदा में पेश की। हज़रत उस्मान बिन अली मैदान में गए अल्लाह की राह में जिहाद किया और को ख़ूली बिन यज़ीद अस्बेही के तीर से ज़ख़्मी हो कर ज़मीन पर तशरीफ़ लाए (गिरे) और बनी अबान बिन दारम के एक आदमी ने उनका सिर काट कर शहीद कर दिया।

जाफ़र बिन अलीः- हज़रत उस्मान बिन अली के बाद हज़रत अब्बास ने अपने सब से छोटे भाई हज़रत जाफ़र बिन अली को बुलाया और कहा ''जाफ़र अब तुम जाओ और मैदान जंग में जा कर हुसैन की नुसरत करो ताकि मैं तुम्हारे दोनों भाइयों की तरह तुम्हारा ग़म भी उठाऊँ।'' हज़रत जाफ़र रणभूमि में गए अपने भाइयों की तरह बहादुरी से युद्ध किया और हानी बिन बिन सबीत हज़री के हाथों शहीद हुए। हज़रत जाफ़र, हज़रत अली की सब से छोटे बेटे थे और घर का सब से छोटा फ़र्द कितना लाडला होता है यह तो सब ही जानते हैं। इनकी शहादत से मौला अब्बास को कितना सदमा हुआ होगा उसका अन्दाज़ा लगाना मुश्किल है। हज़रत जाफ़र को भी हज़रत अब्बास ने अपनी औलाद की तरह पाला था। इस तरह हज़रत अब्बास ने इमाम हुसैन के मक़सद को कामयाब करने के लिए अपने सारे भाइयों की क़ुर्बानी दे दी । किसी घर में अगर एक भाई दुनिया से उठ जाए तो दूसरे भाइयों का क्या हाल होता है? हिम्मत टूट जाती है और हाथ पैरों की जैसे जान निकल जाती है। हमारे आक़ा अब्बास ने तीन भाइयों की क़ुर्बानी दी मगर क़दम में लग़ज़िश (थर्राहट) आने के बजाए हिम्मत और बढ़ गई और वह अपनी औलाद की क़ुर्बानी देने की तैयारी करने लगे।

हज़रत अब्बास के बेटों की क़ुर्बानीः- जैसा कि पहले लिखा जा चुका है कि हज़रत अब्बास के तीन बेटे थे। अपने तीनों भाईयों की कुर्बानी के बाद हज़रत अब्बास अपने सामने अपने बेटों को उसी तरह इस्लाम पर क़ुर्बान होते हुए देखना चाहते थे जिस तरह इमाम हुसैन ने अपने बेटे हज़रत अली अकबर को क़ुर्बान किया था लेकिन कर्बला में उनके दो ही बेटे मौजूद थे। सब से छोटे बेटे अपनी दादी के साथ मदीने में थे । हज़रत अब्बास अपने दो बेटों हज़रत फ़ज़ल और हज़रत क़ासिम को पास बुलाया और कहा ''ऐ मेरे नूर चश्मों (आखों का प्रकाश) आज सुर्ख़रू (प्रशंसा पात्र) होने का दिन है। तुम दोनों देख ही रहे हो कि कैसी कैसी हस्तियां आज इस्लाम की सुरक्षा करते हुए अपनी जान निछावर कर चुकी हैं। अब वह वक़्त दूर नहीं कि मैं भी इमाम हुसैन पर से निसार हो कर हयाते दायमी (कभी समाप्त न होने वाला

जीवन) हासिल करूगा और अपने पिता के पास सिर उठाए हुए पहुचूंगा। तुम दोनों को फ़रीज़ा (कर्तव्य) है कि मौत की तरफ़ बढ़ने में उजलत (तेज़ी) से काम लो।'' उसके बाद अपने बड़े बेटे हज़रत फ़ज़ल का माथा चूमा और कहा '' ऐ नूरे नज़र (मेरी आखों के उजाले) क्या करुं तेरी जुदाई मेरे लिए बहुत ही बड़ा सदमा है लेकिन क्या करूं हुसैन के मुक़ाबले में तेरी कोई हस्ती नहीं और तेरी क़ुर्बानी को ज़रूरी समझ कर तुझे अपने दिल से जुदा कर रहा हूं बेटा ख़ुदा हाफ़िज़ मैदान में जाओ और रसूल के नवासे तथा इस्लाम के नाम पर क़ुर्बान हो जाओ।यह सुन कर हज़रत फ़ज़ल अपनी मां से रूख़सत (विदा) होने के लिए ख़ेमे के अन्दर गए। मां से मिलने और फुफी हज़रत ज़ैनब से दुआएं लेने के बाद वह इमाम हुसैन के पास आए और रणभूमि में जाने की इजाज़त मांगी।

हज़रत फ़ज़ल की रजज़ः- इमाम से अनुमति मिलते ही मैदान में गए और अपने दादा हज़रत अली के अन्दाज़ में रजज़ पढ़ी ''ख़ुदा की क़सम तुम मेरा ख़ून बहाने के लिए इतने हो या और ज़्यादा हो या अकेले मेरे लिए सब बराबर है। ऐ इस ज़मीन के सब से बुरे वासियो! ऐ धरती पर फ़साद की आग फैलाने वाले शरीर लोगों (आतंकवादियों) याद रखो कि मैं अनक़रीब (जल्द ही) तुम्हारी भीड़ को तितर बितर कर दूँगा और तुम्हारे सिरों को तुम्हारे जिस्मों से बिना तकल्लुफ़ (समय दिए बिना) जुदा कर दूंगा।'' इस के बाद हज़रत फ़ज़ल ने सेना के एक धड़े पर हमला किया और अपनी तलवार के ऐसे जौहर दिखाए कि प्यासे पिता के चेहरे पर सन्तोष ही सन्तोष झलकने लगा। चन्द ही पलों में हज़रत अब्बास के शेर ने इस्लाम के अनेक दुश्मनों को जहन्नुम की राह दिखाई। हज़रत अब्बास को हज़रत फ़ज़ल का पिता होने के कारण अबुल फ़ज़लिल अब्बास (फ़ज़ल के पिता) के नाम से आज भी पुकारा जाता है। हज़रत फ़ज़ल युद्ध स्थल में अपने पिता के गौरव में इज़ाफ़ा कर रहे थे और सेना के पैर उखड़ रहे थे कि इसी बीच फ़ौजे यज़ीद से एक कुख्यात हत्यारा निकल कर आया और उसने युद्ध में व्यस्त हज़रत फ़ज़ल पर पीछे से तलवार का वार करके उन्हें शहीद कर दिया।

इमाम हुसैन ने हज़रत फ़ज़ल की लाश उठाने के लिए हज़रत अब्बास को जाने नही दिया बल्कि ख़ुद जवान भतीजे की लाश उठा कर लाए। हज़रत फ़ज़ल की लाश जब गन्जे शहीदां (वह ख़ेमा जहां शहीदों की लाशें एकत्रित की गईं थी) में आई तो हज़रत अब्बास के दूसरे बेटे हज़रत क़ासिम इब्ने अब्बास बेचैन हो गए और बोले ''ऐ भाई तुम्हारी शहादत के बाद मेरी ज़िन्दगी बेकार (व्यर्थ) है।'' उसके बाद अपने चचा इमाम हुसैन की ख़िदमत में पहुंचे और कहा ''चचा मुझे मरने की इजाज़त दीजिए।'' इमाम ने उन्हें सीने से लगाया और कहा ''यह कैसे मुम्किन है कि मैं तुम्हें भी मैदाने जंग में भेज दूं?'' (मतलब यह था कि हज़रत अब्बास ने अभी अभी तो एक बेटे का सदमा उठाया है इतने जल्दी दूसरे बेटे के मैदान में जाना उचित नहीं है।)'' इस पर हज़रत क़ासिम इब्ने अब्बास ने कहा ''चचा यह भी तो मुमकिन नहीं है कि मैं ज़िन्दा रहूं (और आप तथा मेरे पिता शहीद हो जाएं)।'' इमाम हुसैन ने कहा ''ऐ बेटे क्या अपने पैरों से मौत की तरफ़ जाना चाहते हो?'' अब्बास के शेर दिल बेटे ने कहा ''हां चचा बेशक (निसेन्देह) जाना चाहता हूं।'' जवाब सुन कर इमाम ने कहा ''जाओ बेटे ख़ुदा हाफ़िज़।''

हज़रत क़ासिम इब्ने अब्बास की रजज़:- चचा से इजाज़त ले कर हज़रत क़ासिम इब्ने अब्बास मैदान की तरफ़ चले और इन अलफ़ाज़ में रजज़ पढ़ी ''मैं तुम पर नबीए मुख़्तार (हज़रत मोहम्मद) के सदक़े में ऐसा हमला करूंगा कि तुम्हारा दूध पीता बच्चा भी डर और ख़ौफ़ से घबरा कर बूढ़ा हो जाएगा। ऐ कुफ़्फ़ार (नास्तिकों) सुनो! मै तुम में से हर एक को टुकड़े टुकड़े कर दूंगा।''

क़ासिम इब्ने अब्बास बहादुरी से लड़े और अनेक सैनिकों को जहुन्नुम में भेजा। इन की बहादुरी और हौसला देख कर शामी सेना के अधिकारियों ने 'अरज़क़े शाम' नाम के एक कुख्यात पहलवान (उसे एक हज़ार आदमियों के बराबर समझा जाता था) से कहा कि वह हज़रत क़ासिम बिन अब्बास के मुक़ाबले के लिए जाए लेकिन उसने कहा ''जब अब्बास इब्ने अली ख़ुद आएंगे तब मैं जंग के लिए जाऊंगा इस बच्चे से लड़ना मेरी शान के ख़िलाफ़ है।'' लेकिन जब क़ासिम इब्ने अब्बास ने

लाशों का ढेर लगा दिया तो अरज़क़ को इनके सामने आना ही पड़ा। थोड़ी ही देर में अरज़क़ को अपनी ग़लती का एहसास हो गया और वह हज़रत अब्बास के शहज़ादे के सामने हर तरह से कमज़ोर पड़ने लगा। फिर हज़रत क़ासिम ने अपने दादा अली के अन्दाज़ में एक ऐसा वार किया कि अरज़क़े शामी का सिर धड़ से अलग हो कर दूर जा गिरा। सारी सेना में उथल पुथल मच गई। अपनी इस जीत से विभोर क़ासिम इस बहादुरी पर अपने चचा हज़रत हुसैन से दाद लेने के लिए कुछ देर के लिए ख़ेमे में वापस लौट कर आए और बोले ''ऐ चचा अगर थोड़ा सा पानी मिल जाता तो मै दुशमों को बताता कि युद्ध किसे कहते हैं।'' इमाम ने अपने बहादुर भतीजे से कहा ''बेटा बस थोड़ी देर और सब्र करो तुम्हें तुम्हारे जद (हज़रत मोहम्मद) अपने हाथों से आबे कौसर (स्वर्ग का विशेष पानी) पिलाएंगे और फिर तुम को कभी प्यास नहीं लगेगी।'' यह सुन कर हज़रत क़ासिम इब्ने अब्बास फिर से युद्ध करने के लिए मैदान में पहुंच गए। इस हमले में आप को चारों तरफ़ से घुड़सवार दल ने घेर लिया। आपने 20 घुड़सवारों की जान ली और उसके बाद ख़ुद शहीद हो गए। इमाम हुसैन जब हज़रत क़ासिम इब्ने अब्बास की लाश को उठाने के लिए पहूंचे तो घुड़सवार दल ने उनका रास्ता रोका इमाम हुसैन ने इस दल पर हमला करके अनेक कपाटी हत्यारों को मार डाला और हज़रत अब्बास के बेटे की लाश ख़ुद उठा कर अपने शिविरों तक लाए।

हज़रत अब्बास युद्ध स्थल में

जब इमाम हुसैन के सभी साथी और परिवार जन शहीद हो गए और सिर्फ़ हज़रत अब्बास व इमाम हुसैन शहादत के लिए बाक़ी रह गए तो हज़रत अब्बास ने रणभूमि में जाने की इजाज़त माँगी। इमाम हुसैन ने बहुत ही हसरत से अपने भाई को देखा और कहा ''तुम तो मेरे लश्कर के अलमदार हो। तुम तो मेरी फ़ौज की ज़ीनत हो।'' हज़रत अब्बास ने कहा '' मौला अब जहां लश्कर है वहीं अलमदारी भी कर लूंगा,,, अब मुझ से तहम्मुल (बर्दाशत) मुमकिन नहीं है और मैं ज़िन्दगी से सेर हो गया हूं (यानी अब जीवित रहने की इच्छा बाक़ी नहीं है)।''

इस पर इमाम हुसैन ने कहा कि मैदान में जाना ही तो प्यासे बच्चों के लिए पानी का इन्तिज़ाम करो। हज़रत अब्बास ख़ेमें में गए और अपनी चहीती भतीजी सकीना से कहा कि मैं पानी लेने जा रहा हूं। अपनी मश्क दो। ख़ेमें में मौजूद सारे बच्चों में ख़ुशी की लहर दौड़ गई।

हज़रत हुसैन और हज़रत अब्बास का हमला:- मौलाना करारवी ने अपनी किताब में शरहे इर्शादे मुफ़ीद और अन्य किताबों के हवाले से लिखा है कि 'इमाम और हज़रत अब्बास में बातें हो ही रहीं थी कि अचानक ख़ेमों में से अल-अतश (हाय प्यास) की आवाज़ आई इस (बच्चों की) आवाज़ का इमाम हुसैन और हज़रत अब्बास पर इतना असर हुआ कि दोनों साथ साथ नहरे फ़ुरात की तरफ़ दौड़ पड़े। इमाम हुसैन इस वक़्त घोड़े पर नहीं बल्कि नाक़-ए-रसूल (पैग़म्बर हज़रत मोहम्मद के ऊंट) पर सवार थे। यह देख कर उमरे सअद का लश्कर इन दोनों भाइयों को रोकने के लिए बढ़ा। इमाम हुसैन जिस तरफ़ जा रहे थे हज़रत अब्बास उसी तरफ़ हमला करके रास्ता बनाते जाते थे। सेना में शामिल बनी दारम क़बीले के एक आदमी ने चिल्ला कर कहा लोगों क्या देखते हो,,पानी और हुसैन के बीच हायल हो (रुकावट बन) जाओ और उन्हें पानी न लेने दो। इस पर इमाम हुसैन ने कहा ''या ख़ुदा इसे प्यास का मज़ा चखा।'' यह सुन कर उस ज़ालिम ने इमाम हुसैन के गले पर तीर मारा, इमाम ने तीर निकाल कर फ़ेंक दिया। इमाम हुसैन के गले से ख़ून बहने लगा। इमाम का चल्लू ख़ून से भर गया। उसके बाद इमाम ने अल्लाह से कहा ''ऐ पालने वाले (पालनहार) तू देख रहा है कि मेरे साथ क्या क्या हो रहा है।'' उसके बाद इमाम की प्यास बहुत बढ़ गई और इमाम हुसैन ख़ेमें की तरफ़ वापस लौट गए। मगर हज़रत अब्बास जो पानी लाने के लिए ही निकले थे आगे बढ़ते चले गए।' (यद्यपि दुश्मन आप को घेरे हुए थे लेकिन आप की पेश क़दमी नहीं रुकी। आप लाशों के ढेर लगाते हुए काफ़ी दूर निकल गए और आगे बढ़ कर यह रजज़ पढ़ने लगे ''हम नस्ले हाशमी के वह जलीलुल क़द्र (सम्मानित) लोग हैं जो चमकदार और तेज़ तलवारों से तुम्हारा ख़ून बहाने के लिए ही पैदा किए गए हैं।''

''ऐ कमीनों,,ऐ ज़लीलो,,और बकरियां चराने वालों की औलादो ख़ुदा तुम्हें ग़ारत (बर्बाद) करे,, ऐ जद-ए-नामदार (ऐ मेरे सुप्रसिद्ध पूर्वज हज़रत मोहम्मद) काश आप हम पर तोड़े जाने वाले ज़ुल्म व जौर (अत्याचारों) को देखते।'' फिर अपने अज़ीज़ों की लाशों की तरफ़ देख कर बोले ''ऐ बेहतरीन गिरोह (सर्वोच्च दल) जो ग़ाज़रिया (कर्बला) में अपनी जाने अज़ीज़ (प्रिय जीवन) पर खेल गए। तलवारों के साए में मौत का आना बड़ी करामत (आदर) है। ख़ास कर ऐसी सूरत में जब जन्नत में जाने का यक़ीन कामिल (पूरा विश्वास) हो। ऐ मरने वालो! दुनिया और लज़्ज़ात दुनिया (संसारिक भोग विलास छूट जाने) पर दुखी मत होना क्योंकि गुनाहों का बख़्शा जाना बड़ी बात है और हमारे जद (हज़रत मोहम्मद) शफ़ीए महशर (मौत के बाद हिसाब किताब वाले दिन मुक्ति दिलाने वाले) हैं।'' इसके बाद आप दुश्मन पर टूट पड़े। जैसा कि लिखा जा चुका है हज़रत अब्बास इस से पहले कई बार कर्बला के मैदान में अपनी तलवार के जौहर दिखा चुके थे शायद इसी लिए आज की जंग में उन्होंने तलवार की जगह नैज़ा लिया। ताकि नैज़े की लड़ाई में अपने हुनर का प्रदर्शन करें। पिछले दस दिनों में कई बार उन्होंने दुश्मनों के दांत ख़ट्टे किए थे मगर इस बार हज़रत अब्बास ने जो हमला किया उसका अन्दाज़ बदला हुआ था। मौला अब्बास इस तरह बढ़ रहे थे कि जैसे नैज़े से नहर की तरफ़ जाने का रास्ता बना रहे हों। उनके एक हाथ में अलम (इमाम हुसैन की सेना का ध्वज) दूसरे हाथ में नैज़ा (भाला) और कान्धे पर वह मश्क थी जो उनकी प्यासी भतीजी (इमाम हुसैन की सब से छोटी बेटी) सकीना ने उन्हें पानी लाने के लिए दी थी।

नैज़ा हाथ में होने के पीछे एक रणनीती यह भी हो सकती थी कि हज़रत अब्बास चाहते थे कि कोई दुश्मन उनके क़रीब आकर युद्ध न करने पाए ताकि हज़रत सकीना की मश्क पर किसी का कोई वार लगने की सम्भावना न रहे लेकिन कुछ रिवायतों (ऐतिहासिक लेखों) में लिखा है कि हज़रत अब्बास जब ख़ेमें में गए तो उनकी भतीजी हज़रत सकीना ने उनको तलवार ले जाने से रोका और कहा ''चचा मै आप

को मैदान (युद्ध स्थल) में नहीं जाने दूंगी। क्योंकि जो भी रण भूमि में गया वह वापस नहीं आया।'' इस पर हज़रत अब्बास ने तलवार ख़ेमें में ही छोड़ दी और कहा ''अच्छा लाओ अपनी मश्क दे दो मैं पानी लेने जा रहा हूं।'' यह बात उन्होंने हज़रत सकीना को बहलाने के लिए नहीं कही थी बल्कि इमाम हुसैन ने भी उनसे यही कहा था कि भाई अगर मैदान में जा ही रहे हो तो प्यासे बच्चों के लिए पानी का इन्तिज़ाम करो।

बेमिसाल जंगः- नैज़े के युद्ध में हज़रत अब्बास ने ऐसा कौशल दिखाया की यज़ीद की सेना के पांव उखड़ गए। फ़ौज में भगदड़ सी मच गई। यह मन्ज़र (दृश्य) देख कर फ़ौजे यज़ीद का बहुत जाना माना योद्धा और सारे अरब में अपनी वीरता के लिए मशहूर सेनानी मारव इब्ने सदीफ़ तुग़लबी यज़ीदी सैनिकों की हालत देख कर चिल्लाया ''अरे तुम लोगों को क्या हो गया है और तुम लोग क्या कर रहे हो? एक बहादुर सारी सेना को क़त्ल किये दे रहा है अगर तुम इस के ऊपर एक एक मुठ्ठी ख़ाक (धूल) डालो तो यह उसी में दब कर मर जाए मगर अफ़सोस तुम्हारे बनाए कुछ नहीं बनता।'' फिर वह क्रूर चिल्ला कर बोला ''ऐ लोगो! मैं कहता हूं कि जिस जिस के गले में यज़ीद की बैयत का तौक़ (फन्दा) पड़ा है और जो भी उसकी बैयत के दायरे में आता है वह फ़ौरन सेना से अलग हो जाए क्योंकि मै इस जवान से (जिस ने बड़े बड़े सेनानियों को मार डाला है) लड़ने के लिए अकेला ही काफ़ी हूं।'' यह सुन कर शिम्र ने कहा ''अच्छा तो यही सही हम लोग हटे जाते हैं।'' उस ने अपने सेनानियों से कहा कि वह अलग हट जाएं। सब हट गए तो मारव इब्ने सदीफ़ मस्त हाथी की तरह झूमता हुआ हज़रत अब्बास की तरफ़ चला। उसके नापाक बदन पर ज़िरह, सर पर फ़ौलादी ख़ोद और हाथों में एक लम्बा नैज़ा था।

जब हज़रत अब्बास ने उसको अपनी तरफ़ आता देखा तो वह ख़ुद ही उस के क़रीब पहूंच गए। वह ग़ुस्से से पागल हो कर बोला ''ऐ नवजवान ख़ैरियत इसी में है कि हाथ से नैज़ा फेंक दे क्योंकि मुझ से पहले जो लोग तुम्हारे सामने आए वह सब बहुत ही सुस्त और कमज़ोर

थे लेकिन ऐ अब्बास याद रखो मैं ने जिस पर भी हमला किया उसे ख़त्म कर दिया।'' उसके बाद उसने शायरी के रूप में रजज़ पढ़ते हुए कहा '' ऐ अब्बास इब्ने अली मैं तुम को सीने में उतर जाने वाले नैज़े के वार से डरा कर तुम को नसीहत करता हूं अगर तुम मेरी नसीहत क़ुबूल कर लोगे तो अच्छे रहोगे। देखो आज से पहले तुम्हारे अलावा किसी नवजवान की सूरत देख कर मेरा दिल नहीं पिघला,,,देखो मैं तुम को नसीहत करता हूं कि तुम बैयत स्वीकार कर लो तो ज़िन्दगी अच्छी गुज़रेगी वर्ना मैं तुम्हें कड़ी सज़ा का मज़ा चखाऊंगा।''

हज़रत अब्बास ने उस की शायरी सुन कर उसी के रदीफ़-क़ाफ़िए (शायरी की शैली) में जवाब देते हुए कहा ''ऐ दुश्मने ख़ुदा मैं अली का बेटा और हुसैन का भाई हूं व ग़ुलाम हूं और उनकी इताअत (अनुसरण) को अल्लाह और पैग़म्बर साहब के आदेश का पालन समझता हूं। भला मैं तुझ जैसे कायर से डरूं? मै ऐसा व्यक्ति नही हूं जो मौत से डरूं और मैं ख़ूब जानता हूं कि जन्नत इस दुनिया से बहुत बेहतर है। हम दुनिया वालों की मुख़ालिफ़त (विरोध) पर सब्र कर रहे हैं और मौत को दुनिया में कोई रोक नहीं सकता। तुझ को शायद मालूम नहीं कि हर चीज़ मिटने वाली है। इन लोगों ने हम पर तीर व तलवार चलाए और हमारे साथियों को हम से जुदा कर दिया मगर मैं वह बहादुर हूं जो (इन बातों से) कभी घबराता नहीं। तुझे शायद मालूम नही है कि अकसर ऐसा भी हुआ कि नवजवानों ने बहुत ही कुशल और निपुण योद्धाओं को मात दे दी।'' हज़रत अब्बास की रजज़ सुन कर इब्ने सदीफ़ पागल हो गया और उसने हज़रत अब्बास पर नैज़े से हमला कर दिया। हज़रत अब्बास ने उस का नैज़े को हाथ से पकड़ कर इस तरह झटका दिया कि वह ख़ुद ज़मीन पर गिरा और उसका नैज़ा हज़रत अब्बास के हाथ में आ गया दिलचस्प बात यह रही कि भारी भरकम बदन वाले सवार के गिरते ही उसका घोड़ा बिदक कर भाग खड़ा हुआ। अब अपने मुंह मियां मिट्ठू बनने वाला इब्ने सदीफ़ हज़रत अब्बास के क़दमों में पड़ा थर थर कांप रहा था। यज़ीद की सेना ने यह मन्ज़र देखा तो सब डर के मारे अपनी जगह पर स्तब्ध खड़े रह गए।

शिम्र ने पुकार कर कहा ''तुम लोग इब्ने सदीफ़ की मदद को पहुंचो और दूसरा घोड़ा उस तक पहुंचाओ। फ़ौज वालों ने सारिफ़ा नाम के एक हबशी (अफ़्रीक़ी) ग़ुलाम के हाथों ताविया नाम का एक अन्य घोड़ा इब्ने सदीफ़ के पास भेजा तो इब्ने सदीफ़ ने चाहा कि वह उचक कर उस घोड़े पर सवार हो जाए लेकिन हज़रत अब्बास ने आगे बढ़ कर उस घोड़े पर क़ब्ज़ा कर लिया। उसके बाद दुश्मन से छीने हुए घोड़े पर सवार हुए और अपने घोड़े की लगाम पकड़ कर उसे साथ लिया। हज़रत अब्बास इस युद्ध के सब से बड़े विजेता के रूप मे सेना को चीरते हुए अपने भाई हज़रत हुसैन की ख़िदमत में आए और तोहफ़े के बतौर अपने भाई की चरणों में ताविया को पेश किया।

इत्तेफ़ाक़ तो देखिये कि ताविया नाम का यह घोड़ा इमाम हुसैन के बड़े भाई इमाम हसन का था जो उस वक़्त शाम की सेना के हाथ लग गया था जब कि मदायन (इराक़ के नगर) में इमाम हसन पर शामी सेना ने हमला किया था। घोड़े की वफ़ादारी तो मशहूर ही है वह घोड़ा दस वर्ष बाद अपने असली मालिक की ख़िदमत में आया तो फ़ौरन इमाम हुसैन को पहचान गया और उनके पैरों पर अपना सिर रगड़ने लगा।

उधर इब्ने सदीफ़ चिल्ला कर अपनी फ़ौज वालों से बोला ''हाए अब्बास मेरे ही घोड़े पर सवार हो गए हो और मुझे यक़ीन है कि मेरे ही नैज़े से मुझे क़त्ल भी कर देंगे।'' उसकी बातें सुन कर यज़ीदी सेना के कई अधिकारी उसके क़रीब आ गए और उन्होंने इब्ने सदीफ़ को दूसरा नैज़ा दिया। (शायद हज़रत अब्बास इस लिए भी वापस चले गए थे कि निहत्थे पर वार करना उनकी शान के ख़िलाफ़ था।)

सैनिकों को इब्ने सदीफ़ के निकट आता देख कर हज़रत अब्बास दोबारा मैदान में पहुंचे और इब्ने सदीफ़ से कहा ''मैं तुझे क्यों न अब उस चीज़ का मज़ा चखा दूं जो तुझे जहन्नुम की याद दिला दे।'' उस के बाद हज़रत ने उसके हाथों पर नैज़े से ऐसा वार किया कि उसका दूसरा नैज़ा भी छूट गया इस तरह वह जहन्नुमी मौत के घाट उतर कर अपनी मन्ज़िल पर पहुंच गया। उस के बाद अली के विजयी शेर ने सेना के उन सैनिकों पर हमला कर दिया जो इब्ने सदीफ़ की मदद के

लिए आए थे। अनेक सैनिक हज़रत अब्बास के इस हमले में भी मारे गए। हज़रत अब्बास इस कामयाबी के बाद लौट कर अपने भाई हज़रत हुसैन के क़रीब आए।

बहनों से आख़री मुलाक़ात :- दोनो भाईयों में इसी युद्ध के बारे बातें हो रहीं थी कि अचानक ख़ेमों से 20 या 25 बच्चे निकल कर आए और हाए प्यास प्यास के नारे लगाने लगे। हज़रत अब्बास से इमाम हुसैन ने कहा कि ''ऐे भाई गुलज़ारे रिसालत के यह फूल पानी के बिना मुरझाए जा रहे हैं फ़ुरात की तरफ़ जाओ और इन्के लिए पानी लाओ।'' हज़रत अब्बास जब जाने लगे तो इमाम हुसैन ने अजीब जुमला (वाक्य) कहा ''भय्या ख़ेमें में जा कर सब से इस तरह मिल लो कि जैसे अब मुलाक़ात नहीं होगी।'' हज़रत अब्बास ख़ेमें मे गए तो अपनी बहन हज़रत ज़ैनब और हज़रत उम्मे कुलसूम से मिले। दोनों बहनें हज़रत अब्बास के इस अन्दाज़ से रूखसत होने पर रोने लगीं। हज़रत ज़ैनब ने रोते हुए कहा ''ऐे भय्या इस वक़्त मुझे बचपन का वह दिन याद आ रहा है जब कि मैं अपने बाबा (पिता) की गोद में बैठी थी और बाबा मेरे बाज़ुओं (बाहों) पर प्यार करने लगे मैं ने जब घबरा कर पूछा कि बाबा आप ऐसा क्यों कर रहे हैं तो बाबा ने कहा कि ऐ ज़ैनब एक दिन इन्हीं बाज़ुओं में रस्सी बान्धी जाएगी। इस पर मैं ने कहा बाबा जिस का अब्बास सा भाई दुनिया में मौजूद हो उसके बाज़ू में भला कौन रस्सी बान्ध सकेगा लेकिन अब्बास आज मुझे यक़ीन हो गया कि मेरे बाज़ुओं में रस्सी ज़रूर बन्धेगी।'' दोनों बहनों के गले लग कर हज़रत अब्बास ने ख़ूब आंसूं बहाए।

ख़बर थी ज़ैनब ओ कुलसूम को यह बचपन से
रिदा यह सिर पे बस अब्बास की हयात में है।

इसी बीच इमाम हुसैन को ख़ेमें के बाहर अकेले ख़ड़े देख कर फ़ौजे यज़ीद ने हमला कर दिया इमाम हुसैन ने कहा ''या अब्बास इदरकनी'' (ऐ अब्बास मेरी मदद करो) हज़रत अब्बास ख़ेमें से बाहर आए और बाहर निकलते ही ख़ेमे के निकट आ गई फ़ौज पर हमला किया और उसको बहुत दूर तक भगा दिया।

इस बार हज़रत अब्बास इमाम हुसैन से रुख़सत हुए बिना ही चले थे और इमाम हुसैन को यह बात मालूम थी कि इस बार अब्बास वापस नहीं आयेंगे इस लिए हज़रत अब्बास के पीछे पीछे ख़ुद भी चले। हज़रत अब्बास को महसूस हुआ कि कोई रोता हुआ पीछे आ रहा है उन्होंने मुड़ कर देखा तो इमाम हुसैन अपनी कमर पकड़े या अब्बास,, या अब्बास,,कहते हुए रो रहे हैं और उनकी तरफ़ आ रहे हैं। हज़रत अब्बास ने घोड़े को वापस लौटाया और इमाम हुसैन के पास आए। इमाम बोले ''ऐ अब्बास ज़रा ठहरो,, एक नज़र और जी भर के तुम को देख लूं,, इमाम की यह हालत देख कर ख़ुद मौला अब्बास भी ज़ोर ज़ोर से रोने लगे। दोनों भाई गले मिल कर इतना रोए कि बेहोश होने लगे। जब यह मन्ज़र (दृश्य) ख़ेमे मे मौजूद औरतों ने देखा तो उन्होंने या अब्बास और या हुसैन के इतने नारे लगाए कि कोहराम मच गया। ख़ेमे में औरतों का यह हाल देख कर दोनों ने अपने आप को संभाला और औरतों को चुप करवाया। इस के बाद दोबारा हज़रत अब्बास नहर की तरफ़ रवाना हुए ताकि पानी ला सकें।

इमाम से रूख़सत होन के बाद जब अब्बास आगे बढ़े तो आसमान की तरफ़ देख कर दुआ की ''ऐ पालने वाले मैं तेरे नबी के बच्चों के लिए थोड़ा पानी लेने आया हूं ख़ुदाया तू ऐसा इन्तिज़ाम कर दे कि मैं सिर्फ़ एक मश्क ख़ेमे तक पहुंचा दूं।'' दुआ के बाद आप ने घोड़े की रफ़तार तेज़ कर दी।

किस में हिम्मत थी कि वह सदीफ़ जैसे पहलवानों की लाशें देखने के बाद भी हज़रत अब्बास को रोकने के लिए बढ़ता । भागते हुए सैनिकों में जिसकी मौत आती वह ग़लती से हज़रत के रास्ते में आ जाता और जहन्नुम में अपने बुज़ुर्गों के पास पहुंच जाता। हज़रत अब्बास की ताक़त का यह हाल था कि जिस सैनिक को हाथों में उठा कर उछाल देते थे वह ज़मीन पर गिरता तो हड्डी पसली चूर चूर हो जाती।

फ़ुरात की पहाड़ी पर क़ब्ज़ा:- नहरे फ़ुरात और हुसैन के ख़ेमों के रास्ते में एक पहाड़ी भी थी जिस पर चार हज़ार सैनिक तैनात थे। उस पहाड़ी के पास पहुंच कर हज़रत अब्बास ने फिर से रजज़ पढ़ी '''मैं

सीने में एक हिदायत याफ़्ता (सत्य मार्ग पर चलने वाला) दिल के साथ तुम से लड़ रहा हूं और पैग़म्बर के नवासे के दुश्मनों को ख़त्म कर रहा हूं। मैं तुम को उस वक़्त तक मारता रहूंगा जब तक कि तुम मेरे सरदार के साथ लड़ाई से बाज़ न आओगे। मैं मोहब्बत करने वाला अब्बास हूं और उस अली का बेटा हूं जिसको अल्लाह की तरफ़ से शक्ति मिली थी।'' अब्बास ने हमला करके पहाड़ी पर क़ब्ज़ा कर लिया। इतिहास बताता है कि इस हमले में हज़रत अब्बास ने सैंकड़ों यज़ीदी सैनिकों को नर्क की आग में झोंक दिए। बाक़ी भाग लिए। हज़रत अब्बास ने पहाड़ी से उतर कर कहा ''अरे ऐ आदमियों की सूरत रखने वालो! ख़ुदा और रसूल से शर्म करो,, जिस नहर से नजिस (अपवित्र) जानवर तक पानी पी सकते हैं तुम उस के पानी को पैग़म्बर साहब के बच्चों पर बन्द किए हो,,क्या तुम क़यामत (प्रलय) को भूल गए हो?'' यह सुन कर यज़ीदी सेना ने जवाब में तीरों की बारिश शुरू कर दी मगर इन तीरों ने हज़रत अब्बास के हौसले को और बढ़ा दिया और वह बिजली की तरह यज़ीदी सेना पर टूट पड़े और सेना को भागने का रास्ता ढूंढने के अलावा कोई चारा नज़र नहीं आया।

मौलाना नज्मुल हसन कररावी ने अपनी किताब ज़िक्र-उल-अब्बास में रौज़तुल शोहदा, तज़किरतुल मासूमीन रियाज़ुल सालिकीन व अन्य किताबों के हवाले से निम्न तथ्य लिखे हैं

फ़ुरात पर पहला क़ब्ज़ाः- अली के शेर ने तीर अन्दाज़ों को दूर तक खदेड़ कर नदी में घोड़ा डाल दिया और अपने घोड़े से कहा ''ऐ मेरे अस्पे (अश्व) वफ़ादार तू पानी पी ले अभी घोड़े ने पानी में मुंह भी न डाला था कि दुश्मनों ने फिर से हमला कर दिया अली का शेर बाहर निकला और नदी के इन पहरेदारों के हमले को विफल कर दिया।

हज़रत अब्बास दूसरी बार नहर मेंः- यज़ीदी फ़ौज को दूर तक भगाने के बाद हज़रत अब्बास एक बार फिर नहर की तरफ़ वापस आये और ने दूसरी बार घोड़े को नहर में उतारा और चाहा कि घोड़ा पानी पी ले लेकिन इतिहासकारो और प्रत्यक्षदर्शियों का कहना है कि उस वफ़ादार घोड़े ने पानी में मुहं तक नहीं डाला।

मासूम के बेटे भी थे भाइ भी थे अब्बास
हैरत नहीं दरिया को जो लब तशना ही रखा
दरिया के कलेजे में खटकती है यही बात
अब्बास के घोड़े ने भी पानी नहीं चक्खा।

इस से पहले कि घोड़ा पानी में मुंह डालता भागी हुई सेना फिर पलट आई। दुश्मनों का यह हमला सब से बड़ा हमला था और इस के पीछे इरादा यह था कि किसी भी तरह हज़रत अब्बास को पानी लेने से रोका जाए। एक अकेले योद्धा को घेर कर यज़ीदी सेना ने नहरे फ़ुरात पर लगभग दोबारा क़ब्ज़ा कर ही लिया था लेकिन अल्लाह रे अली के शेर की ताक़त,,सारे दुश्मनों को शिकस्त दे कर फ़ुरात के किनारे से हटा दिया।' हर तरफ़ चीख़-पुकार मच गई हज़रत अब्बास ने बस इतना कहा ''अना अब्बास इब्ने अली'' (मैं अब्बास हूं अली का बेटा)।' यह बताने का मक़सद यही था कि बस ख़ैरियत इसी में है कि ख़ामोश हो कर बैठ जाओ और मुझे हुसैन के बच्चों तक पानी पहुंचाने दो।'

अस्ल में फ़ौजे यज़ीद में इतने अधिक सेनानी थे कि हज़ार दो हज़ार के मरने के बाद भी उसकी संख्या में कोई कमी नज़र नहीं आती थी और वह फिर से टिड्डी दल की तरह उमंड कर आ जाती थी। मगर हज़रत अब्बास से लड़ने के लिए जितनी भी फ़ौज आती उतनी ही कम पड़ जाती। हर बार यज़ीदी सेना को मुंहकी खाना पड़ती। इस बार भी यही हुआ और हज़रत अब्बास ने फ़ौजों को भगा कर फिर से नहर के अन्दर घोड़े को उतार दिया।

तीसरी बार नदी पर क़ब्ज़ाः- हज़रत अब्बास ने नदी में अपना घोड़ा उतार कर उस पर क़ब्ज़ा करने का एलान किया और अपना अलम पानी पर लहरा दिया।

एक तश्नालब के क़दमों ने आबाद कर दिया
पानी की बून्द बून्द का दिल शाद कर दिया
क़ैदी बना के रखा था फ़ौजे यज़ीद ने
अब्बास ने फ़ुरात को आज़ाद कर दिया

ठन्डे दिल से सोचिये कि कोई तीन दिन का प्यासा, रात भर की

इबादत का जागा, दिन भर की लड़ाई का थका मान्दा और दिल पर बच्चों व भाइयों की शहादत का दाग़ उठाने वाला कोई सिपाही नहर पर क़ब्ज़ा करके पहला काम क्या करेगा? ज़ाहिर है कि वह सब से पहले पानी पियेगा। लेकिन अल्लाह रे हज़रत अब्बास की वफ़ादारी चुल्लू भर पानी हाथ में लिया लेकिन पानी पीने का इरादा तक नहीं किया।' बल्कि पानी हाथ में ले कर शायद सोचा होगा कि यही वह पानी है जिसके बग़ैर अली अकबर, औन ओ मोहम्मद, क़ासिम, मेरे तीन जवान भाई और चान्द जैसे दो बेटे शहीद हो गए? यह वही पानी है जिसकी एक एक बून्द के लिए हुसैन के छोटे छोटे बच्चे तीन दिन से तरस रहे हैं,, मेरी प्यासी भतीजी सकीना इसी पानी के इन्तिज़ार में मेरे अलम पर निगाहें लगाए बैठी है? अल्लाह जाने किस किस का मासूम चेहरा उस पानी में उभरा होगा। फ़ौरन चुल्लू से पानी को फेंक दिया।

प्यासे ने ख़ुश्क होंट न रखे फ़ुरात पर
तारीख़ में यह पानी की पहली शिकस्त है।

पानी को फ़ेंक कर हज़रत अब्बास शायद दुनिया को यह एहसास दिलाना चाहते हों कि तीन दिन तक प्यासा रख कर कोई हम को हरा नहीं सकता। हम जीतने के लिए ही दुनिया में भेजे गए हैं।

कहा अब्बास ने दरिया के मुंह पर फ़ेंक कर पानी
तेरी औक़ात क्या? हम से समन्दर हार जाते हैं।

उसके बाद हज़रत सकीना की मश्क को कान्धे से उतार कर पानी में भिगोया और पानी भरा।

यह सोच कर कि छुआ है इसे सकीना ने
जरी की मश्क से आकर लिपट गया दरिया

फिर मश्क को आराम से भरा। दुश्मन की हारी हुई सेनाएं हज़रत अब्बास को पानी भरते हुए देखती रहीं।

यज़ीद इतने से पानी पे नाज़ था तुझको?
यह देख मश्क के अन्दर सिमट गया दरिया

कुछ किताबों में लिखा है कि हज़रत अब्बास की वफ़ादारी का यह

आलम था कि पानी को मश्क में भरने और नदी के पानी को चुल्लू में लेने के कारण हाथ भीग गए थे तो दिल में ख़्याल आया कि मेरे भाई हुसैन के हाथों ने तो तीन दिन से पानी की नमी तक महसूस नहीं की है यह सोचते ही फ़ौरन अपनी अबा (अरबों के विशेष लिबास) से अपने हाथ सुखा लिए।

यज़ीदी सेना की घेराबन्दीः- जब अली का शेर नदी से पानी भर कर बाहर निकला तो भागी हुई सेना फिर से एकत्रित हो चुकी थी। उसने शेर को घेर लिया। तीन दिन की प्यास, बाहों में पानी से भरी एक मश्क, एक हाथ में अलम व घोड़े की लगाम और दूसरे हाथ में नैज़ा लिए वह युद्ध भी कर रहे थे और अरबी भाषा में कुछ शेर भी पढ़ते जा रहे थे जिनका भावार्थ इस प्रकार हैः'

लोग अब्बास कहते हैं मुझको
मैं ने नफ़्से रसूल की ख़ातिर
नफ़्स अपना सिपर बनाया है
क्या हुआ जो है जंग का हंगाम
मौत मन्डराए मेरे सिर पे मगर
मुझ को दुश्मन पे वार करना है
मैं कभी मौत से नहीं डरता
मैं हूं सक़्क़ाए अहले बैते हुसैन
मश्क लेकर ही जाऊंगा मैं तो
लोग अब्बास कहते हैं मुझको
लाख तेग़ों के ज़ख़्म खाऊं मै
कर्बला की सुलगती धरती पर
जब तलक आज गिर न जाऊं मैं
मश्क लेकर ही जाऊंगा मैं तो
सब्र और शुक्र है मेरा शेवा
क्या भला मौत की मुझे परवाह
मैं कभी मौत से नहीं डरता

लोग अब्बास कहते हैं मुझको
मश्क ले कर ही जाऊंगा मैं तो

जिस घड़ी दुश्मन चारों तरफ़ से घेरे हो,,तलवारें बदन को घायल कर रही हों,,तीर जिस्म को छलनी करने के लिए कमानों से निकल रहे हों, ख़ेमों में प्यासे बच्चे हाय प्यास हाय प्यास के नारे लगा रहे हों,,, ऐसे आलम में शायरी करना तो दूर की बात किसी इन्सान के लिए अपना मान्सिक सन्तुलन बनाए रखना भी कठिन है। यह छोटी सी अरबी भाषा की कविता हज़रत अब्बास के वफ़ादारी और वीरता की अमर कहानी हमेशा हमेशा दोहराती रहेगी।

नदियों पर क़ब्ज़ा करना, क़ब्ज़े को तोड़ कर पानी लाना यह अरबों की प्राचीन सभ्यता थी। हम पहले लिख चुके हैं कि जब सिफ़्फ़ीन की जंग के मौक़े पर मुआविया की सेना ने फ़ुरात नदी पर क़ब्ज़ा करके हज़रत अली की सेना पर पानी रोक दिया और हज़रत अली के सैनिकों ने फिर से हमला करके उस पर दोबारा क़ब्ज़ा किया तो मुआविया के सैनिक समझते थे कि बदले में हज़रत अली की तरफ़ से भी मुआविया की सेना पर पानी बन्द कर दिया जाएगा। मगर हज़रत अली ने प्राचीन परंपरा को तोड़ते हुए कहा कि पानी रोकना अमानवीय है और जंग जीतने के लिए अमानवीय हथकंडे वह नहीं अपना सकते। हज़रत अली के शेर दिल बेटे हज़रत अब्बास ने तो बिल्कुल अद्भुत परंपरा डाली। हमेशा दरिया को जीतने वाला व्यक्ति नदी पर विजय पाने के बाद अपने दुश्मनों के सामने खुले आम पानी पी कर इस बात का गर्व करता था कि अब दरिया उसकी जागीर है, लेकिन हज़रत अब्बास दुनिया के ऐसे पहले और आख़िरी इन्सान थे जो दरिया को जीतने के बाद भी प्यासे ही दरिया से निकले।

जरी के होंटों का बोसा न ले सका पानी
क़लक़ इसी का अभी तक दिले फ़ुरात में है।
निकल रहा है इधर शेर घाट से तन्हा
उधर दरिन्दों की एक फ़ौज उसकी घात में है

हज़रत अब्बास जब नदी से निकले तो उनकी निगाहें उस ख़ेमे की

तरफ़ केन्द्रित थीं जहां उनकी प्यासी भतीजी हज़रत सकीना उनका इन्तिज़ार कर रही थीं। उनकी मात्र यही कोशिश थी कि उन्हें जितने भी ज़ख़्म लगें लेकिन मश्के सकीना को कोई नुक़सान न पहुचे।

ख़ेमे में भी अजीब आलम था सारे बच्चे हज़रत सकीना के साथ एक ख़ेमें में मौजूद थे और युद्ध स्थल पर निगाहें लगाए थे। तीन दिन के बाद फ़ौज दरिया से दूर हटी तो आज छोटे छोटे बच्चों को ठन्डा पानी दूर से दिखाई दिया।

हटी है फ़ौज-ए-सितमगर जो तीन रोज़ के बाद
फिर आज ख़ेमे से दरिया दिखाई देता है

सब बच्चे यह देख कर खुश हो रहे थे कि किस तरह हज़रत अब्बास तराई में उतरे और किस तरह मश्क में पानी भरा और अब ख़ेमे की तरफ़ बढ रहे हैं। फिर बच्चों ने देखा कि सेना ने हज़रत अब्बास को चारों तरफ़ से घेर लिया है। हज़रत अब्बास नज़र आना बन्द हो गए। अब बच्चों की निगाहें अलम पर लगी थी। मौलाना कल्बे आबिद साहब मरहूम मजलिसों में कहा करते थे '' जैसे जैसे अलम आगे बढ़ता रहा था बच्चों को दिल बढ़ता जा रहा था।''

उधर बच्चों की निगाहें अलम पर और इधर अब्बास की निगाहें ख़ेमे पर थीं। वह बार बार रकाबों पर बुलन्द हो कर देखते थे कि अब ख़ेमा कितनी दूर रह गया है। फ़ौजे यज़ीद के सिपाहियों की हिम्मत नहीं हो रही थी कि क़रीब आकर हमला करें इस लिए तीर अन्दाज़ों ने बाणों की वर्षा करके हज़रत अब्बास को रोकना चाहा लेकिन हज़रत अब्बास इन तीरों से खुद तो घायल हुए लेकिन मश्क पर कोई तीर लगने नहीं दिया।

हज़रत अब्बास बार बार दाएं बाएं देख कर रहे थे कि किस तरह वह जल्द से जल्द इमाम हुसैन के ख़ेमों तक पहुंच जाएं। एक बार झुक कर उन्होंने अपने घोड़े के कान में कहा ''ऐ अस्पे वफ़ादार मुझे मालूम है तू प्यासा भी है और थका हुआ भी लेकिन किसी तरह दुश्मनों के इस घेरे से निकाल कर मुझे हुसैन के ख़ेमों तक पहुंचा दे ताकि यह पानी उनके छोटे छोटे बच्चों तक पहुंच जाए और प्यासे बच्चे पानी पी

सकें।''

इस दौरान हज़रत अब्बास के हाथों लगभग साढ़े चार सौ यज़ीदी सैनिक मारे गए। हज़रत अब्बास लड़ाई में भी मसरूफ़ थे और मश्क की हिफ़ाज़त भी कर रहे थे। यज़ीदी सेना की कोई चाल कामयाब नहीं रही थी। इस लिए छल-कपट का सहारा लिया गया।

पहला हाथ शहीदः- ख़जूर के पेड़ों को जोड़ कर बनाइ गई एक कमीनगाह (छुपने की जगह) में हकीम बिन तुफ़ैल ताई नामक कपाटी हत्यारा छुप गया और उसने ने हज़रत अब्बास पर ऐसा वार किया कि उनका दाहिना हाथ कट कर गिर गया। हाथ कटने से अलम एक बार झुका और ख़ेमे में बैठे बच्चों के नन्हे नन्हे दिल अचानक डूबने लगे लेकिन दूसरे ही पल उनके दिल फिर से संभल गए क्योंकि हज़रत अब्बास ने फ़ौरन ही मश्क और अलम दूसरे हाथ में ले लिए।

अब वह एक ही हाथ से हमला कर रहे थे और अधिक जोश के साथ इन अलफ़ाज़ में रजज़ पढ़ रहे थे ''ऐ दीन के दुश्मनो! ख़ुदा की क़सम अगर तुम ने मेरा दाहिना हाथ काट दिया तो कुछ परवाह नहीं। मैं इसी हाल में अपने दीन (धर्म) और अपने सच्चे इमाम हज़रत हुसैन की मदद करता रहूंगा (जो हज़रत मोहम्मद के नवासे हैं) यक़ीनन हज़रत मोहम्मद अल्लाह के सच्चे नबी (प्रतिनिधि) और अल्लाह की वहदत (एकेश्वर वाद) की तसदीक़ (प्रमाणित) करने वाले थे।''

एक हाथ कटने के बाद हज़रत अब्बास का जलाल (ग़ुस्सा) और जोश देख कर उमरे सअद ने चिल्ला कर अपने सैनिकों से कहा '' अरे तुम्हारा बुरा हो मश्क पर तीरों की बौछार कर दो और उसके टुकड़े टुकड़े कर दो। खुदा की क़सम अगर हुसैन ने पानी पी लिया तो वह तुम सब को फ़ना (समाप्त) करके छोड़ेंगें। क्या तुम्हें मालूम नहीं कि वह रोज़गार शहसवार (विश्व विख्यात घोड़ा दौड़ाने वाले) अली के बेटे और ज़बरदस्त बहादुर हैं।''

इधर एक अकेला वीरों का वीर था और उधर असंख्य कपाटी हत्यारे इस शेर का एक हाथ कटा हुआ था मगर अभी भी किसी में इतनी हिम्मत नहीं थी कि सामने आ कर हज़रत अब्बास पर वार करता। वह

मश्क बचाने की कोशिश में भी लगे थे और उनका अलम भी उंचा रहे यह कोशिश भी लगातार जारी थी यही अलम ख़ेमे में बैठे बच्चों की आख़िरी उम्मीद था। हज़रत अब्बास इसी कोशिश में थे कि बस मश्क बच्चों तक पहुंच जाए। वह कहते जा रहे थे ''ऐ नफ़्स (अन्तरात्मा) काफ़िरों से मत झिझक और अल्लाह की रहमत से ख़ुश हो जो तमाम नेक लोगों के सरदार हज़रत मोहम्मद, तमाम पाक ओ पाकीज़ा लोगों और सय्यदों के साथ मिलेगी। इन उपद्रवी तत्वों ने मेरा हाथ काट दिया ऐ ख़ुदा इन को (जहन्नुम की) आग की गर्मी से जलाना।''

दूसरा हाथ जुदाः- इस परिस्थिति का फ़ायदा उठाते हुए ज़ैद बिन वरक़ा नामक एक हत्यारे ने पीछे से वार कर के हज़रत अब्बास का बायाँ हाथ भी काट दिया। इस जगह पर मौलाना कल्बे आबिद साहब मरहूम फ़रमाते थे ''ऐ दोस्तो! अब अलम संभालो या फिर ख़ेमे मे बैठे बच्चों का दिल संभालो क्योंकि इस बार जो अलम गिरा तो फिर बुलन्द नहीं हुआ।''

दूसरा हाथ कटने के बाद अलम और नैज़ा पीछे छूट गए लेकिन हज़रत अब्बास ने मश्क को दाँतों में दबा कर आगे बढ़ना जारी रखा ताकि प्यासे बच्चों तक पानी पहुँच जाए। मगर एक ज़ालिम ने मश्क पर तीर मार कर उस का सारा पानी बहा दिया। मश्क पर तीर लगते ही हज़रत अब्बास की हर उम्मीद टूट गई उन्होंने खेमे की तरफ़ बढ़ना छोड़ दिया और ज़ीन पर सिर रख कर कहा ''या रब्ब! अब मुझे ख़ेमे में जाना नसीब न हो,,हाए प्यासी औरतों और बच्चों को क्या जवाब दूंगा।'' उनके जिस्म पर भी लगातार तीर बरस रहे थे।

उनके लिए घोड़े पर संभलना मुश्किल हो रहा था इसी बीच फ़ौजे यज़ीद का एक अधिकारी हकीम इब्ने तुफ़ैल उनके क़रीब आया और बोला ''ऐ अब्बास तुम तो बड़े बहादुर हो अब मैं समझूं जो तुम अपनी शुजाअत के जौहर दिखाओ।'' हज़रत अब्बास ने कहा ''तू उस वक़्त कहां था जब मेरे हाथ सलामत थे? थोड़ी देर पहले आता तो मैं तुझे दिखाता कि शुजाअत किसे कहते हैं।''

सिर पर गुर्ज़ का वारः- इसी बीच हज़रत अब्बास की दाहिनी आंख में एक तीर लगा मौला ने अपने दोनों घुटनों को मिला कर उस तीर को खींचना चाहा तो उस ज़ालिम ने उनके सिर पर गुर्ज़ (गदा) से हमला किया अब्बास घोड़े से ज़मीन पर आए। अल्लाह रे हज़रत अब्बास की मजबूरी जो भी शहीद घोड़े से गिरा ज़मीन तक आते वक़्त उसके हाथ मौजूद थे लेकिन हाय हमारे मज़लूम आक़ा जो मुंह के बल घोड़े से ज़मीन पर तशरीफ़ लाए।

हज़रत अब्बास ने अपने चहीते भाई को आवाज़ दी ''आक़ा अपने ग़ुलाम का आख़िरी सलाम क़ुबूल कीजिए।'' हज़रत की आवाज़ सुन कर इमाम हुसैन ने दोनों हाथों से अपनी कमर थाम ली और कहा कि हाय मेरी कमर टूट गई। (अरब में भाई के मर जाने को कमर टूट जाने का जैसा समझा जाता था। क्योंकि भाई को परिवार में वही दर्जा प्राप्त होता था जो शरीर में कमर का होता है अर्थात अगर किसी की कमर टूट जाए तो फिर वह असहाय और चलने फिरने की ताक़त खो देता है। हज़रत अली ने भी जब जंगे मोतअ में अपने भाई जाफ़रे तैय्यार के शहीद होने की ख़बर सुनी तो यही फ़र्माया था कि अब मेरी कमर टूट गई।)

हज़रत अब्बास की आवाज़ सुन कर इमाम हुसैन ने घोड़े को रणभूमि की तरफ़ दौड़ाया उनको ग़ुस्से में आगे बढ़ता देख कर जो यज़ीदी फ़ौजी अपनी जान बचा कर भागता था इमाम कहते थे ''अब कहां भागते हो तुम ने तो मेरे भाई को मार डाला?'' इमाम ने रास्ते में अस्सी यज़ीदी सैनिकों को क़त्ल किया। हमीद इब्ने मुस्लिम नाम का इतिहास कर लिखता है कि हज़रत अब्बास के लाशे पर पहुंचने के लिए इमाम हुसैन ने तेज़ी से घोड़े को दौड़ाया अचानक घोड़ा रुक गया और इमाम हुसैन ने जल्दी से उतर कोई चीज़ उठा कर अपने सीने से लगाई और ज़ार ज़ार रो कर कहा हाए भाई हाए अब्बास तुम्हारी शहादत से हुसैन की कमर टूट गई और राहे चारा (हल निकलने की राह) मसदूद (बन्द) हो गई। मैंने पूछा ऐ अबु अब्दुल्लाह (ऐ हुसैन) आप ने किस चीज़ को ज़मीन से उठा कर अपने सीने से लगाया? हज़रत ने अपनी

बाहें खोल दीं मैंने देखा कि हज़रत अब्बास के हाथ हैं।'' कुछ अन्य इतिहासकारों ने लिखा है कि हज़रत इमाम हुसैन ने दो अलग अलग स्थानों से हज़रत अब्बास के हाथ उठाए और उसके बाद वह हज़रत अब्बास की लाश पर पहुंचे।

मौलाना कल्बे आबिद साहब मरहूम इस मौक़े का ज़िक्र करते हुए कहते थे ''हम अगर पहले का हाल देखें तो पहले हज़रत अब्बास का एक हाथ जुदा हुआ फिर वह कुछ आगे बढ़े तो दूसरा हाथ कटा। उसके बाद मश्क पर तीर लगा फिर हज़रत अब्बास शहीद हुए तो इस हिसाब से जब इमाम हुसैन चले हैं तो सब से पहले हज़रत अब्बास की लाश मिलना चाहिए थी और उसके बाद मश्क फिर दोनों हाथ। लेकिन पहले एक हाथ मिला फिर दूसरा हाथ इमाम ने उठाया इस हालत को देख कर लगता है कि मश्क पर तीर लगने के बाद हज़रत अब्बास ने अपना घोड़ा फिर से दरिया की तरफ़ शायद यह सोच कर मोड़ दिया कि अब ख़ेमे में जा कर क्या करूंगा।''

हज़रत अब्बास की शहादतः- इमाम हुसैन जब हज़रत अब्बास की लाश पर पहूंचे तो देखा कि हज़रत अब्बास ज़ख़्मों से चूर चूर हैं आप ने कहा ''ऐ भाई अब्बास,, ऐ दिल के सुकून,, ऐ आंखों की ठण्डक,, ऐ मेरे नासिर और मददगार अरे तुम्हारी जुदाई मेरे लिए सब की जुदाई से ज़्यादा मुश्किल है। ऐ अब्बास दुश्मनों ने तुम्हें क़त्ल करके हुसैन की कमर तोड़ दी और हुसैन की कमर टूटने से इस्लाम की कमर टूट गई,,ऐ अब्बास तुम्हारे हाथ कटने से हुसैन के हाथ कट गए और हुसैन के हाथ कटने से मोहम्मद मुस्तफ़ा के हाथ कट गए।''

इमाम हुसैन की आवाज़ सुन कर हज़रत अब्बास ने ग़श से आंखे ख़ोल दी और इमाम की ताज़ीम (सम्मान) को उठने की कोशिश करने लगे मगर उठ न सके। फिर आंखें बन्द हो गईं। इमाम हुसैन ने कोशिश की कि भाई को उठा कर ख़ेमे में ले जाएं । हज़रत अब्बास को जब लगा कि उनको उठाया जा रहा है तो आंखें खोल दीं और इमाम हुसैन से पूछा कि भाई क्या इरादा है? इमाम ने कहा तुम्हें ख़ेमे में ले जाना चाहता हूं।'' इस पर हज़रत अब्बास ने तड़प कर कहा ''आप को रसूले

मक़बूल (लोकप्रिय हज़रत मोहम्मद) का वास्ता आप मुझे ख़ेमे में न ले जाएं।'' इमाम हुसैन ने पूछा ''भाई क्यों?'' हज़रत अब्बास ने कहा मुझे सकीना से शर्म आती है मैं उस से वायदा करके आया था कि मैं उसके लिए पानी लाऊंगा और मैं अपना वायदा पूरा नहीं कर सका इस लिए मैं सकीना के सामने जाना नहीं चाहता।''

इमाम हुसैन ने हज़रत अब्बास का सिर अपनी गोद में रखना चाहा तो हज़रत अब्बास ने सिर हटा लिया। इमाम हुसैन तड़प कर बोले ''क्यों भय्या मेरी गोद से अपना सिर क्यों हटा रहे हो?'' हज़रत अब्बास बोले''मैं नहीं चाहता कि वक़्त शहादत मेरा सिर आप के ज़ानू पर हो लेकिन जब आप शहीद हों तो आपका सिर जलती हुई ज़मीन पर हो।'' हज़रत अब्बास ने यह भी कहा ''मेरी तरफ़ से मेरी बहन ज़ैनब से कहिएगा कि मेरे ग़म में सिर के बाल न खोलें और सिर पीट पीट कर न रोयें। मेरी पत्नी (हज़रत लुबाबा) से कहिएगा कि मेरे जो हक़ूक़ (दायित्व) बाक़ी रह गए हों उन्हें वह माफ़ कर दें।''

हज़रत अब्बास की वसीयतें सुनने के बाद इमाम हुसैन ने कहा ''मेरी भी एक हसरत है अब्बास क्या तुम उसको पूरा करोगे?'' हज़रत अब्बास तड़प कर बोले ''हुक्म कीजिये मेरे आक़ा?'' इमाम हुसैन ने कहा ''तुम ने ज़िन्दगी भर मुझे आक़ा कहा। मेरे दिल में हमेशा यह हसरत रही कि तुम मुझे कभी भाई कह कर पुकारो।'' इमाम की ख़्वाहिश सुनते ही हज़रत अब्बास ने ''भय्या'' कहा और जिस्म से रूह परवाज़ कर गई। इमाम हुसैन ने हज़रत अब्बास की लाश पर अरबी में एक नौहा पढ़ा जिस का भावार्थ निम्न लिखित है

ऐ मेरे भाई मेरी आखों की ठन्डक दिल के चैन
रह नहीं सकता तेरे बिन एक पल को भी हुसैन
हाशिमी तुम चान्द थे तो रौशनी क़ुर्बान की
तुम ने दीने हक़ की ख़ातिर ज़िन्दगी क़ुर्बान की
ऐ मेरे प्यासे बरादर तश्ना लब और तश्ना काम
काम मेरे हर क़दम आया है तू ही नेक नाम

है ख़ुदा शाहिद कि अब यह ज़िन्दगी बेसूद है
पी लिया तूने सरे मक़तल शहादत का जो जाम
हूं बहुत बेचैन मिलने के लिए अब्बास मैं
चन्द ही लम्हों मे आता हूं तुम्हारे पास मैं

यह नौहा पढ़ कर आंसू पोछते हुए हज़रत अब्बास की लाश पर से उठे और यज़ीदी सेना से ख़िताब किया '' ऐ बदतरीन क़ौम (दुनिया के सब से बुरे समुदाय) तुम ने अपनी सरकशी की वजह से ज़ुल्म पर कमर बान्ध ली है और तुम ने हमारे बारे में हज़रत मोहम्मद (के आदेश) की मुख़ालिफ़त की। क्या दुनिया के सब से उच्च महा पुरुष हज़रत मोहम्मद ने हमारे बारे में वसीयत नहीं की थी (हज़रत मोहम्मद ने कहा था कि मैंने इस्लाम फैलाने में जो यात्नाएं सहन की है उनके बदले में तुम से कुछ नहीं चाहता सिवाए इसके कि मेरे परिवार के लोगों से मोहब्बत करो।) क्या अल्लाह के सब से प्रिय पैग़म्बर हज़रत मोहम्मद हमारे नाना नहीं थे? क्या मेरी मां हज़रत फ़ातिमा ज़हरा नहीं थी? क्या सही रास्ता दिखाने वाले पैग़म्बर साहब के दामाद हज़रत अली मेरे पिता नही थे? सुनो तुम पर लानत (अभिशाप) रहेगी और जो गुनाह तुम ने किए हैं उनका हिसाब लिया जाएगा। याद रखो तुम लोग जल्द ही जहन्नुम के शोलों में जलाए जाओगे।''

हज़रत अब्बास एक ऐसे मज़लूम शहीद थे जिनके लाशे को इमाम हुसैन गंजे शहीदां तक नहीं ला सके क्योंकि दुश्मनों ने उनके जिस्म को टुकड़े टुकड़े कर दिया था। कहा जाता है कि वह सिर्फ़ ख़ून में डूबा हुआ वह अलम लेकर ख़ेमे में वापस आए जो कर्बला के युद्ध में हज़रत अब्बास की निशानी बन चुका था। हज़रत अब्बास से पूर्व दुनिया में हज़ारों अलमदार हुए लाखों लोगों ने अपनी अपनी सेनाओं का नेतृत्व किया लेकिन न तो किसी की याद में कहीं अलम सजाया गया न ही किसी शहीद या अलमदार के नाम से अलम का नाम इस तरह से जुड़ा कि अलम का नाम ज़बान पर आते ही उसका ख़्याल दिल में आने लगता हो । यह गौरव सिर्फ़ हज़रत अब्बास को ही प्राप्त है की इस्लाम के नाम पर जो ध्वज आज कहीं भी उठते हैं उनको अब्बास के

अलम के नाम से याद किया जाता है।

हाथ कटने से नहीं गिरते कभी मश्को अलम
वक़्त आने पर यह साबित कर दिया अब्बास ने

इमाम हुसैन की ख़ेमे में वापसीः- पुस्तक ज़िक्र उल अब्बास में आग़ा दरबन्दी के हवाले इमाम हुसैन की ख़ेमे में वापसी का वर्णन इन शब्दों में किया गया है ''हज़रत अब्बास के जिस्मे मुतहर (पवित्र पार्थव शरीर) को मैदान में छोड़ कर आस्तीन से आंसू पोछते हुए जैसे ही ख़ेमे के अन्दर पहुंचे हज़रत सकीना दौड़ पड़ीं और लजामे फ़रस (घोड़े की लगाम) से लिपट कर कहने लगीं ''ऐ बाबा जान (पिता श्री) आप को मेरे चचा अब्बास की भी कुछ ख़बर है? ऐ बाबा मैंने उनसे पानी की ख़्वाहिश की थी वह अब तक पलट कर नहीं आए। बाबा जान वह तो अपना वादा कभी भूला नहीं करते आप सच बताइए कि क्या वह हम सब को भूल गए या हुसूले आब (पानी लाने) के लिए दुश्मनों से अब तक लड़ रहे हैं?'' यह सुन कर इमाम हुसैन बेसाख़्ता रो पड़े और कहने लगे ''मेरी बेटी तुम्हारे चचा अब्बास क़त्ल कर दिये गए और उनकी रूह जन्नत की तरफ़ परवाज़ कर (आत्मा जन्त में पहुंच) गई।''

इमाम हुसैन की ज़बान से हज़रत अब्बास की शहादत की बात सुन कर हुसैनी ख़ेमों में कोहराम मच गया। औरतें व बच्चे सिर व सीना पीट कर रोने लगे। हज़रत ज़ैनब ने रोते हुए नारा लगाया ''वा अब्बासा वा अब्बासा (हाए मेरे भाई अब्बास) ऐ अब्बास तुम ने तो मेरे लिए सख़्त मायूसी पैदा कर दी।'' हज़रत अब्बास की शहादत से प्यासे बच्चों की उम्मीद टूट गई क्योकि अब उनकी प्यास बुझाने वाला कोई नहीं था। हज़रत अब्बास की शहादत के बाद ख़ेमों में मचे कोहराम के बारे में मशहूर सुन्नी धर्मगुरू अबू इस्हाक़ असफ़रायनी ने किताब नूर उल ऐन में लिखा है '' हज़रत अब्बास की शहादत की ख़बर का ख़ेमे में पहुंचीं तो औरतें ख़ेमे से निकल पड़ीं और बेपनाह गिरया करने (रोने) लगीं उनकी आवाज़े बुलन्द थीं। इन के रोने से मलायका (फ़रिश्ते) भी गिरया कुनां थे। यह देख कर इमाम हुसैन ने औरतों को ख़ेमे में वापस भेजा।''

सक़ा-ए-सकीनाः- हम पहले लिख चुके हैं कर्बला में यज़ीदी फ़ौज ने मोहरर्म की 2 तारीख़ को ही नदी पर क़ब्ज़ा कर लिया था तब से 6 मोहरर्म तक हज़रत अब्बास अनेक बार युद्ध करके पानी लाए थे इसी लिए हज़रत अब्बास को इमाम हुसैन ने सक़्क़ाय अहले हरम (परिवार जनों की प्यास बुझाने वाले) का ख़िताब दिया था लेकिन आशूर के बाद से उन्हें सक़ा-ए-सकीना भी कहा जाने लगा क्योंकि जब वह ख़ेमे से निकले तो वह जंग करने के इरादे से नहीं बल्कि अपनी प्यासी भतीजी के लिए पानी लाने के मक़सद से निकले थे। इसी लिए इस बार उनके हाथों में तलवार नहीं बल्कि एक नैज़ा, अलम और मश्क के अलावा कुछ नहीं था हमें यक़ीन है कि अगर वह तलवार ले कर निकलते तो इस बार भी मैदान से फ़ौजों को भगा कर ही आते (इतिहास इस बात का साक्षी है कि उनके पिता हज़रत अली ने कई युद्धों मे अकेले ही पूरी सेना को मात दी थी) लेकिन इस युद्ध में तो अपनी और अपने बच्चों की क़ुर्बानी दे कर इस्लाम को बचाना था इस लिए अल्लाह को यही मन्ज़ूर था कि अब्बास मैदाने जंग में तलवार ले कर न जाएं।

हज़रत अब्बास को मश्के सकीना इतनी अज़ीज़ थी कि मरते दम भी उनके सीने से मश्क-ए-सकीना लिपटी हुई थी। इतिहासकार हमीद इब्ने मुस्लिम लिखता है ''मैं ने आगे निगाह की तो देखा कि झुलसती हुई रेत पर एक तरफ़ अब्बास की लाश है और दूसरी तरफ़ मश्के सकीना छिदी हुई पड़ी है।''

चचा भतीजी के पवित्र रिश्ते को हज़रत अब्बास और हज़रत सकीना ने ऐसी उंचाइयों पर पहुंचाया कि आज भी मातम के दौरान दोनों का नाम एक साथ लिया जाता है और मातमदार 'हाए सकीना हाए अब्बास' कहते हुए मातम करते हैं। आज दुनिया भर मे अलम के जुलूस उठाए जाते हैं और इस अलम के साथ साथ एक छोटी सी मश्क बना कर लटकाई जाती है ताकि कर्बला के एक प्यासे चाचा की प्यासी भतीजी क़यामत तक एक दूसरे से जुदा न हों।

इनको जुदा न कर सका तीरे सितम कोई
सदियां गुज़र गईं हैं कि मश्को अलम हैं साथ

हज़रत अली असग़र की क़ुर्बानी:- हज़रत अब्बास की शहादत के बाद इमाम हुसैन ने एक ऐसी क़ुर्बानी दी जिसकी मिसाल रहती दुनिया तक मिलना मुमकिन नहीं। इमाम अपने 6 महीने के बच्चे हज़रत अली असग़र को मैदान में लाए। हज़रत अली असग़र पानी न होने के कारण प्यास से बेहाल थे। पानी न मिलने के कारण अली असग़र की माँ जनाबे रबाब का दूध भी ख़ुश्क हो गया था। इमाम पास की एक छोटी सी पहाड़ी पर तशरीफ़ ले गए और हज़रत अली असग़र के लिए उन्होंने दुश्मनों से पानी तलब किया लेकिन किसी का दिल नहीं पसीजा मगर जब हज़रत अली असग़र ने जब सूखे हुए नन्हें नन्हें होंटों पर ज़बान फेरी तो सेना में खलबली मच गई।

तलवार के बग़ैर ही लश्कर उलट दिया
असग़र भी रन में आए तो अब्बास बन गए।

जब सेना का यह हाल देखा तो उमर साअद ने हुरमुलाह नाम के एक मशहूर तीर अंदाज़ को आदेश दिया कि वह इस बच्चे को क़त्ल कर दे। उस ज़ालिम ने हज़रत अली असग़र के गले पर तीर मार कर उन्हें शहीद कर दिया। हुरमुलाह ने इस बात को साबित कर दिया कि इमाम हुसैन से टकराने वाला यज़ीदी लश्कर जानवरों से भी बदतर था। यज़ीदी सेना की दरिन्दों के साथ तुलना करना जानवरों की बेइज़्ज़ती करना है।

इमाम हुसैन नन्हे से अली असग़र की लाश को ले कर ख़ेमे में आए तो मां हज़रत रबाब ने बस इतना कहा '' ऐ मेरे लाल क्या तेरे जैसे नन्हें बच्चे भी ज़बह किये जाते है?'' उसके बाद इमाम हुसैन ख़ेमे के पीछे तशरीफ़ ले गए और उन्होंने अपनी तलवार से एक छोटी सी क़ब्र बनाई और अपने फूल से बच्चे को कर्बला की धरती के हवाले किया। (अगर हज़रत अली असग़र की शहादत का ज़िक्र पूर्ण रूप से किया जाए तो अलग से एक अन्य किताब लिखना पड़ेगी इसी लिए संक्षेप में ज़िक्र किया गया है।)

इमाम हुसैन का जिहाद

हज़रत अली असग़र की शहादत के बाद अल्लाह का एक पाक बंदा, पैग़म्बर साहब का चहीता नवासा, हज़रत अली का शेर दिल बेटा, जनाबे फ़ातिमा की गोद का पाला और हज़रत हसन के बाज़ू की ताक़त यानी हुसैन-ए-मज़लूम कर्बला के मैदान में तन्हा और अकेला खड़ा था। उनके ख़ेमे में पुरूषों में अब कोई ऐसा न था जो उनके लिए युद्ध करता सिर्फ़ उनके सबसे बड़े बेटे हज़रत अली इब्नुल हुसैन बाक़ी बचे थे जो इतने ज़्यादा बीमार थे कि युद्ध करना तो दूर बिना सहारे के ख़ड़े भी नहीं हो सकते थे। (उन्हें आज भी बीमारे कर्बला के नाम से याद किया जाता है।) इमाम हुसैन बिल्कुल अकेले थे। उनका कोई मददगार जीवित न था लेकिन हज़ारो हत्यारों के बीच एक वीरों का वीर सिर उठाए शान से खड़ा था। उस बहादुर को इस बात पर नाज़ था उसका भरा घर लुट गया लेकिन इस्लाम व पवित्र क़ुरआन पर कोई आंच नहीं आई और पैग़म्बर साहब के घराने के सब से अहम व्यक्ति को ख़ुद अपनी जान दे कर इस्लाम को बचाने का दायित्व निभाना था। तीन दिन की भूख़ प्यास के बावजूद और तन्हाई के आलम में भी चेहरे पर नूर और सूखे होंटों पर मुस्कुराहट थी, ख़ुश्क ज़ुबान में छाले पड़े होने के बावजूद दुआएँ थीं। थकी थकी पाक आँखों में अल्लाह का शुक्र था। 57 साल की उम्र में 72 अज़ीज़ों और साथियों की लाशें उठाने के बाद भी क़दमों का ठहराव कहता था कि अल्लाह का यह बंदा कभी हार नहीं सकता। मशहूर शायर जोश मलिहाबादी फ़रमाते हैं।

तारीख़ दे रही है यह आवाज़ दम ब दम
दश्ते सबात ओ अज़्म है दश्ते बला ओ ग़म
सब्र-ए-मसीह ओ जुरर्त-ए-सुक़रात की क़सम
इस राह में है एक ही इन्सान का क़दम
जिस की रगों में आतिश-ए-बद्र-ओ-हुनैन है
जिस सूरमा का इस्म-ए-गिरामी हुसैन है

इमाम हुसैन शहादत के लिए तैयार हुए। ख़ेमों में आए अपनी छोटी

बहनों जनाबे ज़ैनब और जनाबे उम्मे कुलसूम को गले लगाया और कहा कि अब वह इम्तिहान की आखिरी मन्ज़िल पर हैं और इस मन्ज़िल से भी वह आसानी से गुज़र जाएँगे। इमाम हुसैन परिवार जनों से रुख़सत हुए और मैदान में आए।

ऐसे हाल में जब कि कोई मददगार और साथी नहीं था फिर भी इमाम हुसैन बढ़ बढ़ कर हमले कर रहे थे। वह शेर की तरह झपट रहे थे और यज़ीदी फ़ौज के किराए के टट्टू अपनी जान बचाने के लिए कोने ढूंढ रहे थे। किसी में इतनी हिम्मत नहीं थी के वह अकेले बढ़ कर इमाम हुसैन पर हमला करता। बड़े बड़े सूरमा दूर खड़े हो कर जान बचा कर भागने वालों का तमाशा देख रहे थे।

हज़रत सुग़रा का ख़तः- सुन्नी धर्म गुरु अल्लामा राशिद उल ख़ैरी ने अपनी किताब 'सय्यदा का लाल' में लिखा है कि इसी लड़ाई के बीच ऊंट पर सवार एक मुसाफ़िर तेज़ी से आता हुआ नज़र आया। इमाम उसके इन्तिज़ार में उसी की तरफ़ रूख कर के ख़ड़े हो गए। वह इमाम के पास आया और ऊंट से उतरते ही इमाम के पैरों पर गिर पड़ा। इमाम ने पूछा कि तुम कहां से और क्यों आए हो? उसने जवाब दिया ''मैं मदीने का रहने वाला हूं और बनी फ़ातिमा (आपके परिवार) का ग़ुलाम हूं। एक दिन दोपहर के वक़्त जब गर्मी तेज़ पड़ रही थी मैं एक गली से गुज़र रहा था तो मैं ने या हुसैन या हुसैन की जिगर ख़राश (दिल को प्रभावित करने वाली) आवाज़ सुनी, मैं ने नज़र उठा कर देखा तो एक बच्ची ज़मीन पर बैठी हुसैन हुसैन के नारे लगा रही थी मेरा दिल भर आया मैं ने पास जा कर पूछा कि ऐ बच्ची तुम कौन हो। वह बच्ची फूट फूट कर रोने लगी और बोली ''मैं बाप से बिछड़ी हूं भाइयों से छूटी हूं खुदा का वास्ता सुग़रा का ख़त बाप तक पहुंचा दे।''

(हम पहले लिख चुके हैं कि हज़रत हुसैन जब मदीने से चले हैं तो उनकी एक बेटी हज़रत सुग़रा बहुत बीमार थीं इस लिए सफ़र नहीं कर सकती थीं। इमाम हुसैन ने चलते वक़्त उनसे वायदा किया था कि उनकी हालत ठीक होते ही वह चचा अब्बास या भाई अली अकबर को भेज कर उन्हें अपने पास बुला लेंगें। इमाम को मदीना छोड़े हुए 6

महीने हो चुके थे। हज़रत सुग़रा रात दिन इस इन्तिज़ार में थीं कि चचा या भाई आ कर उनको ले जाएंगे।)

उस मुसाफ़िर ने जो ख़त दिया उस में लिखा था कि बाबा आप ने वायदा किया था कि चचा अब्बास को या भाई अकबर को लेने के लिए भेजूंगा मैं उनके इन्तिज़ार में हूं। ख़त देख कर इमाम हुसैन रोने लगे और फिर उस मुसाफ़िर को साथ लिए हुए हज़रत अब्बास और हज़रत अली अकबर की लाशों के क़रीब आए और पुकार कहा ''ऐ अब्बास तुम्हारी भतीजी सुग़रा का ख़त आया है उस ने तुम से शिकवा किया है कि तुम उस को लाने के लिए नहीं गए।''यह कह कर बेइन्तिहा रोए और आंसू पोछते हुए वापस आए।

इमाम हुसैन की क़ुर्बानीः- इस के बाद इमाम हुसैन मैदान जंग में अपनी क़ुर्बानी देने के लिए उस पहाड़ी की तरफ़ चले जहां उनकी गोद में हज़रत अली असग़र शहीद हुए थे लेकिन रास्ते में ही यज़ीदी सेना ने बहुत बड़ा हमला कर दिया इमाम हुसैन शेर की तरह झपटे तो दुश्मन इधर उधर भागने लगे। जब यज़ीदी सेना को इमाम हुसैन पर कामयाबी नहीं मिली तो उसके अनेक सैनिक ख़ेमों की तरफ़ दौड़ पड़े यह देख कर इमाम हुसैन ने शिम्र को आवाज़ दी और कहा ''ऐ आले अबु सुफ़ियान तुम्हारी ग़ैरत और हम्मियत (लज्जा) क्या हो गई है? अगर तुम्हें ख़ुदा का डर नहीं तो कम से कम अरबों की परम्परा का लिहाज़ (ध्यान) रखो अरे जंग हम से और तुम से हो रही है मेरी ज़िन्दगी में मेरे ख़ेमों को ताराज (लूटपाट) करना कोई इन्सनियत नहीं है अरे शिम्र अपने लश्कर के इन सिर फिरों को मना कर।'' उसके बाद इमाम हुसैन ने अपनी लड़ाई का केन्द्र ख़ेमों के नज़दीक ही सीमित कर लिया। ताकि उनके ज़िन्दगी में कोई यज़ीदी सैनिक ख़ेमों के नज़दीक न आने पाए और औरतों व बच्चों को कोई नुक़सान न पहुंचें। दिन भर की लड़ाई की थकन, बला की गर्मी, जलती हुई रेत, तीन दिन की भूख व प्यास, जवान बच्चों और भाइयों की लाश उठाने का ग़म और औरतों व बच्चों की रोने की आवाज़ों के बीच इमाम हुसैन इतने बड़े लश्कर से अकेले टक्कर ले रहे थे किसी में अभी भी इतनी हिम्मत नहीं थी कि

उनसे अकेले लोहा लेता। इमाम हुसैन बढ़ बढ़ कर वार कर रहे थे। एक अंग्रेज़ इतिहासकार जेम्स कारकर्न ने अपनी किताब हिसट्री आफ़ चाइना में लिखा है ''इमाम हुसैन जिनकी बहादुरी के सामने रुस्तम का नाम लेना इतिहास न जानने की दलील है। कर्बला में आठ क़िस्म के दुश्मनों में घिरे हुए थे। चार तरफ़ यज़ीदी सेना, दो दुश्मन भूक व प्यास और दो दुश्मन धूप व जलती रेत की तपिश। इस के बावजूद हुसैन ने कमाल की दिलेरी और इन्तिहाई बहादुरी का सुबूत दिया।''

इमाम के हमलों और भागती हुई फ़ौजों को देख कर यज़ीदी फ़ौज का कमांडर शिम्र चिल्लाया कि "खुदा तुम से समझे, खड़े हुए क्या देख रहे हो? इन्हें क़त्ल कर दो, खुदा करे तुम्हारी माएँ तुम्हें रोएँ'' इस के बाद सारी फ़ौज ने मिल कर चारों तरफ़ से हमला कर दिया। हर तरफ़ से तलवारों, तीरों और नैज़ों की बारिश होने लगी इमाम हुसैन के पाक बदन पर हर तरफ़ से घाव लगने लगे। जब भी कोई ज़ख़्म लगता इमाम हुसैन कहते ''ऐ अब्बास ख़बर लो,, हुसैन मुसीबत में है।'' आख़िर में सैंकड़ों ज़ख़्म खा कर इमाम हुसैन घोड़े की पीठ से गिर पड़े। मीर अनीस कहते हैं।

उन्नीस सौ हैं ज़ख़्म तने चाक चाक पर
ज़ैनब निकल हुसैन तड़पते हैं ख़ाक पर

इमाम हसन के तीसरे बेटे की शहादत:- इमाम जैसे ही रण में गिरे इमाम का क़ातिल उनका सर काटने के लिए बढ़ा। तभी ख़ेमे से इमाम हसन का ग्यारह या बारह बरस का बच्चा अब्दुल्लाह बिन हसन अपने चचा को बचाने के लिए बढ़ा और अपने दोनों हाथ फैला दिए। इस बच्चे का भी वही हश्र हुआ जो इस पहले मैदान में आने वाले मासूमों का हुआ था। अब्दुल्लाह बिन हसन के पहले हाथ कटे और बाद में जब यह बच्चा इमाम हुसैन के सीने से लिपट गया तो बच्चों की जान लेने में दक्षता प्राप्त कर लेने वाले तीर अंदाज़ हुरमुलाह ने एक बार फिर अपना ज़लील हुनर दिखाया और इस मासूम बच्चे ने इमाम हुसैन की आग़ोश में ही दम तोड़ दिया।

फिर सैंकड़ों ज़ख़्मों से घायल इमाम हुसैन का सिर उनके जिस्म से

जुदा करने के लिए शिम्र आगे बढ़ा और इमाम हुसैन को क़त्ल कर के उसने मानवता का चिराग़ गुल कर दिया। लेकिन कुछ चिराग़ ऐसे होते हैं जिनके बुझ जाने से अँधेरा नहीं होता बल्कि उनकी रौशनी में इज़ाफ़ा हो जाता है। इमाम ने यह बात भी हमेशा हमेशा के लिए साफ़ कर दी कि तलवारों को मात देने के लिए तलवारों पर नहीं अपनी गर्दनों पर भरोसा करना चाहिए।

शहादत के बादः- इमाम हुसैन की शहादत के बाद यज़ीद की सेनाओं ने अमानवीय और राक्षसी आदतों के तहत इमाम हुसैन की लाश पर घोड़े दौड़ाए। उसके बाद बर्बरता और क्रूरता का नंगा नाच शुरू हुआ और इमाम हुसैन के ख़ेमों में आग लगा दी गई। उनके परिवार को आतंकित करने के लिए छोटे छोटे बच्चों के साथ मार पीट की गई। पैग़म्बर साहब के पवित्र घराने की औरतों को क़ैदी बनाया गया उनका सारा माल लूट लिया गया। इन हालात में भी हज़रत अब्बास की वफ़ादारी और फ़र्ज़ शिनासी (कर्तव्य पालन) को औरतें व बच्चे हर पल याद कर रहे थे। जब किसी सम्मानित महिला के सिर से चादर छीनी जाती वह हाय अब्बास का नारा लगाती। यज़ीदी फ़ौज का कोई सिपाही जब भी किसी बच्चे पर अत्याचार करता वह नहरे फ़ुरात की तरफ़ मुंह करके हज़रत अब्बास को मदद के लिए आवाज़ देता। हज़रत ज़ैनब लूट पाट के माहौल में सब से परेशान थी। क्योंकि उन्हीं को अकेले तमाम बच्चों को भी सम्भालना था, अन्य महिलाओं को भी दिलासा देना था साथ ही अपने बीमार भतीजे हज़रत अली इब्नुल हुसैन को भी जलते हुए ख़ेमो से बाहर निकालना था वह सब को दिलासा भी दे रही थीं और घबरा घबरा कर आवाज़ दे रहीं थीं ''ऐ भय्या हुसैन,, ऐ भय्या अब्बास आओ हमारी ख़बर लो हम पर दुश्मन छाए हुए हैं और हमें सता (हम पर अत्याचार कर) रहे हैं। इसके बाद इमाम हुसैन के परिवार जनों को ज़ंजीरों और रस्सियों में जकड़ करके गिरफ़्तार किया गया। इस तरह इन पवित्र लोगों को अपमानित करने का सिलसिला शुरू हुआ। अस्ल में यह उनका अपमान नहीं था खुद यज़ीद की पराजय की घोषणा थी।

नन्ही सकीना का अज़ीम किरदारः- दिन भर की लू धूप और जला देने वाली गर्मी के बाद कर्बला के तपते हुए रेगिस्तान में रात के अन्धेरे ने अपनी बाहें फैलाईं और छोटे छोटे मासूम बच्चों को शदीद गर्मी से राहत दी। इस रात को शामें ग़रीबां (मुसाफ़िरों की रात) कहा जाता है। कर्बला में जब शामे ग़रीबां आई तो हर तरफ़ अजीब मन्ज़र था इधर हुसैनी ख़ेमों में दूर तक अन्धेरा था और उधर यज़ीदी सेना मशालों की रौशनी में अपने ही लाश पर ख़ुद ही रक़्स कर रही थी, इधर अज़ीज़ों की लाशें, बेबसी और वीरानी थी और उधर यज़ीद के सेना में शराब ओ कबाब की मस्ती थी नशा था। इधर न सिर छुपाने के लिए ख़ेमे थे न बैठने के लिए फ़र्श और उस तरफ़ मख़मल के बिस्तरों पर नाच रंग की महफ़िल सजी थी। उधर शहीदों के सरों को नैज़ों पर सजाया जा रहा था इधर हर मां अपने बच्चे को ढूंढ रही थी।

हज़रत ज़ैनब ने अपनी बहन उम्मे कुलसूम से कहा कि तुम सारे बच्चों को एक जगह जमा करो मैं रात भर पहरा दूंगी। जब बच्चों को जमा किया गया तो नन्ही सी सकीना कहीं नहीं मिली हज़रत ज़ैनब और हज़रत उम्मे कुल्सूम उनकी तलाश में निकलीं। तभी दूर से एक बच्चे के रोने की आवाज़ सुनाई पड़ी दोनों जल्दी से उस तरफ़ गईं तो देखा कि हज़रत सकीना अपने पिता इमाम हुसैन की लाश से लिपटी हुई रो रही हैं। जनाबे ज़ैनब हज़रत सकीना को साथ ले कर वापस आईं।

मौलाना कल्बे आबिद साहब मरहूम शामे ग़रीबां के एक अहम वाक़ए को मर्म स्पर्शी अन्दाज़ में यूं बयान करते थे ''भूखे प्यासे बच्चों को एक जगह पर बिठा कर हज़रत ज़ैनब फिर से पहरा देने लगीं। तब ही कर्बला के भयावह अन्धेरे को चीर कर फ़ौजे यज़ीद की ओर से कुछ जलती हुई मशालें इस तरफ़ आती हुई नज़र आई। अली की बेटी ने एक टूटी हुई तलवार हाथों में थाम ली और आगे बढ़ कर कहा ''ऐ इस तरफ़ आने वाले अगर तू हमें लूटने के इरादे से आ रहा है तो कल सुबह लूट लेना हमारे थके हुए बच्चे अभी अभी सोए हैं।'' जब वह रौशनी क़रीब आई तो उस में एक ऐसी औरत का चेहरा दिखाई पड़ा जिसका पति दुनिया की सारी दौलतों को ठुकरा कर आज सुबह को

ही जन्नत की तरफ़ रवाना हुआ था। उस औरत ने हज़रत ज़ैनब के क़दमों पर सिर रख कर कहा ''बीबी हम लुटेरे नहीं हैं,,मैं आपके भाई हज़रत हुसैन पर अपनी जान निछावर करने वाले हुर की ज़ौजा (बीवी) हूं और बच्चों के लिए खाना पानी लाई हूं।'' हज़रत ज़ैनब ने पानी पिलाने के लिए प्यासे बच्चों को जगाना शुरू किया तो सब से पहले हज़रत सकीना को जगाया और कहा लो सकीना पानी पी लो।'' सकीना गहरी नींद से अचानक जागीं तो घबरा कर बोलीं ''क्या मेरे अम्मू (चचा) पानी ले आए?'' हज़रत ज़ैनब ने रो कर कहा ''अरे बेटी अब अब्बास कहां वह तो नहर पर हाथ कटवाए सो रहे हैं। यह पानी तो हुर की ज़ौजा (बीवी) लाई है।'' हज़रत सकीना ने पूछा ''फुफी जान आप ने पानी पिया?'' हज़रत ज़ैनब ने कहा ''नहीं सकीना तुम्हें तो मालूम है कि हमारे परिवार में सब से पहले छोटे बच्चों को पानी पिलाया जाता है। तुम छोटी हो तुम पियो।'' यह सुनना था कि हज़रत सकीना ने पानी का प्याला अपने हाथ में लिया और उस तरफ़ चल दीं जहां एक छोटी सी क़ब्र बनी थी हज़रत ज़ैनब ने कहा ''बेटी कहां जा रही हो किधर जा रही हो?'' हज़रत सकीना ने कहा ''फुफी जान आप ही ने तो कहा था कि सब से पहले छोटे बच्चों को पानी पिलाया जाता है,,मेरा भाई अली असग़र तो मुझ से भी छोटा है पहले मैं उसे पानी पिलाऊंगी फिर ख़ुद पियूंगी।'' इमाम हुसैन के परिवार वालों की यही सब से बड़ी ख़ूबी थी कि उन्होंने इस्लामी शिक्षाओं, मानवीय परम्पराओं और अपने आदर्शों को ऐसे वक़्त में भी पूरी तरह निभाया जहां पर फ़रिश्तों के भी क़दम डगमगा जाते। हज़रत सकीना की जगह कोई और बच्चा होता तो कड़ी प्यास में पानी पहले पीता और सवाल बाद में करता। यही नहीं हज़रत सकीना कर्बला की घटना के बाद हमेशा यही कह कर रोती रहीं ''ऐ अम्मू जान (मेरे चचा अब्बास) मुझे पानी नहीं चाहिए बस आप लौट आइए।'' ऐसा लगता है कि हज़रत सकीना को कर्बला की घटना के बाद शायद पानी से ही नफ़रत हो गई थी। क्योंकि सिर्फ़ एक महीने के अन्दर ही उनकी सीरिया के क़ैद ख़ाने में मौत हो गई। उनके भाई इमाम ज़ैनुल आबदीन की ज़बानी सुनें तो वह

फ़रमाते हैं कि जब उनकी नन्ही सी बहन को गुस्ल दिया गया तो हज़रत सकीना का पवित्र शरीर हडिड्यों के ढांचे में तबदील हो चुका था। इमाम के इस कथन से पता यह चलता है कि हज़रत सकीना के बदन में पानी की बेइन्तिहा कमी हो गई थी। (जो लोग डाकटरी से जुड़े है उन्हें पता है कि Dehydration से जो बच्चे मरते हैं उनका जिस्म हडिड्यों का ढांचा लगने लगता है।)

पैग़म्बर साहब का परिवार बन्दीः- शामे ग़रीबां के बाद ग्यारह मोहरर्म का दिन आया तो तमाम औरतों और बच्चों को रस्सी से जकड़ा गया और फिर सारा माल व ज़ेवर लूट लिया गया फिर पैग़म्बर साहब के परिवारजनो को क़ैद करके गली कूचों में घुमाया गया और बाद में कूफ़े में उन्हें इब्ने ज़ियाद के दरबार में पेश किया गया। तत्पश्चात इमाम हुसैन की बहनों ,बेटियों, विधवाओं और यतीम बच्चों को सीरिया की राजधानी दमिश्क़ भेजा गया। जहां के शासक यज़ीद ने इमाम हुसैन के बच्चों को जेलख़ाने में क़ैद करने का आदेश दिया। (यज़ीद के दरबार में बन्दियों से सुलूक, इमाम ज़ैनुल आबदीन और हज़रत ज़ैनब का वहां यज़ीद को मुंह तोड़ जवाब, सीरिया में क़ैद और इमाम हुसैन के क़ाफ़िले की रिहाई इत्यादी का यहां पर ज़िक्र करना मुम्किन नहीं है क्योंकि किताब बहुत विस्तृत हो जाएगी इस लिए केवल उन्हीं घटनाओं का वर्णन कर रहा हूं जो मौला अब्बास की क़ुर्बानियों से जुड़ी हुई हैं।)

हज़रत अब्बास के घोड़े की वफ़ादारीः- घोड़ा दुनिया के उन जानवरों में शामिल है जिन्होंने इन्सानी ज़िन्दगी को आगे बढ़ाने और मानव के विकास में बहुत बड़ा किरदार निभाया है। इन्सान सदियों से जानवरों को यातायात के साधन के रूप में इस्तेमाल करता आया है लेकिन घोड़े को इन साधनों में एक अलग मक़ाम हासिल है। घोड़े की ख़ास बात यह है कि यातायात और खेती में उपयोगी होने के साथ साथ यह बहुत वफ़ादार भी होता है। थोड़ी ही सी ट्रेनिंग और प्रशिक्षण के बाद घोड़े अपने मालिक के इशारों पर काम करने लगते हैं अरब में तो घोड़ों को युद्ध में भाग लेने के लिए इस तरह का प्रशिक्षण भी दिया

जाता था कि उन्हें तीरों की बौछार में कैसे भागना है। जब तलवार से आमने सामने युद्ध हो रहा हो तो उसकी रफ़्तार क्या होगी कैसे कांवा काट कर वह अपने सवार की मदद करेगा। घोड़े की वफ़ादारी उसके मालिक से ही नहीं होती है बल्कि परिवार के अन्य सदस्यों को भी घोड़े अच्छी तरह पहचानते हैं।

इसी लिए ख़ान्दाने रिसालत में जो घोड़े आये उनके नाम भी इतिहास में अमर हो गए। पैग़म्बर साहब के घोड़े का नाम ज़ुलजनाह था, हज़रत अली के घोड़े का नाम दुलदुल था हज़रत हुसन के एक घोड़े का नाम ताविया था जिस के बारे में हम काफ़ी लिख चुके हैं ताविया के बाद इमाम हसन के पास शहबा नाम का एक और घोड़ा रहा। कर्बला में इमाम हुसैन के पास रसूल का घोड़ा था तो हज़रत अब्बास के पास हज़रत अली का घोड़ा था। जब इमाम हुसैन शहीद हुए और उनके घोड़े ने उनकी लाश के चारों तरफ़ घूमना शुरू किया ताकि कोई दुश्मन क़रीब न आने पाए तो कुछ यज़ीदी सैनिकों ने उसे तीरों से मार देने का इरादा किया इस पर शिम्र ने चिल्ला कर कहा ''अरे क्या करते हो इसे मत मारो यह रसूल की सवारी का घोड़ा है।'' (अल्लाह रे शिम्र का ढोंग,, पैग़म्बर साहब के कान्धे पर सवार हो कर अपना बचपन गुज़ारने वाले इमाम हुसैन को तो घायल करने के बाद उनका सिर काटने की तैयारी में था और एक घोड़े को मारने की कोशिश करने वालों को रोक रहा था अस्ल में वह इस घोड़े को गिरफ़्तार करके यज़ीद को भेंट करना चाहता था ताकि उचित इनाम मिले)

इमाम हुसैन के घोड़े के लिए यह बात जगह जगह किताबों में मिलती है कि जब इमाम हुसैन घोड़े से गिरे तो उसने अपने माथे को ख़ून से तर किया और इमाम के ख़ेमे के बाहर जा कर हिन्हिनाया ताकि औरतों व बच्चों को मालूम हो जाए कि इमाम हुसैन शहीद हो गए। घोड़े की पीठ ख़ाली देख कर ख़ेमों में कोहराम मच गया। बाद में यह घोड़ा जब इमाम हुसैन के क़रीब फिर लौट कर आया तो फ़ौजे यज़ीद ने कमन्दें (रस्सियों के फ़न्दे) फेंक कर उसे गिरफ़्तार करना चाहा लेकिन वह भागते भागते नहरे फ़ुरात में उतर कर डूब गया। लेकिन हज़रत अब्बास

के घोड़े को गिरफ़्तार करने में फ़ौजे यज़ीद कामयाब हो गई और उसको यज़ीद के पास ले जाया गया। यज़ीद को वह घोड़ा बहुत पसन्द आया और उसने उस पर सवार होना चाहा मगर घोड़े ने यज़ीद को सवार नहीं होने दिया।

पैग़म्बर साहब के परिवार में अपनी ज़िन्दगी गुज़ारने वाला वह घोड़ा भी यह जानता था कि उसकी पीठ पर अब्बास जैसे पाकीज़ा व्यक्ति को ही बैठने का अधिकार है। जिस जानवर ने अहले बैत के पाक ओ पाकीज़ा साए में अपनी ज़िन्दगी के दिन गुज़ारे हो वह भला यज़ीद जैसे नजिस, जुआरी, शराबी और कुकर्मी को अपनी पीठ पर कैसे बैठने देता? जब घोड़े पर कोई सवार न हो सका तो यज़ीद ने सोचा कि कुछ अर्से के लिए घोड़े को अस्तबल में रख दिया जाए हो सकता है वह अपने मालिक को भूल जाए और उस के बाद वह घोड़ा शायद क़ाबू में आ जाए। इस घोड़े को रोज़ टहलाने के लिए साएस (ट्रेनर) निकलते थे। मौलाना नज्मुल हसन करारवी किताब ऐनुल बुका के हवाले से लिखते हैं कि एक दिन वह घोड़ा सीरिया के उस क़ैदख़ाने के सामने से गुज़रा जहां इमाम हुसैन के परिवार के लोग क़ैद थे। घोड़े को देख कर हज़रत अब्बास की भतीजी हज़रत सकीना ने घोड़े को पहचान लिया और उसे आवाज़ दी। घोड़ा हज़रत सकीना के क़रीब आया तो वह अपने चचा को याद करके चींख़ चींख़ कर रोने लगीं। घोड़े को साएस वापस अस्तबल में ले गया लेकिन कहा जाता है कि इस वाक़ए के बाद से घोड़े ने खाना पानी छोड़ दिया और चन्द ही दिन में मर गया।

इमाम के परिवार की रिहाईः- लगभग एक वर्ष के बाद जब इमाम हुसैन के परिवारजन क़ैद से रिहा हुए और सीरिया से चल कर कर्बला होते हुए मदीने पहुंचे तो नोअमान बिन बशीर नाम का मुनादी (उद्‌घोषक) क़ाफ़िले के आगे आगे यह सदा देता हुआ चल रहा था कि ऐ मदीने के लोगों हुसैन का लुटा हुआ क़ाफ़िला यसरिब की ज़मीन पर वापस आता है।'' नोअमान की आवाज़ सुन कर हज़रत अब्बास के सब से छोटे बेटे हज़रत उबैद उल्लाह घर से निकल कर बाहर आए (उनकी उम्र लगभग चार वर्ष थी और अपने पिता के साथ कर्बला नहीं

गए थे बल्कि मदीने में ही अपनी दादी हज़रत उम उल बनीन के साथ रह रहे थे।) नन्हे से उबैद उल्लाह ने नोअमान से बढ़ कर पूछा कि ऐ ख़बर देने वाले यह भी बता ''क्या मेरे वालिद(पिता) अब्बास इब्ने अली भी वापस आए हैं।'' नोअमान ने रोते हुए कहा ''नहीं साहबज़ादे वह तो नहरे फ़ुरात पर दोनों हाथ कटवा कर कर शहीद हो गए हैं, अब आप काला लिबास पहनिए और नौहा व मातम कीजिए (शोक मनाइए) आप के वालिद दीने इस्लाम पर क़ुर्बान हो गए और अब आप यतीम (अनाथ) हो गए।'' बशीर के इस जवाब के बाद हज़रत उबैदुल्लाह ने क्या कहा यह तो नहीं मालूम क्योंकि जितनी किताबें मैं ने पढ़ीं उनमें इतनी ही बात लिखी थी। मगर मेरा दिल कहता है कि उनकी मां हज़रत लुबाबा ने बढ़ कर अपने लाल को गले से लगाया होगा और कहा होगा कि ऐ उबैदुल्लाह तुम्हारे चचा हुसैन भी शहीद हुए। ऐ मेरे लाल तेरे भाई अकबर व क़ासिम, औन ओ मोहम्मद यहां तक के अली असग़र भी शहीद हो गए। ऐ बेटे तुम्हारी बहन सकीना भी क़ैदख़ाने में हमेशा हमेशा के लिए सो गई। बेटे यह देख अपनी मां के ज़ख़्मी बाज़ू जिसमें रस्सी बान्ध कर उसे शहरों शहरों फिराया गया। ऐ बेटे अपनी फुफियों की ज़ख़्मी गर्दनों के देख जिनमें रसन बान्धी गई। ऐ बेटे अपने भाई इमाम ज़ैनुल आबदीन के हाथों और पैरों के छालों को देख जिनमें ज़ंजीरें डाल गईं। ऐ बेटे अपने भाई के गले मत लगना क्योंकि उसमें लोहे का तौक़ डाले जाने की वजह से गहरे ज़ख़्म पड़ गए हैं। ऐ बेटे तू अपने बाप की शहादत पर सब्र कर क्योंकि तेरे वालिद ने वफ़ादारी की ऐसी दास्तान लिखी है जिसको ज़माना हमेशा याद करता रहेगा। तुझे आंसू बहाना ही हैं तो फ़ातिमा के उस लाल पर आंसू बहा जिस के मक़सद को पूरा करने के लिए तेरे बहादुर बाप ने अपनी और अपनी औलादों की जान फ़िदा कर के सजदा-ए-शुक्र अदा किया।''

मदीने में मजलिसे हुसैन:- इमाम हुसैन की याद में वैसे तो रोज़ाना ही अहले हरम सीरिया के अन्धेरे क़ैद ख़ाने में मातम करते और आंसू बहाते थे लेकिन पहली मजलिस (शोक सभा) दमिश्क़ के एक मकान में उस समय हुई जब यज़ीद ने इमाम हुसैन के परिवार वालों की रिहाई

के आदेश दिए थे लेकिन मदीने पहुंचने के बाद कर्बला के शहीदों की याद में पहली मजलिस का अयोजन हज़रत उम उल बनीन के घर पर हुआ। दूसरी मजलिस इमाम हुसैन की बीमार बेटी फ़ातिमा सुग़रा के घर पर तीसरी मजलिसे अज़ा इमाम हसन के मकान पर और चौथी शोक सभा पैग़म्बर हज़रत मोहम्मद के रौज़े पर हुई। यह सिलसिला लगातार कई दिन तक चलता रहा और इस बीच अहले बैत के घरों में रौशनी के लिए चिराग़ तो दूर की बात खाना पकाने के लिए आग भी रौशन नहीं की गई। हज़रत अब्बास की मां रोज़ शाम को अपने पोते उबैद उल्लाह को ले कर जन्नत उल बक़ीअ (मदीने का मशहूर और पवित्र क़ब्रिस्तान जहां इमाम हुसैन की मां हज़रत फ़ातिमा, भाई इमाम हसन व परिवार के कई अन्य सदस्य दफ़न हैं) में जा कर इस क़दर दुख भरे अन्दाज़ में रोती थीं कि सारे मदीने की औरतें वहां एकत्रित हो जातीं और उनके साथ आंसू बहातीं थी। हज़रत उम उल बनीन के एक दर्द भरे नौहे (शोक पूर्ण काव्य) का भावार्थ निम्न है।

सुना है हाथ तुम्हारे हुए क़लम अब्बास
मगर न गिरने दिया दीन का अलम अब्बास
तुम्हारे सामने ठहरे न ज़ुल्म के बानी
अली की तरह लड़े तुम हर एक क़दम अब्बास

बग़ैर तेग़ लड़ा मेरा शेर लाखों से
सुना है ख़ून की बरसात हो गई रन में
अमीरे तशना लबी बन के तू पलट आया
सुना है प्यास को भी मात हो गई रन में

सुना है धोके से मारा तुम्हें दरिन्दो ने
तुम्हारे सिर पे लगा गुर्ज़े आहनी बेटा
लबे फ़ुरात मेरे चारों शेर सोते हैं
है गोद ख़ाली मेरी अब नहीं कोई बेटा

ऐ लोगो तुम मुझे उम उल बनीन मत कहना
तुम्हारे लब पे न हरगिज़ यह मेरा नाम आए
हुसैनियत की हिफ़ाज़त के ज़िम्मेदार थे वह
तो चारों बेटे मेरे कर्बला मे काम आए

इमाम हुसैन की शहादत का ग़म इतना गहरा था कि अहले बैत हर वक़्त बस रोते रहते थे। इमाम ज़ैनुल आबदीन, हज़रत ज़ैनब, हज़रत उम्मे कुलसूम, हज़रत रबाब (हज़रत अली असग़र की मां) हज़रत लैला (हज़रत अली अकबर की मां) और हज़रत उम उल बनीन व उनकी बहू हज़रत लुबाबा ने ज़िन्दगी भर कोई ख़ुशी नहीं मनाई। ईद भी आती तो बस नमाज़ पढ़ने की सुन्नत अदा होती।

शहादते हुसैन के बाद ईदः- मैंने मौलान कल्बे जवाद साहब से अक्सर मजलिसों में सुना है कि कर्बला की दुखद घटना के बाद अहले बैत ईद का जश्न नहीं मनाते थे बल्कि हर ईद के मौक़े पर सब लोग किसी रिश्तेदार के घर पर जमा होते थे और कर्बला के शहीदों को याद करते थे। एक बार ईद आई तो हज़रत ज़ैनब ने सब से कहा कि इस बार हम लोग हज़रत उम उल बनीन के घर पर चलेंगे। सब औरतें हज़रत अब्बास के घर पहुंचीं तो हज़रत उम उल बनीन ने सब को सम्मान के साथ बिठाया। फिर बोलीं कि यह मेरी ख़ुशनसीबी है कि अली की बेटियां मेरे घर में आई हैं लेकिन क्या करुं आज घर में कुछ ख़ाने के लिए नहीं है जो सब की ख़ातिरदारी करूं सिर्फ़ पानी है वही पेश कर सकती हूं। हज़रत ज़ैनब ने कहा कि पानी ही काफ़ी है। यह सुन कर हज़रत उम उल बनीन ने हज़रत अब्बास के बेटे हज़रत उबैद उल्लाह के गले में एक छोटी सी मश्क डाली और कहा ''ऐ अब्बास के लाल जाओ कर्बला के प्यासों को पानी पिलाओ।'' यह मन्ज़र देख कर अहले बैत ने 'वाए अब्बासा वाए अब्बासा' कह कह कर रोना शुरू कर दिया और सारे घर में कोहराम मच गया।

क़ातिलान-ए-हुसैन का अन्जामः- उस ज़माने में संचार माध्यमों के न होने के कारण इमाम हुसैन की निर्मम हत्या की ख़बर लोगों तक काफ़ी देर से पहुंची फिर भी जैसे जैसे लोगों तक यज़ीद के इस घोर

अपराध की ख़बर पहुंची लोग ख़ूने हुसैन का बदला लेने के लिए उत्सुक हो गए। कर्बला की घटना के बाद सारे मुस्लिम जगत में असन्तोष फैल चुका था हर तरफ़ से क्रान्ति की चिन्गारियां फूट रहीं थीं। यज़ीद को एक दिन भी चैन से सोना नसीब नहीं हुआ और कुछ ही दिन में मक्का मदीना और कूफ़ा जैसे अहम शहर उसके हाथ से निकल गए। इमाम हुसैन के दो चाहने वालों हज़रत मुख़्तार बिन उबैदा सक़फ़ी और हज़रत मालिक अश्तर के बेटे हज़रत इब्राहीम बिन मालिके अश्तर ने केवल चार साल के अन्दर ही फ़ौजे यज़ीद के सैनिकों उन सैनिकों को चुन चुन कर मौत के घाट उतार दिया जो क़त्ले इमाम हुसैन में शामिल थे। ख़ुद यज़ीद भी गुमनामी की मौत मरा। वह दर्दे क़ूलिंज नाम की ऐसी बीमारी का शिकार हुआ जो आंतों के कैंसर का एक रूप थी। मौलाना राशिद उल ख़ैरी लिखते हैं ''मरते समय यज़ीद भी पानी की एक एक बून्द के लिए तरसा क्योंकि जब वह पानी पीता था तो दर्द के मारे तड़पने लगता था।''

कुछ कथाओं में मिलता है कि यज़ीद शिकार करने के लिए जंगल में गया था तो वहां उसे जंगली जानवरों ने फाड़ खाया। लेकिन ऐसा प्रतीत होता है कि उस के मरने की ख़बर को उसके क़बीले वालों ने (दुश्मनों से छुपाने के लिए) यह बात मशहूर कर दी कि यज़ीद जंगल में शिकार करने गया तो वहां से लौटा नही। उस समय यज़ीद से लोगों को इतनी दुश्मनी थी कि अगर उस की क़ब्र का पता चल जाता तो लोग क़ब्र खोद कर उसकी लाश निकाल लेते। इसी लिए उसके मरने की ख़बर को छुपया गया। कुछ ही वर्षो बाद जब यज़ीद के वंश बनी उमय्या का सर्वनाश हुआ तो बनी अब्बास नामी क़बीले के लोगों ने यज़ीद की क़ब्र ढूंढ कर उसमें से उसकी लाश निकाली और उसे जला दिया। एक शायर क्या ख़ूब कहा है

यज़ीद डूब गया शाम के अन्धेरे में
हुसैन आज भी ज़िन्दा हैं हर सवेरे में

(सीरिया की राजधानी दमिश्क़ में कभी यज़ीद तख़्ते ख़िलाफ़त पर बैठा था यहीं उस ने हज़रत अब्बास की बहन हज़रत ज़ैनब और हज़रत उम्मे

कुल्सूम समेत अन्य पवित्र महिलाओं को अपमान जनक तरीक़े से क़ैद करके बुलाया था लेकिन अल्लाह की मेहरबानी देखिए कि आज उसी शहर में हज़रत ज़ैनब की क़ब्र है जहां लाखों लोग श्रद्धा सुमन अर्पित करते हैं और दमिश्क़ को लोग ज़ैनबिया शहर के नाम से पुकारते हैं।)

यज़ीदियत को मिटाया है इतनी शान के साथ
रहेगा हश्र तलक शहर-ए-शाम ज़ैनब का

बाब-उल-हवाएजः- हम ने किताब के पांचवें पृष्ठ पर हज़रत अब्बास के जो लक़ब लिखे हैं उनमें एक लक़ब बाब उल हवाज भी है। इस शब्द का अर्थ होता है मुरादें (मनोकामना) पूरी करने वाला द्वार। हज़रत अब्बास को इस लक़ब (उपाधि) से उनके चाहने वाले याद करते हैं क्योंकि अल्लाह तक अपनी जायज़ मुरादें (मनोकामनाएं) पहुंचाने के लिए लोग उन के द्वार को माध्यम बनाते हैं। उनके वास्ते से दुआ मांगने से अल्लाह तआला ख़ुश होता है क्योंकि उन्होंने अल्लाह की राह में ऐसी क़ुर्बानियां दी हैं जिनका मुक़ाबला रहती दुनिया तक नहीं हो सकता।

इमाम हुसैन से मोहब्बत करने वालों में यह आम मान्यता है कि मुसीबत के वक़्त में हज़रत अब्बास आज भी इमाम हुसैन के चाहने वालों की मदद करते हैं। हज़रत अब्बास की ज़िन्दगी पर लिखी गई किताबों में ऐसी अनगिनत करामतों (चमत्कारों) का ज़िक्र है जिसमें उन्होंने कड़ी से कड़ी मुसीबत में अपने चाहने वालों की मदद कर के उन्हें मुसीबत से बचाया है या मुश्किल मसायल (उलझनों) को एक ही पल में हल कर के उनकी मदद की है।

लेकिन मैं यहां एक बात साफ़ कर दूं कि हज़रत अब्बास के चाहने वालों की मोहब्बत मन्नतों या मुरादों के पूरा होने की बुनियाद पर (आधारित) नहीं हैं बल्कि हज़रत अब्बास के चाहने वाले उनसे बेलौस मोहब्बत करते हैं और उनकी राह में अपना सब कुछ लुटा देने का हौसला रखते हैं। हमारा अक़ीदा है कि हम पर चाहे जितनी परेशानियां पड़ें हम अपने मौला की मोहब्बत से दस्तबरदार (अलग) नहीं हो सकते। हमारी मुरादें पूरी हों या न हों हम किसी और के दर पर अपना

सिर झुकाने के लिए कभी नहीं जा सकते। हम हज़रत अब्बास या अहले बैत के दूसरे अफ़राद से दुनिया की राहतें, ऐश और आराम नहीं मांगते बल्कि आख़िरत मे अहले बैत के साथ वाबस्ता रहने की दुआ करते है।

हज़रत अब्बास की नज़्र:- हज़रत अब्बास की नज़्र दो प्रकार की होती है एक तो वह जो किसी मन्नत या मुराद के पूरा होने पर किसी दिन भी अदा की जाए। इराक़ में इस प्रकार की नज़्र के लिए ख़ास तरीक़ा अपनाया जाता है। लोग अपनी मुराद पूरी होने पर बकरे की क़ुर्बानी कर के उसका गोश्त ग़रीबों में बांटते हैं। जबकि भारत और पाकिस्तान में आम तौर पर लोग दरगाहों, कर्बलाओं और इमाम बाड़ों में अलम चढ़ा कर मुराद पूरी करते हैं।

हमारी नानी कर्बला की रहने वाली थी इस लिए वह हम लोगों से बकरे की क़ुर्बानी करने की नज़्र मानने के लिए कहती थीं। इस नज़्र का जीता जागता चमत्कार ख़ुद मेरे साथ हो चुका है। एक बार एक बड़े राजनीतिक नेता ने मेरा ट्रांसफ़र जगदलपूर करवा दिया। सरकारी नौकरी में ट्रान्सफ़र आम सी बात है लेकिन जिस अन्दाज़ में यह तबादला किया गया उसके पीछे मेरे परिवार से चल रही राजनीतिक दुश्मनी की बू आ रही थी। इस लिए मैं ने अदालत में मुक़दमा कर दिया। लोगों ने कहा कि तुम्हारे हक़ में फ़ैसला होना मुम्किन नहीं है क्योंकि दफ़्तर से एक बार Relieve हो जाने के बाद अदालत से Stay मिलता नहीं है। फिर भी मैंने अदालत में जाने का फ़ैसला किया और नज़्र मानी कि अगर मुक़दमे में फ़ैसला मेरे हक़ में हुआ तो मैं हज़रत अब्बास की नज़्र दिलवाऊंगा। अल्लाह ने बाब उल हवायज के वास्ते से मांगी गई यह दुआ इस तरह क़ुबूल की कि मेरे मुक़दमें की जिस रोज़ पहली सुनवाई हुई उसी दिन मेरे हक़ में फ़ैसला हो गया और जज ने ट्रान्सफ़र रद्द करने के साथ साथ लिखा "Dispose of at the time of admission" यानी मुक़दमा दाख़िल होने के दिन ही निर्णय। भारत का हर नागरिक जानता है कि कोर्ट, कचहरी में चक्कर लगाते लगाते लोगों के पैर टूट जाते हैं मगर न जाने मेरी कौन सी बात

हज़रत अब्बास को पसन्द आ गई कि मैं एक ही दिन में कामयाब और सुर्ख़रू हो गया और मेरे दुश्मनों को शिकस्ते फ़ाश हुई।

हज़रत अब्बास की याद में आयोजित होने वाली दूसरी नज़्र वह है जो आम तौर से मोहर्रम की आठ तारीख़ को दुनिया भर में उनके चाहने वाले दिलवाते हैं। इस नज़्र में उनके नाम का दस्तरख़्वान (भोज) किया जाता है। कर्बला के बावफ़ा अलमदार की याद में (आयोजित) होने वाली इस नज़्र में विशेष कर ग़रीबो, यतीमों, मोहताजों और मोमनीन के लिए खाने पीने का इन्तिज़ाम किया जाता है।

अलम मज़लूमियत का प्रतीकः- मोहरर्म के दौरान दुनिया के अनेक देशों में अलम के जुलूस निकाले जाते हैं। इन जुलूसों में शामिल लोग हज़रत अब्बास की याद में नौहे (शोक पूर्ण काव्य) पढ़ते है और कर्बला के शहीदों की याद में मातम करते हैं और इस बात का आहवान करते हैं कि यह अलम मानवता और अहिंसा का प्रतीक चिन्ह है। भारत में ताज़िए के जो जुलूस निकाले जाते है उनके साथ में अलम भी ज़रूर होता है। यह दोनों चीज़े इमाम हुसैन और हज़रत अब्बास के स्नेह और प्रेम की याद भी दिलातीं हैं। (अलम के अर्थ इत्यादी के बारे में हम काफ़ी विस्तार से बात कर चुके।)

ताज़िया और अलम कोई प्रतिमा नहीं है बल्कि ताज़िया इमाम हुसैन की क़ब्र पर बने हुए उस भवन की नक़्ल है जो कई शताब्दियों पूर्व बनाया गया था। यद्यपि अब इमाम हुसैन की क़ब्र एक अलग प्रकार का सुन्दर सा भवन बना है लेकिन ताज़ियों में परम्परागत रूप से पुराने भवन की ही नक़्ल की जाती है। ताज़िए का अर्थ होता है दिल को तसल्ली देना। कर्बला वालों की याद में उठने वाले इन ताज़ियों के साथ मातम करने वाले लोग भी होते हैं और युद्ध में प्रयोग होने वाले बाजे भी होते हैं जो तलवारों पर ख़ून की फ़तह का ऐलान करते हुए चलते हैं।

है ताज़िए के जुलूसों में दफ़ का यह ऐलान
यज़ीद वाले हर एक मोर्चे पे हारे हैं

अन्तिम शब्द

आज दुनिया में हर तरफ़ इन्सानों पर ज़ुल्म हो रहा है। औरतों व बच्चों पर अत्याचार हो रहे हैं। मानवीय मूल्यों की धज्जियां उड़ाई जा रही हैं। सहनशीलता, धैर्य, और संयम जैसे शब्दो का अकाल पड़ा हुआ है। बलिदान और क़ुर्बानी जैसे लफ़ज़ सिर्फ़ किताबों तक सीमित हो कर रह गए है। ताक़त के बल पर दूसरों की ज़मीनों पर क़ब्ज़ा, कमज़ोरों के अधिकारों का हनन, दौलत की ख़ातिर बेगुनाहों का क़त्ल, छोटे छोटे बच्चों के साथ मार पीट, औरतों के साथ बदसलूकी, बुज़र्गों से बदतमीज़ी, मां-बाप की बात न मानने का चलन, छोटी छोटी बातों पर झगड़ा, मकान-दुकान के लिए भाई भाई के बीच अदावत आम सी बात हो गए हैं। एक तरफ़ सामाजिक मूल्यों में रोज़ बरोज़ गिरावट आती जा रही है तो दूसरी ओर धर्म को भी राजनीति का अखाड़ा बना दिया गया है। इस संसार में सभी धर्म अल्लाह ने इस लिए भेजे थे कि धर्म के ज़रिए मानव समाज का कल्याण हो लेकिन आज धर्म के नाम पर दहशत का नन्गा नाच हो रहा है। अपने धर्म के लिए क़ुर्बानी देने के बजाए लोग दूसरे धर्म के मानने वालों की जान लेने को ही अपना मज़हब बनाते जा रहे हैं।

ऐसे माहौल में कर्बला के शहीदों का पैग़ाम दुनिया भर में फैलाए जाने की बहुत ज़रूरत है लेकिन यह पैग़ाम बातों से नहीं बल्कि उच्च चरित्र के ज़रिये फैलेगा। आइए हम सब मिल कर अपने किरदार को कर्बला वालों के संदेश की रौशनी में निखारें और भटकी हुई दुनिया का उचित मार्ग दर्शन करें। इसी के साथ सारी दुनिया में यह सन्देश भी फैलाएँ कि किसी पर ज़ुल्म करना, औरतों, बच्चों, बूढ़ों और निहत्थे लोगों पर हमला करना, ज़ालिमों से हाथ मिलाना और ज़ुल्म पर ख़ामोश रहना इस्लाम के मौलिक सिद्धांतों के विरुद्ध है।

हज़रत अब्बास के हाथ चौदह सौ वर्ष पूर्व काट दिए गए लेकिन उनका अलम और मश्क की शबीह (प्रतिरूप) आज भी करोड़ों घरों में मौजूद है और जो लोग यह अलम उठाते है उनकी ज़िम्मेदारी है कि वह देखें

कि दुनिया में कहीं किसी पर ज़ुल्म न होने पाए। इस वर्ष हम अपने आक़ा और मौला हज़रत अब्बास के जन्म के चौदह सौ साल पूरे होने का जश्न मना रहे हैं तो इस वर्ष हमारी कोशिश यह होना चाहिए कि हम अपने भाइयों से ख़ूब स्नेह करें, बहनों को सुरक्षा प्रदान करें, भतीजों और भांजों से वैसा ही लगाओ पैदा करें जैसा कि कर्बला में हज़रत अब्बास ने हज़रत अली अकबर, हज़रत क़ासिम, हज़रत औन-व-मोहम्मद व हज़रत सकीना के प्रति दिखाया।

अल्लाह की इबादत और इताअत, अहले बैत से मोहब्बत, सब्र, क़ुर्बानी, बख़्श देना (क्षमादान) और मज़लूमियत ही हमारी क़ौम की दौलत है। लोगों को अच्छी बातों की तरफ़ बुलाना और बुरी बातों से रोकना यानी अम्र बिल मारूफ़ और नही अन अल मुन्कर का प्रचार प्रसार हमारी ज़िम्मेदारी है। इस लिए आम इन्सानों की बुराई से रोकें और अच्छाई की तरफ़ बुलाएं। रोज़ा, नमाज़, खुम्स ओ ज़कात पाबन्दी से अदा करें। अपने नफ़्स से हर रोज़ जिहाद करें। रसूल और आले रसूल की पैरवी करने की कोशिश करें उनकी याद में बड़े पैमाने पर महफ़िलें और मजलिसें आयोजित करें। इन महफ़िलों और मजलिसों में सभी वर्गों के लोगों को बुलाएं ताकि उन के दिल में भी अहले बैत की मोहब्बत पैदा हो और ज़्यादा से ज़्यादा इन्सानों का कल्याण हो।

हमारा मज़हब दुआओं का मज़हब है। हम लोगों पर यह ज़िम्मेदारी आयद होती है कि हम तमाम इन्सानों की परेशानियां दूर करने के लिए बारगाहे ख़ुदा वन्दी में बाब उल हवायज और मासूमीन के वसीले से दुआ करें। लेकिन यह बात सच है कि कोई भी मज़हब 'मरज़, मुफ़लिसी और मौत' से इन्सानों को बचा नहीं सकता इस लिए किसी को झूठी लालच या फ़रेब दे कर हम अपने धर्म की तरफ़ नहीं बुलाते। हमारे अक़ीदे के हिसाब से मरज़ इन्सानों के गुनाहों को कम करने का ज़रिया है। मुफ़लिसी और ग़रीबी अल्लाह की तरफ़ से अपने महबूब बन्दों का इम्तेहान है और मौत एक ऐसी मन्ज़िल है जहां अच्छे चरित्र वालों के लिए सन्तोष ही सन्तोष है। जबकि ज़ालिमों और चरित्र हीनों के लिए मौत के बाद अज़ाब ही अज़ाब है।